आनन्द की रश्मियां

साध्वी संघप्रभा

आनन्द की रश्मियां

(स्व. साध्वी आनन्दकुमारीजी की प्रेरिक जीवन गाथा)

साध्वी संघप्रभा

जैन विश्व भारती प्रकाशन

प्रकाशक :
जैन विश्व भारती
लाडनूं-३४१-३०६ (राज.)

© जैन विश्व भारती, लाडनूं

सौजन्य : बिरधीचंद संजयकुमार दुगड़
(सरदारशहर-हैदराबाद)
मो. ९८८५१३३०७३

प्रथम संस्करण : २००९

मूल्य : ५०/- (पचास रुपया मात्र)

टाईप सेटिंग : सर्वोत्तम प्रिण्ट एण्ड आर्ट

मुद्रक : श्री वर्द्धमान प्रेस, नवीन शहादरा, नई दिल्ली

सा

द

र

स

म

र्प

ण

परमाराध्य

गणाधिपति पूज्य गुरुदेव श्री तुलसी

एवं

प्रेक्षा प्रणेता

परम श्रद्धेय आचार्यश्री महाप्रज्ञ

के

पावन

च

र

णों

में

विनयावनत

साध्वी संघप्रभा

AmerdMZ

O`na AmMm` _hmàk

0 AJñV 2008

पुरोवाक्

जीवन एक प्रवाह है। उसे शब्दों का तटबंध देना अत्यन्त दुरूह कार्य है। मेरी श्लथ लेखनी ने उस दुरूह कार्य को सम्पादित करने का साहस किया है। इस साहस को जगाने में परमाराध्य गणाधिपति पूज्य गुरुदेव श्री तुलसी, परम श्रद्धास्पद आचार्य श्री महाप्रज्ञजी एवं श्रद्धेया महाश्रमणी साध्वीप्रमुखा कनकप्रभाजी के मंगल आशीर्वाद का योगदान रहा है। सुपरिणाम इस कृति में अभिव्यंजित हुआ है।

साध्वी आनन्दकुमारीजी तेरापंथ धर्मसंघ की वरिष्ठ अग्रगण्य साध्वियों में एक थी। आचार्यश्री तुलसी के शब्दों में वह शासन-भक्त एवं संघनिष्ठ साध्वी थी। उन्होंने ११ वर्ष की अल्पायु में अपनी मातुश्री साध्वी सुजाणांजी के साथ सुजानगढ़ में अष्टमाचार्य महामना कालूगणी के कर कमलों से दीक्षा ग्रहण कर पांचवीं साध्वीप्रमुखा कानकंवरजी (श्रीडूंगरगढ़) के निर्देशन में अपनी संयम यात्रा प्रारंभ की। दो वर्ष तक गुरुकुलवास में रहने का सौभाग्य मिला। २६ वर्ष तक साध्वी सजनांजी (बीकानेर) की सशक्त सहयोगिनी के रूप में स्वयं के निर्माण के साथ संघ प्रभावना का कार्य किया।

वि. सं. २०१७ आमेट मर्यादा महोत्सव पर आचार्यश्री तुलसी ने आपकी योग्यताओं का अंकन करते हुए ३७ वर्ष की युवावस्था में आपको अग्रगण्य पद पर नियुक्त किया। २८ वर्ष तक अग्रगण्य का सफल दायित्व निभाते हुए हजारों कि. मी. की यात्रा की, गांव-गांव नगर-नगर में अणुव्रत, प्रेक्षाध्यान, जैनधर्म एवं तेरापंथ का संदेश फैलाया। ५५ वर्ष तक सुदीर्घ संयम पर्याय का पालन किया। जीवन के संध्याकाल में तीन वर्ष तक पक्षाघात जैसी असाध्य बीमारी को समता से सहते हुए ६६ वर्ष ८ दिन की आयु में भारत की प्रसिद्ध दर्शनीय नगरी एवं तेरापंथ की ऐतिहासिक स्थली नाथद्वारा में आपने समाधि मृत्यु का वरण किया।

आप मेरे संसारपक्षीय दादाजी श्री सोहनलालजी डागा के मामे की बेटी बहन थी। दादी सा महाराज होने के नाते गृहस्थ जीवन में दो-तीन बार आपकी सेवा में जाने का मौका जरूर मिला किन्तु आपकी विशेष सन्निधि का अवसर

नहीं मिल पाया। गुरुदेव ने मुझे वि. सं. २०३८ सरदारशहर मर्यादा महोत्सव पर साध्वी रायकुमारीजी (राजलदेसर) के साथ पूर्वांचल यात्रा में भेज दिया। पंचवर्षीय पूर्वांचल यात्रा से लौटते वक्त उदयपुर मर्यादा महोत्सव से पूर्व नाथद्वारा में साध्वी आनन्दकुमारीजी के दर्शन हुए। साध्वी रायकुमारीजी ने दो दिन वहां रुक कर उदयपुर में गुरुदेव के दर्शन किए। गुरुदेव ने उस वर्ष आपका लाम्बोड़ी चातुर्मास फरमाया। उसके बाद वि. सं. २०४४ में केलवा चातुर्मास हुआ।

वि. सं. २०४५ में गुरुदेव ने साध्वी रायकुमारीजी का चातुर्मास उदयपुर फरमाया। केलवा से उदयपुर जाते समय नाथद्वारा जाना हुआ। उस समय साध्वी आनन्दकुमारीजी ने साध्वी रायकुमारीजी से कहाह्नअगला वर्ष (वि. सं. २०४६) योगक्षेम वर्ष के रूप में घोषित है अतः संभव है कि आपको भी इस अवसर पर गुरुदेव लाडनूं बुला लें लेकिन मेरी तो वहां पहुंचने जैसी स्थिति नहीं है फिर पता नहीं कब आपसे मिलना हो? अतः इस बार तो आपको बहन की मांग स्वीकार कर कम से कम एक पखवाड़ा देना होगा। साध्वी आनन्दकुमारीजी के अनुरोध पर साध्वी रायकुमारीजी का वहां दस दिन प्रवास हुआ। मैं मानती हूं कि वह प्रवास ही इस कृति के निर्माण की पृष्ठभूमि बन गया।

उन दिनों आप प्रायः साध्वी सुजाणांजी एवं स्वयं से संबंधित घटनाएं सुनाया करती थी। सुनाने का लहजा इतना रसात्मक था कि न केवल सुनने का ही बल्कि लिखने का भी आकर्षण जगा। इसी क्रम में एक दिन साध्वीश्री ने मुझे लक्षित कर कहाह्ननानकी! मेरी प्रबल इच्छा थी कि मैं संसारपक्षीय मां साध्वी सुजाणांजी के बारे में कुछ लिखूं किन्तु अब मेरी लिखने की स्थिति नहीं रही। तुम अगर इस कार्य को कर सको तो मेरी भावना सफल हो जाए। मैंने साध्वीश्री की प्रेरणा को तहत् कहकर स्वीकार किया और दूसरे ही दिन प्रातःकाल साध्वी सुजाणांजी का जीवन-वृत्त लिखना प्रारंभ कर दिया। उदयपुर चातुर्मास के उत्तरार्ध तक मैंने अधिकांश भाग लिख लिया। पावस सम्पन्न कर साध्वी रायकुमारीजी पुनः मार्गशीर्ष कृष्णा दशमी को नाथद्वारा पहुंचे तब मैंने साध्वी आनन्दकुमारीजी को साध्वी सुजाणांजी का जीवन-वृत्त आद्योपान्त पढ़कर सुनाया। उन्होंने प्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहाह्ननानकी! तुमने अधूरा काम पूरा कर दिया। साध्वी आनन्दकुमारीजी के मुख से ये उत्साहवर्धक शब्द सुन मुझे अपने श्रम पर गर्व तो नहीं, किन्तु कुछ तोष की हल्की सी अनुभूति अवश्य हुई। उस समय आपके पास दो दिन रुकना हुआ।

मार्गशीर्ष कृष्णा बारस को प्रातः जब हमने पूज्य गुरुदेव के दर्शनार्थ छापर की ओर प्रस्थान किया तब गुरु चरणों में वन्दना-सुखपृच्छा का निवेदन करवाते हुए उनकी आंखें छलछला गई। प्रस्थान से पूर्व उन्होंने आभार-ज्ञापन के साथ वापस जल्दी मिलने का अनुरोध करते हुए साध्वी रायकुमारीजी से मंगल पाठ सुना। फिर साध्वी कानकुमारीजी (राजलदेसर) के अनुनय पर हम सब साध्वियों को मंगल पाठ सुनाकर अनेक शुभाशीष प्रदान करते हुए विदा दी। वे पल जब-जब स्मृति पटल पर उभरते हैं तब-तब उनकी सौम्य मुख मुद्रा आंखों के सामने दिखाई देने लगती है। उस समय उनकी शारीरिक स्थिति देखते हुए यह अहसास भी नहीं हो रहा था कि साध्वी आनन्दकुमारीजी के दर्शन और मिलन के ये अंतिम क्षण होंगे किन्तु भविष्य की अठखेलियां सदा अज्ञात होती हैं। नाथद्वारा से विहार करते-करते हम मांझी गांव (चान्दारुण से १०-१२ कि.मी. दूर) पहुंचे ही थे कि राजलदेसर से समागत श्रीचंदजी डागा ने साध्वी आनन्दकुमारीजी के स्वर्गवास की सूचना दी। अचानक यह संवाद सुन हम स्तब्ध रह गए। मिलन के सिर्फ २४ दिन बाद ही उनके स्वर्गवास का समाचार सुनने को मिलेगा ऐसी कल्पना ही नहीं थी पर, आयुष्य के आगे किसी का वश नहीं चलता।

साध्वी सुजाणांजी के दिवंगत होने के ठीक साढ़े तीन वर्ष बाद ही साध्वी आनन्दकुमारीजी का स्वर्गवास हो गया। मन में चिन्तन उभराह्नक्यों न मां-बेटी की जीवन-गाथा एक ही कृति में समाविष्ट कर दी जाए। मेरा चिन्तन क्रियान्विति की प्रतीक्षा में ही था कि साध्वी उज्ज्वलरेखाजी का संवाद मिला कि राणावास वर्धमान महोत्सव पर पूज्य गुरुदेव के दर्शन किए तब स्वयं महाश्रमणीजी ने फरमाया कि साध्वी आनन्दकुमारीजी का जीवन प्रकाश में आना चाहिए। महाश्रमणी के इस निर्देश की अवगति पाकर मेरा चिन्तन संकल्प में बदला और संकल्प क्रियान्विति की दिशा में आगे बढ़ा। यद्यपि लेखन का मुझे विशेष अनुभव नहीं था फिर भी अपनी स्वल्प क्षमतानुसार वि. सं. २०४७ में बीदासर में मैंने दो खण्डों में साध्वी-द्वय का जीवन वृत्त लिखा। साध्वी निर्वाणश्रीजी ने समीक्षात्मक दृष्टि से पूरी फाइल का निरीक्षण किया, विभिन्न स्थलों को परिष्कार एवं परिवर्धन हेतु चिह्नित किया। संकेतित समीक्ष्य बिन्दुओं के आधार पर जीवन वृत्त लिखने और उसकी पाण्डुलिपि तैयार करने में दो साल बीत गए। इस अंतराल में अनेक ठहराव आते रहे फिर भी क्रम चलता रहा।

यदि सन् १९९५ में पक्षाघात के कारण साध्वी रायकुमारीजी का राजनगर

बोरज एवं नाथद्वारा में लम्बा प्रवास नहीं होता तो संभवतः उस वर्ष भी यह कार्य सम्पन्न नहीं हो पाता। इसे भी नियति का योग मानना चाहिएह्नजिस नाथद्वारा में साध्वी आनन्दकुमारीजी का तीन वर्ष तक पक्षाघात के कारण स्थिरवास एवं स्वर्गवास हुआ उसी धरती पर साध्वी रायकुमारीजी का भी पक्षाघात के कारण प्रवास हुआ और वहीं इस कृति की सम्पन्नता हुई। इसका प्रकाशन सन् २००८ में हो रहा है। मैंने इस कृति में साध्वी आनन्दकुमारीजी के जीवन के कतिपय महत्त्वपूर्ण पक्षों को उजागर करने का प्रयत्न किया है। मेरा प्रयत्न किया सार्थक हुआ, इसका निर्णय तो पाठक करेंगे। मैं तो सिर्फ ऐसी महान् आत्मा के बारे में यत् किञ्चित् लिखकर अपने आपमें कृतार्थता का अनुभव कर रही हूं।

प्रस्तुत कृति की सामग्री-संकलन के दो स्रोत रहे हैंह्न१. साध्वी आनन्दकुमारीजी से जो कुछ सुना २. उनकी सहवर्ती साध्वी उज्ज्वलरेखाजी से जितना कुछ ज्ञात हुआ। इन दो स्रोतों से उपलब्ध सामग्री को विषयबद्ध गुंफित कर व्यवस्थित प्रस्तुति देने का प्रयास किया है। प्रस्तुत कृति की निष्पन्नता में स्व. साध्वी रायकुमारीजी का मंगल सान्निध्य, साध्वी कानकुमारीजी व साध्वी मदनश्रीजी का सहयोग मेरे लिए सदैव अविस्मरणीय है। साध्वी जिनप्रभाजी एवं साध्वी निर्वाणश्रीजी ने समुचित मार्गदर्शन प्रदान किया है। इसके अतिरिक्त जिन जिनका इस कार्य में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष श्रम-सहकार रहा है उन सबके प्रति हार्दिक आभार एवं श्रद्धासिक्त प्रणाम।

आनन्द की खोज भारतीय जीवनधारा का सर्वोच्च लक्ष्य है। प्रस्तुत कृति 'आनन्द की रश्मियां' उसी लक्ष्य की प्राप्ति में प्रथम चरण-न्यास है। साध्वी आनन्दकुमारीजी की जीवन-रश्मियां उस अक्षय आनन्द की चिरन्तन ज्योति को बिखेरती हुई जन जन के लिए अध्यात्म का पथ प्रशस्त करेगी, यही मंगलकामना है।

११ नवम्बर २००८ **साध्वी संघप्रभा**
पड़िहारा (राज.)

अनुक्रमणिका

१.	आदर्श-जीवन गाथा	१
२.	श्रामण्य से पूर्व	२
३.	संयम के पथ पर	१३
४.	प्रवास का प्रयोग : एक अकल्पित संयोग	२२
५.	कथा वक्तृत्व विकास की	२६
६.	अनुशासन की कसौटी पर	३३
७.	निर्भीक व्यक्तित्व	३७
८.	चैनपुरा से कीड़ीमाल की भयानक यात्रा	४९
९.	कटार की डकैतीह्नरोमांचक प्रसंग	६५
१०.	अग्रगण्य पद एवं स्वतंत्र विहार	७०
११.	संतुलन प्रतिकूल परिस्थिति में	७४
१२.	विग्रह-शमन के सार्थक प्रयत्न	८८
१३.	नाम परिवर्तन की घटना	९४
१४.	विकास के विविध आयाम	९६
१५.	साधना-क्रम	१०६
१६.	कृपा के क्षण	११०
१७.	गुरु कृपा का प्रसाद	११३
१८.	जीवन-संध्या के तीन वर्ष	११७
१९.	जीवन यात्रा का अंतिम पड़ाव	१२८

साध्वी आनन्दकुमारीजी से संबंधित ज्ञातव्य विवरण

महत्त्वपूर्ण वर्ष एवं तिथियां

जन्मह्नवि. सं. १९७९ मार्गशीर्ष शुक्ला त्रयोदशी

दीक्षाह्नवि. सं. १९९१ कार्तिक कृष्णा नवमी १२वें वर्ष में

अग्रगण्यह्नवि. सं. २०१७ माघ शुक्ला पंचमी ३७वें वर्ष में

स्वर्गवासह्नवि. सं. २०४५ पोष कृष्णा षष्ठी ६७वें वर्ष में

महत्त्वपूर्ण स्थान

मोमासरह्नपितृगृह

राजलदेसरह्ननिहाल

सुजानगढ़ह्नदीक्षा स्थल

आमेटह्नअग्रगण्य नियुक्ति स्थल

नाथद्वाराह्नस्वर्गवास स्थल

जीवन-क्रम

कुल उम्रह्न६६ वर्ष आठ दिन

गृहस्थ जीवनह्न११ वर्ष

दीक्षा पर्यायह्न५५ वर्ष

गुरुकुलवासह्न१ वर्ष

साध्वी सजनांजी के साथह्न२६ वर्ष

अग्रगण्यह्न२८ वर्ष

जीवन के महत्त्वपूर्ण अवसर

१. वि. सं. २०१८ह्नद्विशताब्दी समारोह में आचार्यश्री तुलसी की सन्निधि में राजनगर चतुर्मास।

२. वि. सं. २०४२ह्नगंगापुर में अमृत महोत्सव के प्रथम चरण में उपस्थिति।

३. वि. सं. २०४२ह्नअमृत महोत्सव के द्वितीय चरण में आचार्यश्री तुलसी की सन्निधि में साथ आमेट चातुर्मास।

४. वि. सं. २०३३ह्नछापर में कालू जन्म शताब्दी समारोह में उपस्थिति।

५. वि. सं. २०३५ह्नराजलदेसर में युवाचार्य महाप्रज्ञ मनोनयन समारोह में उपस्थिति।

जिनका शासन काल देखा

१. आचार्यश्री कालूगणी
२. आचार्यश्री तुलसी
३. युवाचार्यश्री महाप्रज्ञ

१. साध्वीप्रमुखा कानकंवरजी
२. साध्वीप्रमुखा झमकूजी
३. साध्वीप्रमुखा लाडांजी
४. साध्वीप्रमुखा कनकप्रभाजी

ह्नः १ :ह्न
आदर्श-जीवन गाथा

संसार एक प्रवाह है। इसमें अनन्त प्राणी आते हैं और चले जाते हैं। 'जन्म नियति की लम्बी शृंखला है और मृत्यु व्यक्ति के पुरुषार्थ और जीवन्त कर्तृत्व का प्रतीक है'ह्नमहान् दार्शनिक आचार्यश्री महाप्रज्ञ के इन शब्दों में एक सार्वभौम सत्य का प्रतिपादन है। जन्म और मृत्यु की अविच्छिन्न प्रलंब परम्परा के मध्य जो कुछ घटित होता है उसी का नाम जीवन है। जन्म के साथ मृत्यु प्रारंभ हो जाती है पर जीवन सदैव अमरता की उद्घोषणा करता है, क्योंकि जीवन व्यक्ति के अप्रतिम पुरुषार्थों की लम्बी कहानी है।

जीवन को पाना सहज बात है पर उसे कलात्मक ढंग से जीना सर्वथा भिन्न बात है। अनन्त अनन्त प्राणी जीवन को प्राप्त करते हैं और सांसों को पूरी करके काल कवलित हो जाते हैं। आने और जाने के इस अनिवार्य नियम को टाला नहीं जा सकता किन्तु जो लोग जीवन जीने की कला को जानते हैं वे मरकर भी अमर बन कर जाते हैं। जीवन को जानने का अर्थ है समय को जानना। जिसने समय के मूल्य को समझा, वह महान बन गया।

भगवान महावीर ने कहाह्न'खणं जाणाहि पंडिए' अर्थात् जो क्षण का मूल्य जानता है वही वस्तुतः पण्डित है। समय की महत्ता को समझने वाला जीवन को सार्थक ही नहीं, दूसरों के लिए भी अनुकरणीय बना देता है। जो समय की गरिमा को आंकते हैं, समय स्वयं उन्हें गरिमा प्रदान करता है। समय का मूल्यांकन करने वाले व्यक्तियों की शृंखला में एक नाम है 'साध्वी आनन्द-कुमारीजी' का, जिनका जीवन साधना की उज्ज्वल आभा से उद्भाषित था।

ः २ ः
श्रामण्य से पूर्व

जन्म एवं नामकरण

साध्वी आनन्दकुमारीजी का जन्म राजस्थान प्रान्त के अंतर्गत चूरू जनपद के एक छोटे से गांव 'मोमासर' के सम्पन्न नाहटा परिवार में हुआ। आप अपने पिता की इकलौती कुल-ज्योति थी। आपके पिता का नाम श्रीमान् खूबचंदजी नाहटा एवं माता की नाम 'सुजाणांजी' था। आपका जन्म विक्रम संवत् १९७९ मार्गशीर्ष शुक्ला तेरस को राजलदेसर के सेठ प्रतापमलजी बैद के गृहनिवास में हुआ। यहीं आपका ननिहाल था। नाहटा एवं बैद परिवार में कई वर्षों बाद शिशु का जन्म हुआ इसलिए दोनों परिवारों ने एक नये आनन्द और नई खुशी की अनुभूति की। उस आनन्द की स्थाई स्मृति स्वरूप नवजात बाला का नाम 'आनन्दी' रखा गया।

सुखद शैशव-काल

सुन्दर, सुरूप और सुगठित देह होने के कारण वह ईद के चांद की भांति मनोरम लगने लगी। अतः सभी पारिवारिक जन प्यार से बालिका आनन्दी को इन्दु कहकर पुकारने लगे। शनैः शनैः वह नाम बोलचाल की भाषा में इन्दिरा के रूप में प्रचलित हो गया। माता-पिता के सुखद साये में इन्दिरा का शैशव काल बीतने लगा। राजस्थानी जनश्रुति हैपहली बेटी बेटे के समान होती है। फिर इन्दु के चेहरे की बनावट एकदम लड़के जैसी ही लगती थी। वह अक्सर लड़के की वेशभूषा पहने बनी ठनी रहती थी। अनजान व्यक्ति के लिए यह पहचानना कठिन हो जाता था कि यह शिशु लड़का है या लड़की। पारिवारिक लोग उसे प्रायः बेटा कहकर ही संबोधित करते थे। चंचल होने के कारण इन्दिरा सबके आकर्षण और मनोविनोद का केन्द्र बन गई। पारिवारिक जनों का इन्दिरा पर अत्यधिक स्नेह था। फिर भी बच्चे की सार संभाल की मूल जिम्मेदारी मां की

होती है। आपकी मातुश्री (साध्वी सुजाणांजी) ने इस दायित्व को सदैव सजगता से निभाया।

व्यापारिक कार्यवश आपके पिता श्री खूबचंदजी सापट ग्राम (आसाम) में रहते थे। यद्यपि उस समय प्रायः पुरुष वर्ग ही प्रदेशों में प्रवास करता था। किन्तु विशेष परिस्थिति वश आपकी मातुश्री सुजाणां जी को भी अपने पति के साथ राजस्थान से असम प्रदेश की ओर प्रस्थान करना पड़ा। यह प्रस्थान निकट भविष्य में घटित होने वाले एक महान् परिवर्तन का सूचक था। उस समय बालिका इन्दिरा की उम्र मात्र दो वर्ष थी।

कुछ वर्षों तक असम आपकी क्रीड़ा भूमि बनी रही। मां-पिता और पुत्री, सिर्फ तीन जनों का छोटा सा परिवार। न कोई चिन्ता न कोई फिक्र, हर पल घर में नई बहार। इन्दिरा के जन्म लेने के बाद खूबचंदजी का व्यापार दिनोंदिन बढ़ता गया। इसलिए खूबचंदजी कई बार खुशी से कहा करते थे कि हमारे घर में यह कोई बहुत पुनवान टाबर आया है, जिसके पुण्य-प्रभाव से हर समस्या स्वतः सुलझ जाती है।

खूबचंदजी जहां रहते थे उस मुहल्ले में अन्य वर्गीय (महेश्वरी आदि) अनेक परिवार रहते थे किन्तु किसी परिवार में छोटा बच्चा नहीं था। इसलिए सभी दुकानदार एवं पड़ौसी भी इन्दिरा को बहुत चाहते थे। इन्दिरा सबके मन बहलाव का माध्यम बन गई। उसकी बाल सुलभ चेष्टाएं सबको बहुत प्रिय लगती। उसका खिलता हुआ चेहरा और तुतलाती मधुर आवाज सबको इतनी प्यारी लगती जैसे अपने घर का ही बालक हो। उम्र ज्यों-ज्यों बढ़ रही थी त्यों-त्यों इन्दिरा का रूप और लावण्य निखर उठा। सब उसे 'इन्द्र का तारा' कहकर पुकारने लगे। धीरे-धीरे इन्दिरा का अपभ्रंश होते-होते इन्द्रा नाम पड़ गया। दीक्षित होने के बाद भी वर्षों तक आप इसी नाम (साध्वी इन्द्रुजी के नाम) से विश्रुत रही।

हाथी पर सैर

खूबचंदजी का इन्द्रा पर विशेष स्नेह भाव था। एक बार उन्होंने अपने नौकर के हाथ में दो आने के पैसे देते हुए कहाह्न'जाओ! बाजार से सब्जी ले आओ।' उस समय नौकर की गोद में इन्द्रा थी। वह उसे लेकर ही बाजार चला गया। बाजार में उसने तीन चार विशालकाय हाथियों को देखा। उन हाथियों पर छोटे-छोटे बालक चढ़े हुए थे। यह मनोहर दृश्य देख इन्द्रा का मन भी हाथी पर चढ़ने के लिए आतुर हो उठा। इन्द्रा ने कहाह्नमैं भी हाथी पर चढ़ूंगी। नौकर ने

महावत को दो आने देते हुए कहाह्नइस बच्ची को तुम हाथी पर चढ़ाकर घुमा दो। महावत ने इन्द्रा को हाथी पर बिठाया और शहर के प्रमुख स्थलों की सैर करवा दी। नौकर को खाली हाथ आया देख खूबचंदजी ने पूछाह्नअभी तक सब्जी क्यों नहीं लाए? नौकर ने कांपते स्वर में कहाह्नबाबूजी! मैं क्या करूं? यह छोटी बेबी मानती ही नहीं। इसने बार-बार हाथी पर चढ़कर घूमने का आग्रह किया। अतः मैंने दो आने में इसे घुमा दिया। खूबचंदजी ने मुस्कुराते लहजे में कहाह्नइसमें डरने की क्या बात है? इन्द्रा जहां कहे वहीं घुमा दिया करो। मालिक से उपालंभ की जगह साधुवाद मिला तो उसका धड़कता कलेजा जम गया। वह खुशी-खुशी इन्द्रा को गोद में लिए फिर बाजार में गया। इन्द्रा ने दूसरी बार भी हाथी पर चढ़ने का आग्रह किया। नौकर ने सोचाह्नजब मालिक की खुली छूट है तो फिर मैं क्यों कंजूसी करूं? उसने निश्चिन्तता के साथ इन्द्रा को फिर हाथी पर चढ़ा दिया। अपने हठ को सहज पूरा होते देख इन्द्रा बहुत खुश थी। तीसरी बार नौकर इन्द्रा को बाजार में साथ नहीं ले गया। तब कहीं वह सब्जी ला सका। खूबचंद जी ने सोचाह्नइन्द्रा की इच्छा कहीं अधूरी न रह जाए इसलिए उन्होंने नौकर को कहकर प्रतिदिन हाथी पर बैठकर घुमाने की व्यवस्था कर दी।

पिता की भविष्यवाणी

हाथी पर आसीन अपनी पुत्री का विकस्वर मुखमण्डल देख खूबचंदजी ने एक दिन धर्मपत्नी से कहाह्नपुराने जमाने में गज की असवारी राजे महाराजे आदि बड़े लोग किया करते थे। क्योंकि हाथी की असवारी सबसे ऊंची होती है। हमारी इस छोटी बिटिया को हाथी पर चढ़ने का इतना शौक है, इसका मतलब है कि यह आगे जाकर कोई बड़ा काम करेगी या किसी ऊंचे ओहदे पर बैठेगी। पिता के मुख से निकले हुए ये सहज शब्द भविष्य में साकार बन गए। इन्द्रा ने दस वर्ष की अल्पायु में दीक्षा लेकर बड़ा काम कर दिखाया। दीक्षा से बढ़कर और क्या बड़ा काम हो सकता है? साधुत्व का ओहदा सबसे ऊंचा होता है। बड़े-बड़े सम्राट् और सत्ताधीश भी साधु के चरणों में शीष झुकाते हैं।

साध्वी आनन्दकुमारीजी जब तक असम में रही तब तक हाथी पर सैर करने का क्रम निरन्तर जारी रहा। खूबचंद जी के असम प्रदेश से थली-प्रदेश में आने के बाद इन्द्रा का हाथी पर सैर करने का क्रम छूट गया।

विक्रम संवत् २०४५ में नाथद्वारा में साध्वी आनन्दकुमारीजी ने प्रसंगवश जब स्वयं यह घटना सुनाई तब मैंने पूछाह्नसाध्वीश्री! आपको हाथी पर बैठने का

इतना शौक क्यों था? उन्होंने स्मित स्वर में मेरी जिज्ञासा को समाहित करते हुए कहाह्नकुदरत से हाथी बहुत विशालकाय एवं प्रांशु अवगाहना वाला पशु होता है। उस पर बैठकर ज्योंही मैं मुख्य बाजार में परिभ्रमण करती तो सब लोग मेरी ओर दृष्टि बांध कर देखने लगते। कई आपस में पूछतेह्नअरे! यह इतना सुन्दर बच्चा किसका है। उन्हें उत्तर कौन दे? पर इतना जरूर है सबको मेरा गजारूढ़ होना प्रिय लगता। सचाई यह है कि मुझे हाथी पर बैठने से अपने आपमें बड़े आदमी होने का अहसास होता। इसलिए ऊंचे आसन पर बैठना मेरे लिए अतिरिक्त आनन्द एवं तोष का विषय था। मेरे मन में विकल्प उठाह्नसज्जन व्यक्तियों की उन्नत अभिरुचियां बचपन में ही उनके उन्नत भविष्य की सूचना दे देती हैं।

पिता का अंतिम उपहार

माता-पिता के ममतामय साये में इन्द्रा के शैशव के अनमोल क्षण बीत रहे थे। पर, विधि को दोनों की एक साथ स्नेहिल उपस्थिति बर्दाश्त नहीं हो सकी। खूबचंदजी अचानक अत्यधिक बीमार हो गये। विविध उपचार चले पर कोई लाभ नहीं हुआ। खूबचंदजी ने सोचाह्नशायद यहां का पानी मुझे नहीं जंचा अतः अब शीघ्र ही देश (थली) चले जाना चाहिए। उनकी बड़ी बहन केसरबाई के भी बार-बार बुलावट के समाचार आ रहे थे। असम आए अभी तीन वर्ष ही हुए थे कि खूबचंद को घर, व्यवसाय, दुकान आदि सब बन्द कर यकायक राजलदेसर के लिए प्रस्थान करना पड़ा। वे सीधे बड़ी बहन के घर पहुंचे। बहन को भाई से मिलकर अत्यन्त हर्ष हुआ। बड़ी बहन के अत्यधिक आग्रह के कारण वे अब राजलदेसर ही रहने लगे। राजलदेसर में भी कई उपचार किए गए पर स्वास्थ्य में सुधार के कोई आसार नजर नहीं आ रहे थे।

एक दिन खूबचंदजी का हाथ गले में पहने हुए स्वर्णहार पर पड़ा। उन्होंने सोचाह्नजब सब कुछ छोड़कर जाना ही है तो इस हार का बोझ गले में क्यों रखूं? तत्काल उनके निमीलित नयन खुले। उन्होंने पलंग के पास पुत्री इन्द्रा को खड़ा देखकर गले से हार निकाला और पुत्री इन्द्रा को पहना दिया। मस्तक पर दो-तीन बार हाथ फेरकर आशीर्वाद प्रदान किया और प्रसन्नता से पूरे वदन पर स्नेहमय दृष्टिपात किया।

बुद्धिमानी बनाम भोलापन

उस समय इन्द्रा की उम्र मात्र छह वर्ष थी। पिता द्वारा प्रदत्त यह आशीर्वाद और हार का उपहार पुत्री के लिए अंतिम धरोहर है, यह इन्द्रा की

समझ से परे की बात थी। एक पांच वर्ष के बच्चे के लिए शिक्षा से भी अधिक मूल्य वस्तु का होता है। सहसा उस पन्द्रह तोले सोने के बहुमूल्य चमकीले हार को पाकर इन्द्रा का बाल मानस पुलक उठा। वह उछलती-कूदती तेजी से दौड़कर आंगन में आई। उसके बुआसा का लड़का मोहनलाल भी वहीं खड़ा था। दोनों प्रायः साथ-साथ खेलते थे। दोनों ही बहुत चंचल और नटखट थे। मोहनलाल ने ज्योंही चमकता हार देखा, वह उसे जंजीर समझकर इन्द्रा के हाथ से छीनकर ले भागा। हार छीनते ही इन्द्रा जोर-जोर से रोने लगी। मोहन ने सोचाह्नकहीं यह मेरी शिकायत न कर दे अतः उसने अपनी तरकीब चलाते हुए कहाह्नदेखो, मैं उसे और बढ़िया बना देता हूं। इन्द्रा मोहन की इस बात पर हार देने को राजी हो गई।

सोना तो स्वतः ही बढ़िया होता है फिर भला उसे क्या बढ़िया बनाया जाए? पर, अबोध बच्चे क्या समझे सोने की मूल्यवत्ता को? उनके लिए वह हार नहीं बल्कि खेलने का साधन मात्र था। दोनों खेलने के बहाने नीचे उतरे और घर के खुले परिसर में उद्धम मचाने लगे। दोनों की रस्साकस्सी में हार टूट गया। वह टूटा हुआ हार बच्चों के लिए अधिक उपयोगी बन गया इसलिए हार के भग्न होने पर विवाद की बजाय अधिक हर्ष हुआ। वे केरमबोट की काठ की गोटियों की तरह छोटे-छोटे सोने के पाशे एक दूसरे पर उछालने लगे। उस समय पड़ौस की एक महिला किसी कार्यवश कोड़ामलजी डागा के घर में आई। उसने बिखरे सोने के चमकीले टुकड़ों को देखा तो मन में लोभ जाग गया। परिसर में खेलते बच्चों को बहला-फुसलाकर अन्दर भेज दिया और स्वयं सोने के पाशों को त्वरता से उठाकर अपने घर चलती बनी। दोनों ने ऊपर जाकर मां सुजाणांजी के सामने इस तरह अपनी होशियारी का बखान किया, जैसे उन्होंने कोई बहुत बड़ा काम किया हो पर, यह क्या? मिला धन्यवाद की जगह कड़ा उपालम्भ। दोनों का मुंह उतर गया। हार गुम होने की खबर से घर में खलबली मच गई। सब हार की खोज में इधर उधर दौड़ने लगे। इस अफरातफरी के बीच ही मोहनलाल ने जोर से कहाह्नहम तो हार नीचे ही छोड़कर आए थे पर हमारे ऊपर आने से पूर्व यहां एक महिला जरूर आयी थी। उसके बाद हार का क्या हुआ, हमें कुछ पता नहीं। पारिवारिकजनों ने उस महिला को ढूंढने का बहुत प्रयास किया पर न वह महिला मिली और न वह हार। बच्चों की थोड़ी सी नादानी के कारण हजारों रुपयों का बहुमूल्य हार एक मिनट में गुम हो गया।

हार गुम हो जाने पर परिजनों का उत्तेजित होना स्वाभाविक था। उनका

रोष बच्चों पर उतरे, उससे पहले ही केसरबाई ने स्थिति को भांप लिया। उनका अपनी भतीजी पर संतान से भी अधिक वात्सल्य था। केसरबाई ने सबको सावधान करते हुए कहाह्न'किसी को कुछ कहने की जरूरत नहीं। जो होना था वह हो गया। ये तो भोले बच्चे हैं। इन्हें सोने चांदी का क्या पता?' केसरबाई के इस वाक्य ने दोनों को भयमुक्त कर दिया। वे फिर उसी मस्ती के साथ अपनी बाल क्रीड़ा में इस तरह रत हो गए, जैसे कुछ हुआ ही न हो। आज इस घटना को पढ़कर किसी भी पाठक को बच्चों के बाल सुलभ अज्ञान पर हंसी आ सकती है पर, शैशव के इन निश्चिन्त क्षणों का आनन्द अपने आपमें अलग ही होता है। प्रस्तुत प्रसंग में यह तथ्य अवश्य उभरता है कि जितना प्रिय-अप्रिय का संवेदन उतना दुःख, जितनी प्रतिक्रिया विरति उतना सुख। बचपन संवेदनाओं और प्रतिक्रियाओं दोनों के घेरे से मुक्त होता है अतः वह सुख का सर्वोत्तम काल है।

उठ गया पिता का साया

इन्हीं सुखद अनुभूतियों के साथ साध्वी आनन्दकुमारीजी का शैशव क्रमशः कौमार्य की ओर गतिशील हो रहा था। गति के साथ अवरोध न हो यह कैसे संभव है? छह वर्ष की उम्र में ही आपके सिर से पिता का स्नेहिल साया उठ गया। नानाविध उपचारों के बावजूद खूबचंदजी को बचाया नहीं जा सका। इस दर्दनाक मौत ने पूरे परिवार को शोक के सागर में डुबो दिया। जन्म और मृत्यु से सर्वथा अनभिज्ञ बालिका इन्द्रा भी अपनी तेईस वर्षीया मां के सजल नयनों को देख फफक-फफक रो पड़ी। उसे पुचकारने की कोशिश करने वाले परिजन स्वयं दिलगीर हो उठे। एक क्षण में जैसे सब कुछ पलट गया। संसार भर की खुशियां मन की उदासी के सामने बौनी लगने लगी।

साध्वी सुजाणांजी के सुखद दाम्पत्य जीवन के सुनहले क्षणों में सहसा आए उस भूचाल ने पारिवारिक-व्यवस्था तंत्र को अस्त-व्यस्त कर दिया। जीवन की दिशा को रूपान्तरित करने का श्रेय भी उसी भूचाल को है। जीवन के सागर में कुछ ऐसे ज्वार भाटे आते हैं जो आमूलचूल परिवर्तन घटित कर देते हैं। परिवर्तन सृष्टि का शाश्वत क्रम है। जो परिवर्तन में स्थायित्व और स्थायित्व में परिवर्तन को देखता है वही यथार्थ को उपलब्ध कर सकता है।

शाश्वत साथी की खोज में उठे कदम

साध्वी सुजाणांजी ने वियोग की इस व्यथा को धैर्य और समता से सहन किया। जीवन साथी की विरह व्यथा ने आपको एक शाश्वत साथी की खोज के

लिए उत्प्रेरित कर दिया। पति वियोग की इस हृदय-विदायक घटना ने आपकी चित्त भूमि में विरक्ति के बीज अंकुरित कर दिए। उनका सात्त्विक जीवन अत्यधिक त्यागमय बन गया। चारित्रात्माओं की प्रेरणा पाकर वैराग्य अधिक प्रगाढ़ हो गया। साध्वी सुजाणां जी ने दीक्षा लेने का दृढ़ निश्चय कर लिया। उस समय बालिका इन्द्रा की उम्र मात्र आठ वर्ष थी। सुजाणांजी चाहती थी कि बेटी की दीक्षा मेरे साथ हो तो सोने में सुगंध हो जाए। पुत्री को दीक्षा के लिए तैयार करने के पीछे उनका अभिप्राय यह नहीं था कि दीक्षित होने के बाद मां को पुत्री की चिन्ता न करनी पड़े। उनका तत्वप्रेक्षी मानस यह चाहता था कि जिस पीड़ामय संसार से विरक्त हो मैं संयम पथ पर चरणन्यास करना चाहती हूं उस संसार के मायाजाल में कम से कम यह अबोध कलिका न फंसे।

मैं कहां सोऊं?

वह गर्मी की रात थी। सभी पारिवारिक जन घर की छत पर सोए हुए थे। साध्वी सुजाणांजी को अछायां (खुले आकाश) में सोने का त्याग था। अचानक मौसम का मिजाज बदला। भयंकर आंधी-तूफान, कड़कती बिजलियां, बादलों की घनघोर घटा। तेज वर्षा के साथ धरती और आकाश एक हो गए। प्रकृति का यह रौद्र रूप देख सभी पारिवारिक जन उठे, अपने बिस्तर और पलंग लेकर नीचे उतरे। सब फटाफट अपने अपने नियत स्थान पर जाकर सो गये। पीछे रही छोटी सी बालिका इन्दु। वह चुपचाप अपनी बुआ के पास जाकर खड़ी हो गई। बुआ ने प्यार भरे शब्दों में कहाह्नइन्दु! तूं भी सो जा। इन्दु ने तुतलाते स्वरों में पूछाह्नआप ही बताएं मैं कहां सोऊं? केसरबाई ने सिर पर हाथ फेरते हुए कहाह्नतूं अपनी मां के कमरे में चली जा।

इन्द्रा तत्काल उस कमरे में गई। वहां मां सुजाणांजी सामायिक कर रहे थे। वे दीपक के मन्द प्रकाश में किसी पुस्तक के माध्यम से तात्विक बोल कंठस्थ करने में तल्लीन थे। उनकी तल्लीनता इतनी गहरी थी कि बाहरी तूफान एवं उससे होने वाली हलचल का उन्हें अहसास तक नहीं था। अंधेरी रात में मां को स्वाध्याय-रत देख इन्द्रा ने पूछाह्नआप अभी क्या कर रहे हैं? मां ने संयत स्वर में कहाह्नमैं अभी सामायिक कर रही हूं। इन्द्रा ने पुनः कहाह्नमुझे तो बुआजी ने आपके पास सोने के लिए भेजा था। पर, आप तो सामायिक में बैठे हैं। अब मैं बैठी बैठी क्या करूं? मां ने कहाह्न'तुम्हारी इच्छा हो तो तुम भी थोड़ी देर याद कर लो। मेरी सामायिक तो अभी पन्द्रह-बीस मिनट घट रही है।' इन्द्रा मां के बिना अकेली सोना नहीं चाहती थी। वैसे भी छत से उतरकर कमरे तक आते-

आते उसकी नींद भी उड़ चुकी थी। मां को पढ़ते देख उसके मन में भी पढ़ने की भावना जागी। वह चुपचाप मां के हाथ से पुस्तक लेकर स्वयं पढ़ने लगी। यद्यपि इन्दु को अच्छी तरह पढ़ना नहीं आता था फिर भी उसके पढ़ने की स्थिर मुद्रा को देख ऐसा लग रहा था जैसे वह बहुत गहराई से किसी चीज को हृदयंगम कर रही है। उस समय तक सब निद्रा देवी की गोद में जा चुके थे। मां-बेटी दो ही जाग रही थी। पूर्ण शान्त, नीरव और एकांत वातावरण में इन्द्रा को अपने पास देख मां को प्रसन्नता हुई।

क्या तूं भी दीक्षा लेगी?

कुछ पल तक अपना सीखना-चितारना छोड़कर मां अपनी नन्हीं बिटिया की एकाग्र अध्ययनशील-मुद्रा को अपलक निहारने लगी। बालिका इन्दु ने थोड़ी देर में एक एक कर पूरी पुस्तक के पन्ने इस तरह उलट डाले जैसे उसने सब कुछ पढ़ लिया हो। उचित अवसर देख मां ने बेटी से धीमे स्वरों में पूछाह्न'क्या तूं भी दीक्षा लेगी?' यह पूछते ही इन्द्रा गला फाड़कर जोर-जोर से रोने लगी। उसके तेज रुदन से यकायक सब जाग उठे। केसरबाई के कानों में ज्यों ही इन्द्रा के चिल्लाने की आवाज पड़ी। वे तत्काल बिस्तर से उठकर भाभी के कमरे में आयी, रोती हुई इन्दु को गोद में बिठाकर पूछने लगीह्नक्या तुम्हारे शरीर में कहीं दर्द हो रहा है? इन्द्रा ने सिर हिलाते हुए कहाह्ननहीं। उन्होंने फिर पूछाह्नक्या तुम्हें मां ने डांटा है? इन्द्रा ने फिर नकरात्मक संकेत किया। केसरबाई ने सोचाह्नशायद भूख लगी है इसलिए रो रही है। उन्होंने बच्चों की पसन्द के नाना खाद्य द्रव्य सामने रखे। पर, इन्द्रा तो उन्हें खाने की बजाय उठा-उठाकर नीचे फैंकने लगी।

विविध उपाय करने पर भी जब इन्दु चुप नहीं हुई तो केसरबाई ने सोचाह्नशायद यह सबके सामने अपनी बात कहने में संकोच कर रही है। उन्होंने सबको कमरे से बाहर भेज दिया फिर इन्दु के सिर पर हाथ रखकर बड़े प्रेम से कहाह्न'बेटा! तुम मुझे नहीं बताओगी तो पता कैसे चलेगा?' इन्द्रा ने सुबकते हुए कहाह्न'बुआसा! मां मुझे दीक्षा के लिए कह रही है और मैं दीक्षा लेना नहीं चाहती। बाकी न तो किसी ने डांटा है और न किसी ने पीटा है। बस, मुझे तो दीक्षा के नाम से रोना आ गया।'

केसरबाई ने तत्काल भाभी से कहाह्न'तुम्हें दीक्षा लेनी है तो आराम से लो पर इन्द्रा को कहने की कोई जरूरत नहीं। इसकी शादी की जिम्मेदारी मेरी है। तुम्हें इसकी क्या चिन्ता है? इसकी सारी व्यवस्थाएं मैं करूंगी। तुम जानो

तुम्हारा काम जाने पर इसको भरमाने की कोई अपेक्षा नहीं।' ननद की इस स्पष्टोक्ति को सुनकर भाभी ने शांत स्वर में कहाह्न'बाईसा! मैंने तो केवल पूछा था किन्तु पूछते ही इसने तो रोना शुरू कर दिया। मुझे तो न आपके प्रति अविश्वास है, न इन्दु की तिलमात्र भी चिन्ता है। फिर भला मैं दीक्षा के लिए क्यों जबरदस्ती करूं? दीक्षा तो आत्मोद्धार का मार्ग है। इस मार्ग पर चलने वाले को तो लाभ ही लाभ है। जिसकी इच्छा हो, वह स्वीकार करे। जिसकी इच्छा न हो, उस पर कोई दबाव नहीं।'

भाभी के इस संक्षिप्त एवं स्पष्ट उत्तर के सामने पुनः कुछ कहने का अवकाश ही नहीं था। केसरबाई ने इन्दु को सहलाते हुए कहाह्न'तुम्हारी जैसी इच्छा होगी वैसा ही होगा। तुम्हें कहने वाला कौन है?' बुआं के वात्सल्य पूर्ण शब्दों को सुनकर इन्दु कुछ आश्वस्त हुई। उसका रुदन थम गया।

कारण विवाह के प्रति आकर्षण का

बालमनोविज्ञान के अनुसार बच्चा अनुकरण प्रिय होता है। वह अपने परिपार्श्व में जो कुछ देखता है वैसा ही करना सीख जाता है। बच्चे के इर्द-गिर्द घटित होने वाली घटनाएं बाल मन पर गहरा प्रभाव छोड़ती हैं। वह प्रभाव आगे जाकर संस्कार का रूप ले लेता है। संस्कारों के आधार पर ही मनुष्य के व्यक्तित्व का निर्माण होता है। मनुष्य की भौतिक एवं आध्यात्मिक अभिरुचियां उन्हीं संस्कारों की अभिव्यक्ति मात्र हैं। इन्द्रा के बाल मन पर भी एक ऐसी घटना का प्रतिबिम्ब था जिसने दीक्षा के संस्कारों को उद्‌बुद्ध नहीं होने दिया।

एक बार इन्द्रा ने अपनी बुआ की बेटी इचरज (साध्वी रायकुमारीजी) की सगाई होते देखी थी। सगाई के अवसर पर बहुत सी नई नई चमकीली पोशाकें और आकर्षक गहने आये। इचरज जब इन नए वस्त्राभूषणों को धारण करती तो उसका सौन्दर्य निखर उठता। इचरज की सगाई मोमासर के कुहाड़ परिवार में हुई थी। कुहाड़ परिवार उस समय का संपन्न एवं प्रतिष्ठित परिवार था। घर में पहले बेटे का विवाह था इसलिए प्रायः नये नये वेश, बहुमूल्य आभूषण नववधू के लिए राजलदेसर आते रहते थे। इधर पिता कोड़ामल डागा एवं माता केसरदेवी भी बेटी की शादी बहुत उत्सव से करना चाहते थे। उन्होंने सगाई के अवसर पर ही बहुत सामान खरीद लिया। घर में आभूषणों और सुन्दर वेशों का ढेर सा लग गया। इचरज जब उन्हें पहनकर इठलाती हुई चलती तो इन्द्रा के बाल मन में भी ऐसे सुन्दर वस्त्र और चमकीले गहने पहनने की उमंग उठती।

ऐसा रंगीन घाघरा चुनरी और चमकते स्वर्णाभूषणों को पहनने के बहाने

वह अपने विवाह के लिए उत्सुक हो उठी। कितना ऋजु होता है बाल मन? वैवाहिक जीवन की तमाम समस्याओं से बेखबर इन्द्रा ने एक दिन अपनी बुआ से पूछाह्नबताओ, मेरी सगाई कब करोगे? आठ वर्ष की उस अबोध बालिका का यह प्रश्न सुनकर सब हंस पड़े। केसरबाई ने मुस्कुराते हुए पूछाह्न'इतनी क्या जल्दी है? अभी तो इचरज की सगाई हुई है। उसका विवाह होने के बाद तुम्हारी सगाई कर देंगे।' इन्द्रा ने तपाक से कहाह्न'नहीं, मेरी सगाई तो अभी करनी पड़ेगी।' बुआ ने विस्मित स्वरों में कहाह्न'क्यों ऐसी क्या बात है?' इन्द्रा ने इठलाते हुए कहाह्न'क्योंकि मैं भी इचूबाई (साध्वी रायकुमारीजी) जैसे सुन्दर वेश और बढ़िया गहने पहनूंगी।' सगाई के पीछे छिपी उस मनोभावना को सुन सब खिलखिला पड़े। जब तक केसरबाई ने जल्दी सगाई करने की हां नहीं भर ली तब तक इन्द्रा ने अपना जिद्द नहीं छोड़ा।

शौक रंगीन घाघरा चुनरी का

बुआ का भतीजी पर अत्यन्त स्नेह था। केसरबाई ने सोचाह्नआज भाई संसार में नहीं है। भाभी और भतीजी की जिम्मेदारी वह मुझ पर छोड़कर गया है। यदि आज भाई संसार में होता तो न जाने वह अपनी इकलौती पुत्री के लिए क्या क्या लाता? खैर, काल के आगे किसी का वश नहीं चलता। भाई की अनुपस्थिति में मेरा यह पहला कर्तव्य है कि मैं इसकी किसी भी अपेक्षा को अपूर्ण न रहने दूं। इसी विचार से उत्प्रेरित हो केसरबाई ने भतीजी के लिए दूसरे ही दिन बाजार से नई चुनरी एवं नया घाघरा मंगवाया। पर, इन्दु ने यह कहकर ना-पसन्द कर दिया कि पहनूंगी तो इचरजबाई जैसा ही वेश पहनूंगी। आखिर केसरबाई ने अपनी बेटी इचरज की शादी के उपलक्ष में मंगाए हुए कपड़ों की मंजूषा खोलकर कहाह्नइसमें से जो तुम्हें पसन्द आए वह ले लो। अब तो इन्दू बाग बाग हो गई। उसने एक सुन्दर सा चमकीला वेश उठाया और पहन लिया। वह प्रकृति से सुरूप तो थी ही, इस सुन्दर वेश को पहनने से और अधिक मनोरम लगने लगी। सब पारिवारिक जन इन्दु को स्नेह से चूमने लगे। सुबह से शाम हो गई। पर, इन्दु ने न तो उस वेश को उतारा और न ही कहीं उसमें एक भी सलवट गिरने दी। सब नन्हीं बालिका की इस चतुराई को देखकर दंग थे। उनकी यह विशेषता जीवन के अंतिम क्षण तक बनी रही।

मां का दूसरा प्रयत्न

विक्रम संवत् १९८६ में साध्वी भूरांजी (लाडनूं) का राजलदेसर पदार्पण हुआ। उनके साथ साध्वी लिछमाजी (मोमासर) थी, जो बालिका इन्दु की

संसारपक्षीय बुआ लगती थी। उनके शुभागमन का शुभ संवाद पा सभी ज्ञातिजन साध्वी लिछमांजी के दर्शन करने ठिकाने (साध्वियों के प्रवास-स्थल) गए। अन्य सब लोग तो दर्शन कर घर लौट गए किन्तु इन्दु और उसकी मां साध्वियों की उपासना में वहीं बैठे रहे। एकान्त अवसर देख साध्वी लिछमांजी ने बात ही बात में संसार की नश्वरता का प्रतिबोध देते हुए दीक्षा लेने की प्रेरणा दी। साध्वीश्री ने कहाह्न'इन्दु! मां के साथ दीक्षा लेने से दो फायदे हैं। पहली बातह्नतुम्हारा समय बेकार नहीं जाएगा। दूसरी बातह्नन मां को तुम्हारी चिन्ता करनी पड़ेगी, न तुम्हें मां की।' इन्दु को बुआजी महाराज का उपदेश प्रिय नहीं लगा। वह अन्यमनस्क भाव से अपने घर लौट आई। रंगीन कपड़ों और सुन्दर गहनों के आकर्षण में उलझा इन्द्रा का बाल-मन किसी भी हालत में सफेद वस्त्र पहनने को तैयार नहीं था।

उसने सोचाह्नघर पर मां दीक्षा के लिए कहती है और ठिकाने में महाराज। अब क्या किया जाए? हां कहने का मन नहीं और ना कहना अच्छा नहीं। उसने दोनों के बीच का मार्ग निकाल लिया। वह न एकांत में मां के पास जाती और न साध्वियों के पास। अब इन्द्रा का अधिकतर समय खेल-कूद एवं बुआ केसरबाई के परिपार्श्व में बीतने लगा। साध्वी सुजाणांजी ने सोचा थाह्नमेरे कहने से तो इन्द्रा उस दिन रोने लगी पर बुआजी महाराज के समझाने से तो अवश्य उसके विचार बदलेंगे और वह निश्चित ही दीक्षा के लिए तैयार हो जाएगी। किन्तु वे यह देखकर स्तब्ध रह गई कि इन्द्रा ने साध्वियों की उपासना तो दूर, दर्शन करने भी छोड़ दिए। पुत्री की दीक्षा के सपने देखने वाली मां का दूसरा प्रयत्न भी विफल हो गया।

ह्नः ३ ःह्न
संयम के पथ पर

कभी कभी वर्षों का प्रयत्न कोई वांछित परिणाम नहीं लाता और कभी कोई ऐसी घटना घटती है कि क्षण भर में चेतना की धारा को मोड़ देती है। बालिका इन्दु के परिपार्श्व में भी एक ऐसी घटना घटी, संयोग है जिसने पल भर में उनके जीवन की दिशा को परिवर्तित कर दिया। एक तरफ केसर बाई अपनी लाडली भतीजी की सगाई के रंगीन सपने देख रही थी तो दूसरी तरफ भतीजी की अन्तश्चेतना में चल रही भोग के संस्कारों की आंधी अचानक योग की दिशा में मुड़ गई।

पिता खूबचंदजी के स्वर्गवास के बाद साध्वी आनन्दकुमारीजी का बचपन अपने फूफा कोड़ामलजी डागा एवं बुआ केसरदेवी के स्नेहिल साए में बीता। कोड़ामलजी के मकान के पास ही महालचंदजी कुण्डलिया एवं जेसराजजी बैद का मकान था। महालचंदजी की पुत्री मघी, जेसराजजी की पुत्री नोजां, कोड़ामलजी की पुत्री इचरज तथा इन्द्रा चारों सखियां थी। मघी का ग्यारह साल तथा नोजां का नौ साल की वय में विवाह कर दिया गया। दोनों ही छह महिने बाद विधवा हो गई। इधर इचरज की सगाई जिस लड़के से की गई वह भी विवाह के पन्द्रह दिन पहले स्वर्गवासी हो गया। तीन घरों में एक साथ आई इस विपत्ति से हाहाकार-सा मच गया। नोजां और मघी के परिवारिक जन सांसारिक परम्परानुसार जब अपनी विधवा बेटियों के बोर और चूड़ियां (सुहाग-चिह्न) खोलने लगे तो दोनों ने हठ पकड़ लिया कि हम तो अपने गहन नहीं खोलेंगी। जब पारिवारिकजनों ने वस्तु स्थिति से अवगत कराते हुए कहाह्नविधवा होने के बाद आभूषण पहनना उचित नहीं है तब दोनों ने प्रतिकार की भाषा में कहाह्नहमें पता नहीं विधवा-सधवा का। हमें तो ये सुन्दर गहने और वेश हमारी शादी में मिले थे अतः हम तो इन्हें नहीं खोलेंगी। पारिवारिक जनों ने देखाह्नसीधी बात इनके गले नहीं उतर रही है। उन्होंने युक्तिपूर्वक मधुर स्वरों में समझाते हुए

कहाह्न'देखो! हम तुम्हारे गहने किसी दूसरे को नहीं देंगे। ये तुम्हारे पास ही रहेंगे किन्तु रोज-रोज पहनने से नए गहनों की चमक उतर जाएगी अतः एक बार इन्हें खोल दो।' यह बात सुन बालिकाओं ने हठ छोड़ा और अपने सारे गहने उतार दिए।

विधवा होने की आफत गले में क्यों डालूं?

कुछ क्षण पहले जो तन आभूषणों से शोभायमान प्रतीत हो रहा था अब वही तन शोभाहीन लगने लगा। यह हृदय द्रावक दृश्य बालिका इन्द्रा ने भी देखा। उसका बाल मानस शंकाओं से भर गया। अनेक प्रश्न मन को आंदोलित करने लगे। उसने अपनी बड़ी भाभी (बुआ के बेटेह्नसोहनलालजी की बहू) से पूछाह्नइन दोनों के गहने क्यों उतरवाए जा रहे हैं?

भाभी ने कहाह्नइनके पति की मृत्यु हो गई इसलिए ये विधवा हो गई हैं।

इन्द्राह्नविधवा हो गई तो क्या हुआ?

भाभी ने छोटी ननद के भोले सवालों का उत्तर देते हुए कहाह्नविधवा होने के बाद औरत को गहना ही नहीं, रंगीन वस्त्र तक पहनने ओढ़ने का अधिकार नहीं।

इन्द्राह्नतो अब इन्हें कैसे वस्त्र पहनाएं जाएंगे? इनके धन का क्या होगा? अब इन्हें कहां रखा जाएगा?

एक साथ पूछे गए ढेर सारे सवालों का भाभी कब तक उत्तर देती? उसने झल्लाते हुए कहाह्न'कब से माथा खाने लगी हो। क्या क्या पहनेंगी? अब तुम्हारी मां जैसे कपड़े पहनेंगी।'

भाभी के मुख से निकले इस एक तीक्ष्ण वाक्य ने इन्द्रा के सुकोमल मन को तीर की तरह आर-पार वेध दिया। विधवा औरत की यह दयनीय दशा इन्द्रा के अन्तस् को कचोटने लगी। उसने सोचाह्नयदि शादी होने के बाद विधवा हो गई तो मेरी भी यही स्थिति होगी। ऐसे घुट-घुट कर विधवा का जीवनयापन करने से तो विवाह न करना ही अच्छा। राजस्थानी कहावत के अनुसार 'क्यों तो अंधे को न्योता दूं और क्यों दो जीमाऊं' अर्थात् क्यों तो पहले शादी करूं और क्यों विधवा होने की आफत गले में डालूं।

अनुरक्ति विरक्ति में बदल गई

कुछ क्षण पहले जिस विचार निर्झर से अनुराग की धारा प्रवाहित हो रही थी अब वहां विराग की निर्मल धारा बहने लगी। एक ही दृश्य से ऐसा झटका

लगा कि मोह के बंधन शिथिल होने लगे। इन्द्रा ने दृढ़ निश्चय कर लिया कि अब मुझे उसी के गले में वरमाला डालनी है जो हमेशा साथ निभाए। वह पति है संयम। बस, अब तो अतिशीघ्र संयम ग्रहण कर अपनी आत्मा का उद्धार करना है। जो कार्य मातुश्री सुजाणां के प्रयत्न से नहीं हुआ वह अपने आप हो गया। जन्म-जन्मान्तर के संस्कार उद्‌बुद्ध हो गए। तीन वर्ष पूर्व साध्वी लिछमांजी द्वारा कहे हुए प्रेरणा के बोल अब उसे सत्य प्रतीत होने लगे। वैधव्य की विभीषका ने संस्कारों का रूपान्तरण कर दिया। वर्षों से विवाहोत्सुक मन क्षण भर में वैरागी बन गया। रंगीन वस्त्रों और चमकीले आभूषणों का व्यामोह टूट गया। सफेद वस्त्रों के नाम से चिढ़ने वाली बालिका इन्द्रा स्वयं साध्वी बनने को तैयार हो गई।

लक्ष्य बदलते ही उसकी सारी जीवन चर्या बदल गई। खान-पान, रहन-सहन और व्यवहार का क्रम बदल गया। खेलने-कूदने के प्रति रुझान कम हो गया। अब वह अधिकतर समय साध्वियों की सन्निधि में बिताने लगी। दिन-रात एक ही धुनह्नसीखना-चितारना, पढ़ना, सामायिक करना। पुत्री इन्द्रा की दिन चर्या में सहसा इतना बड़ा परिवर्तन देख मां सुजाणां भी विस्मित थी।

एक दिन इन्द्रा ने अपनी भावना मां के सम्मुख रखी। अकस्मात् यह शुभ संवाद सुन माता सुजाणां हर्षित हुई। उन्होंने साधुत्व की कठोर जीवन चर्या से अवगत करवाते हुए कहाह्न'देखो! साधु जीवन कष्टों का जीवन है। भूख-प्यास सर्दी-गर्मी को समभाव से सहना होगा। अपनी मनमानी नहीं चलेगी। संयम लेना मोम के दांतों से लोहे के चने चबाने जैसा है। अब भी समय तुम्हारे हाथ में है। पक्का सोच लो।' इन्द्रा ने दृढ़ स्वरों में कहाह्न'मां! मैं आपके देखा देखी दीक्षा नहीं ले रही हूं। मेरा अंतःकरण जागृत हो चुका है। मेरी भावना प्रबल है। अब क्षण भर भी मुझे इस संसार में रहना अच्छा नहीं लगता। मैंने भावावेश या प्रलोभन वश नहीं, सोच समझकर यह निर्णय लिया है। मैं सारे कष्ट हंस हंस कर सहन कर लूंगी। आप तनिक भी संदेह न करें। आप जिस मार्ग को अंगीकार कर रही हैं, मुझे भी अब वही मार्ग स्वीकार है।'

पुत्री का यह दृढ़तापूर्ण उत्तर सुन मातुश्री सुजाणांजी अत्यन्त प्रसन्न हुई। फिर भी एक प्रश्न बार बार माता के मन को उद्वेलित कर रहा थाह्नदीक्षा के नाम से ही जिसे भय लगता था, अचानक उसकी भाव-धारा में इतना बड़ा परिवर्तन कैसे आया? एक दिन एकांत समय में मातुश्री सुजाणांजी ने इन्द्रा को वैराग्य का कारण पूछा। इन्द्रा ने सहज शब्दों में अपनी सखी नोजां एवं मघी की वैधव्य

दशा का जिक्र करते हुए कहाह्न'मां! मैंने संसार की परिणाम-विरस स्थिति को देख लिया है। सारे रिश्ते नाते क्षणिक हैं फिर क्यों मैं शादी करूं और क्यों विधवा होने की विपत्ति मोल लूं। जान बूझकर मैं इस कीचड़ में फंसना नहीं चाहती। अब तो शीघ्र संयम पथ पर बढ़ना है।' पुत्री इन्द्रा के ये वैराग्यपरक बोल सुन मातुश्री सुजाणांजी पूर्णतः आश्वस्त एवं विश्वस्त हो गई। उन्होंने प्रसन्नता के साथ पुत्री की पीठ थपथपाते हुए कहाह्न'शाबास इन्दु! मुझे तुम से यही आशा थी। आज मेरी चिरपालित अभिलाषा फलित हो गई। बस तुम्हारे लिए ही मैंने अपनी दीक्षा की जल्दी नहीं की। अब हमारी दीक्षा में कोई रुकावट नहीं है। अब समय का अधिक से अधिक उपयोग करो।' इन्द्रा ने मां की बातों को ध्यान से सुना और स्वीकृति सूचक सिर हिलाया।

इन्द्रा ने पच्चीस बोल, प्रतिक्रमण, तात्विक थोकड़े आदि कंठस्थ करने शुरू कर दिए। इचरज के मन में भी वाग्दत्त पति (मंगेतर) की अकस्मात् मृत्यु से विरक्ति के अंकुर प्रस्फुटित हो गए। इचरज और इन्द्रा दोनों साथ-साथ साध्वियों के ठिकाने जाती। हर चीज साथ-साथ याद करती और साथ-साथ पुनरावर्तन करती। दोनों के वैराग्य का पता जब पूनमचंदजी (इन्द्रा की बुआ के बेटे भाई) को लगा तो वे एकदम झल्ला उठे। उन्होंने तेज स्वर में सभी परिवारिकजनों को कह दियाह्न'इन दोनों को साध्वियों के ठिकाने मत जाने दो। अपने आप वैराग्य उतर जाएगा।' मोह का काम बड़ा विचित्र होता है। पूनमचंदजी ने मोहवश यहां तक धमकी दे दी कि अगर तुम दीक्षा लोगी तो मैं कुएं में गिरकर मर जाऊंगा। उन्होंने परिवारिकजनों को सावधान करते हुए कहाह्नमुझे लगता है इन्होंने साध्वियों की बातों में आकर ऐसा निर्णय किया है। ठिकाने आना जाना बंद हो जाएगा तो दीक्षा की रट अपने आप छोड़ देगी। पूनमचंदजी की बात सभी पारिवारिकजनों को जंच गई। अब इन्द्रा और इचरज का प्रातःकालीन दर्शनों के सिवाय साध्वियों के ठिकाने आना-जाना एकदम बंद हो गया। साध्वियों के बिना उन्हें तत्त्वज्ञान सिखाए कौन? आखिर दोनों ने अपनी स्फुरणशील प्रतिभा से इस जटिल समस्या का समाधान ढूंढ लिया। इन्द्रा की मां (साध्वी सुजाणांजी) उन दिनों घर पर ही दो-तीन सामायिक करती थी। दोनों बालिकाएं उनके पास पढ़ने लगी। जो पाठ वैरागिन सुजाणां पढ़ाती, दोनों याद कर लेती। कंठस्थ करने की स्पर्धा ऐसी जगी कि दोनों ने स्वल्प समय में अच्छा तत्त्वज्ञान अर्जित कर लिया।

एक बार सुजाणांजी मध्याह्न में कमरे के ऊपरितन भाग (दच्छुत्ती) पर

एकांत में सामायिक कर रही थी। इन्द्रा और इचरज भी उन्हें ढूंढते-ढूंढते वहां पहुंच गई। दोनों उनके पास तत्त्वज्ञान सीखने लगी। इतने में ही पूनमचंदजी किसी कार्यवश वहां आए। दच्छुत्ती पर दृष्टि पड़ते ही रोषारुण स्वरों में कहाह्न'यह मामी सारे घर को खराब कर रही है। खुद तो माथा मुण्डाने की तैयारी में है ही पर अपने साथ इन दूधमुंही बालिकाओं को भी सर मुण्डाने के लिए बहका रही है। खबरदार! आज के बाद कभी इनको सिखाते-पढ़ाते देख लिया तो..... कोई जरूरत नहीं इन्हें भरमाने की। पूनमचंदजी की बात पूरी होने से पूर्व ही इचरज ने कहाह्न'भाईजी! हम तो अपनी इच्छा से सीख रही हैं। सीखने मात्र से कोई दीक्षा नहीं हो जाती। न तो हमको मामीजी ने कभी दीक्षा के लिए बाध्य किया है और न हम बहकावे में आकर दीक्षा लेना चाहती हैं। संसार की क्षणभंगुरता का बोध हमें हो चुका है।'

इचरज की इन बातों का पूनमचंदजी पर क्या असर होता? उनके सर पर तो आवेश का भूत सवार था। उन्होंने दुगुने जोश के साथ कहाह्न'मुझे कोई मतलब नहीं तुम्हारी धर्म कर्म की बातों से। चाहे इस कान से सुनो या उस कान से। किसी भी हालत में मैं तुम्हारी दीक्षा होने नहीं दूंगा। चाहे तुम कुछ भी क्यों न करो पर पूनमचंद जिन्दा रहा तो तुम्हारा विवाह करके रहेगा।' यह बात सुन दोनों एक साथ बोल उठीह्न'शादी किसकी करोगे? हमने तो जीवन भर विवाह करने के त्याग कर दिए हैं। अब प्राण जाए तो जाए पर त्याग तो किसी भी स्थिति में नहीं तोड़ेंगी।' छोटी-छोटी बालिकाओं का निर्भीक उत्तर सुन पूनमचंदजी अवाक् रह गए। धीरे धीरे जैसे ही आवेश शांत हुआ, उन्होंने अनुभव कियाह्नवस्तुतः बालिकाओं का वैराग्य आंतरिक है। यदि आंतरिक वैराग्य नहीं होता तो इतनी तेज धमकियों के सामने आवाज लड़खड़ाने लग जाती। इस अनुभूति ने विरोध के स्वर को स्वीकृति में बदल दिया।

परीक्षा वैराग्य की

इन्द्रा की उम्र उस समय दस वर्ष की थी। उसके वैराग्य की चर्चा मोमासर और राजलदेसर दोनों गांवों में फैल चुकी थी। सभी के मन में यह भ्रांति पल रही थी कि मां ने बेटी को दीक्षा के लिए जबर्दस्ती तैयार किया है। एक बार इन्द्रा अपनी मां के साथ मोमासर गई। इन्द्रा के छोटे दादा शेरमलजी ने इन्द्रा के वैराग्य की परीक्षा हेतु एक तरकीब निकाली। एक दिन उन्होंने घर तथा पड़ौस के सभी लोगों को इकट्ठा किया और सबके सामने इन्द्रा से मधुर स्वर में कहाह्न'तुम दीक्षा मत लो। मैं कलकत्ता में एक लाख की गद्दी, एक लाख की जमीन, एक

लाख नगद रुपये तथा मोमासर में मेरी जितनी जायदाद है सारी तुम्हारे नाम करता हूं। फिर तुम्हें जीवन भर कोई तकलीफ नहीं होगी।'

बालिका इन्द्रा ने निर्भीक शब्दों में कहाह्न'दादाजी! इन सारी चीजों के साथ एक चीज और लिखोह्नजिसके साथ मेरा विवाह हो वह मेरे से पहले मरे नहींह्नतो मुझे आपकी ये सारी शर्तें सहर्ष स्वीकार हैं।' पचासों आदमियों के बीच ऐसा बेधड़क उत्तर सुनकर शेरमलजी दांतों तले अंगुली दबाने लगे। उन्होंने दीर्घ निःश्वास छोड़ते हुए कहाह्नबेटा! यह बात तो मैं नहीं लिख सकता। तब इन्द्रा ने कहाह्नतो फिर मैं भी धन के लिए कैसे रुक सकती हूं? जिसे अध्यात्म की अक्षय सम्पदा प्राप्त हो वह भला नश्वर भौतिक सम्पदा में अपना मन क्यों अटकाये?

इन्द्रा की दृढ़ता देख आस-पास खड़े दर्शकों के मुंह से एक ही वाक्य निकल रहा थाह्नइन्द्रा अवस्था से अवश्य छोटी है किन्तु उसके विचार परिपक्व हैं। इसकी दीक्षा में कोई रुकावट नहीं होनी चाहिए। उस प्रसंग में कवि की निम्न पंक्तियां साकार हो रही थीह्न

अवस्था छोटी भले हो, अवस्था में क्या धरा।
स्वयं के आचरण से, इतिवृत्त बनता सुनहरा।।

दीक्षा का आदेश

मां और पुत्री के उत्कट वैराग्य को देख परिजनों ने दोनों को सहर्ष दीक्षा की अनुमति प्रदान कर दी। दीक्षा की अनुमति मिलते ही मां-पुत्री की खुशी का पार नहीं था।

वि. सं. १९९० में तेरापंथ के अष्टमाचार्य महामना कालूगणी का राजलदेसर (चूरू) में पदार्पण हुआ। पारिवारिकजनों ने एक दिन प्रातःकालीन व्याख्यान में आचार्यवर के सम्मुख दीक्षा की प्रार्थना की। उचित अवसर देख परिजनों के विशेष निवेदन पर आचार्यश्री ने मां-पुत्री को दीक्षा का आदेश प्रदान कर दिया। दीक्षा का आदेश प्राप्त होते ही दोनों का रोम-रोम पुलक उठा।

ऐसे लगी नजर

उस समय आचार्य कालूगणी का राजलदेसर के श्रावक प्रतापमलजी बोथरा के मकान में प्रवास था। साध्वी झमकूजी आचार्यवर के प्रवास स्थल के सन्निकट ही विराजमान थे। एक दिन मां-बेटी मध्याह्न में श्रमण-प्रतिक्रमण सीखने के लिए साध्वी झमकूजी के ठिकाने जा रही थी। रास्ते में गांव के कुछ

प्रमुख व्यक्ति परस्पर बातें कर रहे थे। मां-बेटी को कड़ी धूप में नंगे पांव चलते देख एक व्यक्ति से रहा नहीं गया, उसने व्यंग्यात्मक लहजे में कहाह्न'यह मां तो दीक्षा ले रही है किन्तु आश्चर्य तो इस बात का है कि इसके साथ यह छोटी सी बेटी भी महाराज बन रही है।' यह बात सुन वहां खड़े हीरालाल जी डागा की वेधक दृष्टि इन्द्रा के सुकोमल शरीर पर पड़ी। वे विस्मित स्वरों में बोल उठेह्न'अरे! इतनी छोटी अबोध बालिका कैसे साधु जीवन के कठोर कष्टों को सहेगी?' उनका इतना कहना था कि इन्द्रा का वहीं जी घबराने लगा। माता सुजाणांजी को इस बात का पता नहीं था। उन्होंने ठिकाने जाते ही सामायिक पचख ली। इन्द्रा ने उस समय तो संकोचवश कुछ कहा नहीं पर धीरे-धीरे घबराहट इस तरह बढ़ी कि वह बेहोश हो गई। मुंह में झाग आने लगे। माता सुजाणांजी के सामायिक थी अतः वे कुछ उपचार भी नहीं कर सकती थी। वे तन्मयता से ॐ शांति का जप कर रही थी। उस समय दो तीन व्यक्ति ठिकाने में दर्शन करने के लिए आए। साध्वियों के दर्शन कर ज्योंही वे वापस मुड़ने लगे अचानक उनकी नजर इन्द्रा पर पड़ी। इन्द्रा को मूर्च्छित अवस्था में देख वे तत्काल उसे उठाकर कोड़ामलजी के घर लाए। इन्द्रा की यह गंभीर स्थिति देख बुआ का कलेजा धड़क उठा। केसरबाई ने तुरन्त डॉक्टरों वैद्यों को दिखाया पर कोई फायदा नहीं हुआ।

अनेक उपचार करवाए गए पर होश का नाम नहीं। जीने की आशा क्षीण होती जा रही थी। इन्द्रा की यह गम्भीर स्थिति देख सबके दिल दहल उठे। जब तक रोग का निदान नहीं होता तब तक उपचार भी सही नहीं लगता। आखिर केसरबाई के मन में विचार आयाह्नयह घर से अच्छी तरह गई थी, इतनी सी देर में बीमार कैसे हो गई? अवश्य ही या तो उसको किसी की नजर लगी है या कोई बाहरी उपद्रव है। तांत्रिक को बुलाया गया। उसने कुछ झाड़े झपटे भी किए पर, उपद्रव था ही नहीं तो शांत कैसे होता? उसने कहाह्नजरूर इसे नजर ही लगी है। संयोगवश हीरालालजी के पुत्र गणेशमलजी भी उस समय वहीं खड़े थे। वे तत्काल बोल उठेह्नलगता है यह काम तो मेरे पिताजी ने ही किया है। वे पिताजी को बुलाने सीधे घर आए परन्तु हीरालालजी कहीं बाहर गए हुए थे। वे नहीं मिले तो गणेशमलजी ने तत्काल ढूकलजी नामक सुनार को बुला लाए। उन्होंने आते ही थुथकारा डाला कि इन्द्रा पल भर में इस तरह आंख खोल उठ बैठी जैसे कोई बालक गहरी नींद से अंगड़ाई लेकर उठा हो। सबने चैन की सांस ली।

नानकी चोखी दीपती हूसी

राजलदेसर कुछ दिन विराजकर आचार्यवर ने सुजानगढ़ चातुर्मास हेतु प्रस्थान कर दिया। पावस प्रारंभ होते ही इन्द्रा अपनी मां के साथ गुरुदेव की सेवा में सुजानगढ़ पहुंच गई। तीन महीनों के उपासना-काल में उसने अनेक थोकड़े कंठस्थ कर लिए। स्वयं आचार्यवर भी उसको कई बार कंठस्थ चीजें पूछते। इन्द्रा निर्भीकता के साथ कंठस्थ ज्ञान पक्का सुना देती। आचार्यवर बड़े प्रसन्न शब्दों में फरमातेह्न'नानकी चोखी दीपती हूसी'। पूज्य गुरुदेव के ये शब्द साध्वी आनन्दकुमारीजी के लिए वरदान सिद्ध हुए। उचित अवसर देख एक दिन आचार्यवर ने सुजानगढ़ में दीक्षा महोत्सव की घोषणा की। मां-पुत्री का चिर संजोया स्वप्न साकार हो उठा।

संयम के महापथ पर चढ़ते चरण

वि. सं. १९९० कार्तिक कृष्णा नवमी को प्रातःकालीन बेला में ग्यारह वर्ष की वय में बालिका इन्द्रा ने अपनी माता सुजाणांजी के साथ आचार्य कालूगणी के कर कमलों से जैन दीक्षा ग्रहण की। दीक्षा महोत्सव फतेचन्दजी सींघी के मंदिर में विशाल जनसमूह की उपस्थिति में हुआ। इसी दिन दो भाई तथा छह बहनों की एक साथ दीक्षाएं संपन्न हुई, जिनके नाम इस प्रकार हैंह्न १. मुनिश्री हजारीमलजी (सरदारशहर) २. मुनिश्री मिलापचंदजी (बीदासर) ३. साध्वी सुजाणांजी (मोमासर) ४. साध्वी धनकंवरजी (सरदारशहर) ५. साध्वी रायकंवरजी (रतनगढ़) ६. साध्वी राजकंवरजी (नोहर) ७. साध्वी विजयश्रीजी (रतनगढ़) ८. साध्वी इन्दुजी (मोमासर)।

श्रद्धेय आचार्यश्री तुलसी ने अपनी राजस्थानी काव्य कृति कालूयशो-विलाश में उक्त दीक्षाओं का वर्णन इस प्रकार किया हैह्न

उगणीसै निब्बै सुजानगढ़ चौमासे।
दीक्षा है आठ हुई विद कार्तिक-मासे।।
धनकंवरी जोड़ायत सह स्वयं हजारी।
सेखाणी संत मिलाप महाव्रत-धारी।।
मोमासर री इन्द्रुयुत मात सुजाणां।
वसुगढ़ री रायकंवर धारी गुरु आणां।।
बरजू विजयश्री नोहर राजकुमारी।
चौथे उल्लासे सुणो ख्यात दीक्षा री।।

(कालू. उ.४, ढा. २६, गा. २)

एक नई यात्रा का प्रारंभ

संयम जीवन ग्रहण करते ही बालिका इन्द्रा पल भर में साध्वी इन्द्रा बन गई। गुरु-चरणों में दीक्षित होकर मां और पुत्री ने अपूर्व निश्चिन्तता का अनुभव किया। एक सक्षम गुरु के निर्देशन में जीवन की नई यात्रा का प्रारंभ हुआ। चरण गतिमान हो उठेह्नअसत् से सत् की ओर, मृत्यु से अमरत्व की ओर, अंधकार से प्रकाश की ओर, अज्ञान से ज्ञान की ओर, लघु से विराट की ओर, कहीं विराम, विश्राम और आराम का नाम नहीं। अविराम और अविश्राम दिनों, महिनों, वर्षों तक नहीं वरन जीवन भर चरैवेति चरैवेति' के महान उद्घोष के साथ आगे बढ़ने वाली यह महायात्रा स्वयं से स्वयं के अनुसंधान की यात्रा थी।

ः ४ ः

प्रवास का प्रयोग : एक अकल्पित संयोग

तेरापंथ धर्मसंघ में दीक्षित होने वाले प्रत्येक साधु-साध्वी की नियति के नियन्ता आचार्य होते हैं। वे जब चाहें जैसी चाहें तदनुरूप व्यवस्था कर सकते हैं। किसको कहां भेजना, कब भेजना, किसके साथ भेजना इत्यादि सम्पूर्ण व्यवस्था आचार्य के हाथ में होती है। साध्वी इन्द्रुजी को दीक्षित हुए अभी सिर्फ एक साल ही हुआ था। कालूगणी चाहते थे कि अभी तीन-चार वर्ष इन्द्रा को राज में ही रखना है। किंतु अचानक एक ऐसा प्रसंग घटित हुआ कि साध्वी इन्द्रूजी को बहिर्विहार में भेजना पड़ा। उन्होंने अपने छप्पन वर्षीतप संयमी जीवन में लगभग बावन वर्षों का लम्बा समय बहिर्विहार में बिताया। उनके गुरुकुलवास का प्रसंग जहां आचार्य कालूगणी की कृपा का सुफल है वहां प्रवास का प्रसंग भी आराध्य की कृपा से जुड़ा हुआ है।

अभी राज में ही रहने दो

वि. सं. १९९१ में जसोल (मारवाड़) में साध्वी झमकूजी ने आचार्य कालूगणी के दर्शन किए। उनकी सहवर्तिनी साध्वी जड़ावां जी सहसा देवलोक हो गई। कालूगणी ने तत्कालीन साध्वीप्रमुखा झमकूजी को निर्देश दियासाध्वी झमकूजी के साथ एक साध्वी को भेजना है किन्तु सुजाणांजी को अभी मत भेजना क्योंकि इन्द्रा अभी छोटी है। मां के चले जाने के बाद शायद बेटी का मन न लगे। इसलिए अभी दोनों को राज में ही रहने दो। गुरुदेव के इस असीम अनुग्रह का सुफल था कि दोनों को उस वर्ष राज में ही रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। गुरु कृपा का पुण्य प्रसाद पाकर मां-बेटी धन्य हो गई।

दौलतगढ़ के श्रावकों की अर्ज और नए सिंघाड़े का निर्माण

वि. सं. १९९२ में कालूगणी का उदयपुर की ओर पदार्पण हो रहा था। थामला में दौलतगढ़ के कुछ प्रमुख श्रावकों ने गुरुदेव के दर्शन किए तथा गुरुदेव

से साधु-साध्वियों का चातुर्मास देने की विनम्र प्रार्थना की। आचार्यवर ने फरमायाह्न सारे चातुर्मास घोषित हो चुके हैं। अभी कोई भी सिंघाड़ा अवशिष्ट नहीं है अतः किसी को भेजना संभव नहीं लगता।' श्रावकों ने सविनय निवेदन कियाह्न 'गुरुदेव! चाहे आप चार बहिनों को नई दीक्षा देकर ही चौमासा करने के लिए भेज दें। हम तो चारित्रात्माओं के दर्शन करके ही तृप्त हो जाएंगे। उन्हें व्याख्यान देना नहीं आएगा तो हम एक व्याख्यान को ही चार बार सुन लेंगे परन्तु आपको इस वर्ष चातुर्मास की कृपा तो करानी ही पड़ेगी।' आचार्यवर ने आश्वासन भरे शब्दों में फरमायाह्न 'श्रावको! आपकी अर्ज मेरे ध्यान में है। परन्तु अभी देने का बैंत नहीं है। आप निराश न हों, आगे आपकी अर्ज को अवश्य ध्यान में रखा जाएगा।' इस प्रकार कालूगणी ने उन्हें खूब समझाया किन्तु जहां भावना का वेग प्रबल होता है वहां कोई भी बात समझ में आती नहीं। यदि मुश्किल से समझ में आ भी जाती है तो मन उसे जल्दी से स्वीकार नहीं करता।

श्रावकों ने आचार्यवर के चरणों में अपनी पगड़ी रखते हुए कहाह्न 'गुरुदेव! आप महान् हैं। करुणा के सागर हैं। यदि आपके दरबार मैं आकर भी हम खाली हाथ लौटेंगे तो दुनियां में हमारी रिक्त झोली कौन भरेगा? विभो! हम आपके चरणों के चाकर हैं। आपकी सेवा ही हमारा जीवन है। आप क्षमाभूषण हैं। आप हमारी गलतियों को माफ कराने का अनुग्रह करें। शासननाथ! यदि आज हम यहां से खाली हाथ लौटेंगे तो गांव के लोग हम पर ताने कसेंगे कि ओह! गए थे ना पूजी महाराज के पास चौमासा लाने, ले आए चौमासा? फिर हम उन्हें क्या जवाब देंगे। जीवनधन! हमारी आस्था और आशा के एकमात्र केन्द्र आप हैं। आप अनन्त-शक्ति के स्रोत हैं। आप चाहें तो असंभव भी संभव हो सकता है।' श्रावकों ने भावावेग में गुरुदेव के पांव इतनी मजबूती से पकड़ लिए कि वहां से उठना मुश्किल हो गया। कुछ श्रावकों ने तो यहां तक कह दिया कि जब तक आप हमारी विनती पर महर नहीं कराएंगे तब तक हम मंगलपाठ भी नहीं सुनेंगे।

गुरु की गुरुता अगम्य होती है। सबको संतुष्ट करने की उनमें अपूर्व क्षमता होती है। श्रावकों की अत्यधिक श्रद्धासिक्त अर्ज और हृदय को भिगो देने वाली भक्ति को देख आचार्यवर द्रवित हो गए। उन्होंने सबको संतुष्ट करने वाली उद्घोषणा कीह्न इस वर्ष दौलतगढ़ चातुर्मास कराने का भाव है। अपनी भावना के साकार होने पर सब खुशी से बांसों उछलने लगे।

चातुर्मास तो घोषित कर दिया गया पर चौमासा करने भेजे किसे? इस समस्या के समाधान के लिए नये सिंघाड़े के निर्माण का संकल्प सामने आया।

आचार्यवर ने तत्काल साध्वी सजनांजी (बीकानेर) को याद किया। अचानक क्यों याद किया है, यह प्रश्न उनके मानस को मथने लगा। साध्वी सजनांजी गुरु चरणों में उपस्थित हुई। गुरुदेव की ठंडी नजर को देख उनका मन कुछ आश्वस्त हुआ। आचार्यवर ने बिना किसी पूर्व भूमिका के सीधे सपाट शब्दों में आदेश दियाह्न'सजनांजी! अग्रगण्य की वन्दना करो।' साध्वी सजनां जी अचानक इस अकल्पित आदेश को सुनकर अवाक् रह गई। वे श्रीचरणों में अपनी भावना प्रस्तुत करे, उससे पहले ही आचार्यवर ने फरमायाह्न'सोच क्या रही हो? बस, मैंने कह दिया ना, अभी वन्दना करो।' साध्वी सजनांजी अब क्या बोलते? 'आज्ञा गुरूणां ह्यविचारणीया'ह्नउन्होंने न चाहते हुए भी तत्काल अग्रणी पद की वन्दना कर ली।

गुरुदेव ने साध्वी पानकंवर जी (राजगढ़), साध्वी सुजाणांजी (मोमासर) एवं साध्वी इन्द्रूजी (मोमासर) को याद किया और तीनों को एक साथ साध्वी सजनांजी के सिंघाड़े की वन्दना करवा दी। पल-भर में गुरुकुलवासी साध्वियां बर्हिविहारी बन गई। यह है तेरापंथ का सुघड़ एक तंत्र। आचार्य किसी से परामर्श किए बिना ही कोई भी स्वतंत्र निर्णय कर सकते हैं। आदेश होने के बाद उसे शत प्रतिशत क्रियान्वित करना ही शिष्य का एकमात्र दायित्व है। फिर उसमें ननुनच की कोई गुंजाइश नहीं रहती।

अयाचित मंगल आशीर्वाद

विहार से पूर्व चारों साध्वियां निर्दिष्ट समय पर आचार्यवर से शिक्षा लेने गई। साध्वी सजनां जी ने निवेदन कियाह्नगुरुदेव! मैं तो पूरी तरह निश्चिन्त थी कि मुझे तो अब आपकी सेवा का ही अवसर मिलेगा। अकस्मात् गुरुदेव ने मुझ पर यह दायित्व कैसे सौंप दिया? मैं पढ़ी-भणी भी नहीं हूं फिर व्याख्यान कैसे दूंगी? न्यारा में व्याख्यान तो पहले चाहिए। आचार्यवर ने कहाह्न'व्याख्यान देने की तुम्हें क्या चिन्ता है? व्याख्यान देने का काम तो इन नानकियों का है। बस इनका ध्यान रखने का काम तुम्हारा है। खूब अच्छी तरह जाओ। कोई चिन्ता करने की जरूरत नहीं। सब हिलमिल कर रहना। अच्छा काम करना और सुखसाता रखना।' आचार्यवर के मुखारविन्द से निःसृत इन शब्दों ने न केवल साध्वी सजनांजी की समस्या का समाधान किया बल्कि सभी सहयोगी साध्वियां भी गुरुदेव के इस अयाचित मंगल आशीर्वाद को पाकर धन्य हो उठी।

इन्द्रूजी को अभी पढ़ाना है

साध्वीप्रमुखा कानकंवरजी की आंतरिक सहयोगी साध्वी झमकूजी ने भी

सबको अनमोल शिक्षाएं दी। अंत में बाल साध्वी इन्द्रूजी के सिर पर हाथ फेरते हुए कहाह्न'सजनां जी! इन्दु अभी छोटी है इसलिए सीता निकालने (आहार के बाद आंगन साफ करने का काम) परिष्ठापन करने, रंग रोगन एवं सिलाई करने का काम इन्दु से मत करवाना। साध्वी सुजाणांजी अपने आप सारा काम कर लेगी। इन्दु को अभी पढ़ाना है। उसके समय का सही उपयोग हो इसका पक्का ध्यान रखना है। इन्दु को तैयार करने की जिम्मेदारी आप पर है।' साध्वी सजनांजी ने तहत कहकर साध्वी झमकूजी के निर्देश को शिरोधार्य किया। बाल साध्वी इन्द्रुजी भावी साध्वीप्रमुखा झमकूजी के इन कृपा पूर्ण शब्दों से भाव विह्वल हो गई। साध्वी झमकूजी के इन शब्दों ने जहां बाल साध्वी को सतत अप्रमाद की दिशा में गतिशील कर दिया वहां साध्वी सजनांजी को भी अपने दायित्व के प्रति जागरूक कर दिया।

ह्नः ५ :ह्न
कथा वक्तृत्व विकास की

बर्हिविहार में एक महत्त्वपूर्ण काम होता है व्याख्यान। यह अपने आपमें एक महत्त्वपूर्ण कला है। जो इस कला में प्रवीण होता है वह निश्चित ही संघ-प्रभावना में योगभूत बनता है। वक्तृत्व का विकास निरन्तर अभ्यास, गहन प्रयास, प्रबल आत्मविश्वास और दृढ़ संकल्प शक्ति से ही संभव है। साध्वी इन्द्रुजी ने इन्हीं गुणों की बदौलत स्वयं को एक अच्छे व्याख्यानी के रूप में प्रतिष्ठित किया था। उन्होंने जिन परिस्थितियों में वक्तृत्व का विकास किया, उसकी गाथा भी उल्लेखनीय है।

व्याख्यान यात्रा का प्रथम चरण

साध्वी सजनांजी पूज्य गुरुदेव के निर्देशानुसार ग्रामानुग्राम विहार करते करते दौलतगढ़ चातुर्मास हेतु पधारे। साध्वियों का चातुर्मासिक प्रवेश देख गांव के श्रावक श्राविका प्रफुल्लित थे। क्योंकि कड़ी मेहनत के बाद उन्हें यह चातुर्मास प्राप्त हुआ था। उस समय साध्वी इन्द्रुजी सबसे छोटी थी। उन्हें दीक्षित हुए सिर्फ एक वर्ष ही हुआ था। फिर भी उन्हें व्याख्यान देने का बड़ा शौक था। व्याख्यान के बीच जब श्रावक जोर से खम्मा खम्मा बोलते तब उन्हें बड़ा आनन्द आता। वि. सं. १९९२ का चातुर्मास उनकी व्याख्यान यात्रा का प्रथम चरण था। इस वर्ष उन्होंने प्रातःकालीन सूत्र का उपदेश देना शुरू किया। उस समय यद्यपि साध्वी इन्द्रु जी को सूत्र वाचन का विशेष अनुभव नहीं था फिर भी वे अपनी तरफ से पूरी तैयारी के साथ परिषद् में उपस्थित होती।

एक ही पन्ने को परिषद् में चार बार बांचा

एक बार की घटना है। साध्वी इन्द्रुजी सूत्र का उपदेश (व्याख्यान से पूर्व आगमिक आधार पर किया जाने वाला विश्लेषण) दे रही थी। साध्वियों के प्रवास-स्थल से प्रवचन स्थल थोड़ा दूर था। साध्वी पानकंवर जी व्याख्यान देने

जाने ही वाले थे कि अचानक बरसात शुरू हो गई। मुनि चर्या के नियमानुसार खुले आकाश में जाना संभव नहीं था। खुले आकाश का रास्ता पार किए बिना प्रवचन स्थल तक पहुंचना मुश्किल था। उधर साध्वी पानकंवरजी बरसात रुकने की प्रतीक्षा में थी तो उधर साध्वी इन्द्रुजी, साध्वी पानकंवर जी के पधारने की प्रतीक्षा में थी। क्योंकि वे सूत्र का जितना पन्ना पढ़कर गई थी उतना पूरा हो गया। अब आगे क्या बोले? परिषद् में चुप होकर बैठना भी अच्छा नहीं और बोले तो क्या बोले? बड़ी जटिल समस्या थी। साध्वी इन्द्रुजी की हालत उस परीक्षार्थी की तरह हो रही थी जो परीक्षा स्थल में तो पहुंच जाता है पर प्रश्न-पत्र को देखते ही बगलें झांकने लगता है। एड़ी से चोटी तक पसीना छूट गया पर एक शब्द भी नहीं उपज रहा था। जब कुछ नहीं सूझा तो बाल साध्वी ने सूत्र के पन्नों को उलटना-पलटना शुरू कर दिया। एक श्रावक ने साध्वी इन्द्रुजी के इस उलट-फेर के क्रम को देखकर सोचाह्नलगता है छोटे महाराज नए हैं, जितनी तैयारी करके आए थे उतना सुना दिया। अब आगे सुनाने की सामग्री इनके पास नहीं है किन्तु परिषद् को देखकर कहीं ये घबरा न जाए। उसने बाल साध्वी के साहस को बढ़ाने के लिए एक तरकीब अपनाई।

बून्दाबांदी से छपरे के टीन बज रहे थे। किसी को कुछ सुनाई दे उससे पूर्व ही उस श्रावक ने निकट सरक कर धीमे स्वरों में कहाह्नमहाराज! आप तो बहुत अच्छा व्याख्यान देते है। अभी जो पन्ना पढ़कर सुनाया उसमें बड़ी रसीली बातें आई थी कृपया पुनः उसे ही पढ़कर सुनाएं तो हमें अच्छी तरह ग्रहण हो जाएगा। बाल साध्वी यह सुन खिल उठी। इन बोलों ने न केवल साध्वी इन्द्रुजी की समस्या को ही समाहित किया बल्कि उनके उत्साह को भी द्विगुणित कर दिया। उन्होंने दुगुने जोश के साथ पुनः पन्ना बांचना शुरू कर दिया। श्रावक सब तहत वचन कहकर बाल साध्वी के उत्साह को बढ़ाते रहे। ज्योंही पन्ना पूरा हुआ, श्रावक-वर्ग ने 'धन्य-धन्य' की आवाज से बाल साध्वी के व्याख्यान की प्रशंसा की। साध्वी इन्द्रुजी ने फिर तीसरी बार उसी पन्ने का पाठ सुनाया किन्तु अभी भी व्याख्यान का निर्धारित समय पूरा नहीं हुआ। बहुत बार ऐसा होता है बात-करते करते आसानी से घण्टा तो क्या रात भी पूरी हो जाती है फिर भी पता नहीं लगता। किन्तु किसी नवसिखुए को भाषण देने खड़ा कर दिया जाए तो पांच मिनट का समय भी बहुत लम्बा लगने लगता है। बाल साध्वी इन्द्रुजी को भी ऐसा ही लग रहा था। वे सोच रही थीह्नकितनी देर हो गई बोलते-बोलते! लगता है कहीं घड़ी बन्द तो नहीं हो गई। अभी तक समय पूरा क्यों नहीं हुआ?

आखिर न चाहते हुए भी साध्वी इन्द्रुजी ने चौथी बार भी उसी पन्ने का वाचन किया। तब कहीं प्रवचन का समय पूरा हुआ। ज्योंही मंगल पाठ हुआ, बरसात भी एकदम बंद हो गई। ऐसा लग रहा था जैसे प्रकृति ने भी बाल साध्वी के व्याख्यान की परीक्षा लेने के लिए यह संयोग मिलाया हो।

बाल साध्वी द्वारा चार बार वाचन किए गए एक ही पन्ने को श्रावक तन्मयता से सुनते रहे और चेहरे पर कहीं सिकन तक नहीं कि हमारा समय बेकार चला गया या महाराज ने हमें क्या सुनाया? ऐसे श्रद्धालु श्रावक, हितचिन्तक, साधु-साध्वियों के विकास में माता-पिता की तरह सहायक होते हैं।

प्रवचनोपरान्त श्रावकों ने जब साध्वी सजनां जी के दर्शन किए तब साध्वी इन्द्रुजी के व्याख्यान की प्रशंसा करते हुए कहाह्नमहाराज! आज आप तो वर्षा के कारण पधार नहीं सके फिर भी छोटे महाराज ने एक घण्टा तक बहुत बढ़िया व्याख्यान सुनाया। इनके फरमाने की कला बड़ी सरस है। लगता है बड़े होकर ये अच्छे व्याख्यानी बनेंगे। साध्वी सजनांजी ने कहाह्नयह सब पूज्य गुरुदेव का प्रताप है। अभी तो उपदेश देना शुरू किया है। धीरे धीरे व्याख्यान देना भी सीख जाएगी। साध्वी सजनांजी और श्रावकों के मध्य होने वाले इस संक्षिप्त वार्तालाप को साध्वी इन्द्रुजी ने सुना पर अपने बारे में अभी वे क्या कहते? उनका बाल मानस अपनी अक्षमता से परिचित था। एक ही पन्ने को एक घंटे के प्रवचन में चार बार बांचने की घटना ने उनके अंतःकरण को झकझोर दिया।

संकल्प वक्तृत्व शक्ति के विकास का

दिन अस्त होने के साथ साथ सूरज का प्रकाश भी धीमा पड़ने लगा। रात गहराने लगी। अंधकार का साम्राज्य व्यापक बन गया। सघन तमिस्रा के इन क्षणों में साध्वी इन्द्रुजी की चेतना के आकाश में संकल्प के नए सूरज ने जन्म लिया। अल्पज्ञता से उपजा निराशा का तमस् छिन्न भिन्न होने लगा, आशा के उजाले में तन-मन जगमगा उठा। उन्होंने उसी रात इस संकल्प से अपने आपको भावित कियाह्न'आज के बाद मुझे अपनी वक्तृत्व शक्ति का इतना विकास करना है कि कभी भी एक ही परिषद में पठित पन्ने की पुनरावृत्ति करने की नौबत न आए।' अपने संकल्प की संपूर्ति हेतु उन्होंने अथक परिश्रम भी किया।

यद्यपि उस समय तक तेरापंथ का विशेष साहित्य प्रकाशित नहीं था। अग्रगण्या साध्वी सजनांजी भी व्याख्यान देती नहीं थी। ऐसी स्थिति में व्याख्यान की सामग्री संग्रहीत करना कोई आसान कार्य नहीं था। फिर भी

उन्होंने अपनी मेहनत से, सतत स्वाध्याय कर नित नए ग्रंथों का अनुशीलन कर प्रवचनोपयुक्त सामग्री का संग्रह शुरू कर दिया। सैकड़ों छन्द, छप्पय, दोहे, मुक्तक, गीतिकाएं एवं कथाएं सीखी। उपयुक्त सामग्री को तत्काल अपनी डायरी में नोट कर लेती। कुछ ही समय में व्याख्यान-सामग्री का अच्छा संग्रह हो गया। उन्होंने अपनी उम्र के तेरहवें वर्ष में सर्वप्रथम दौलतगढ़ चातुर्मास में उपदेश देना शुरू किया था और तेसठवें वर्ष में गंगापुर मेवाड़ तक व्याख्यान देने का क्रम निरन्तर जारी रहा। लगभग पचास वर्षों तक चलने वाली यह लम्बी व्याख्यान यात्रा रसात्मकता से भरपूर थी।

मधुर व्याख्यानी

व्याख्यान की विविध विधाएं होती हैं। जैसे प्रवचन के प्रारंभ में किसी औपदेशिक गीतिका का संगान कर उसकी व्याख्या करना अथवा किसी प्रेरक संस्कृत श्लोक, पद्य, सूक्ति या गाथा का आधार लेकर दृष्टांतों के माध्यम से विश्लेषण करना या किसी विषय का विवेचन करना इत्यादि। साध्वी इन्द्रुजी ने निरन्तर अभ्यास के द्वारा उपर्युक्त सभी विधाओं में व्याख्यान देना सीख लिया। किसी रास या चरित्र का धारावाहिक रूप से क्रमशः वाचन व्याख्यान की एक सरस, आकर्षक एवं मुख्य विधा रही है। तेरापंथ धर्मसंघ में इस विधा का प्राचीन काल से बहुलतया प्रचलन है। साधु-साध्वियों के दीर्घ कालीन अथवा चातुर्मासिक प्रवास में प्रायः रामचरित्र, चन्द चरित्र, प्रद्युम्न चरित्र, महाबल-मलया चरित्र आदि अनेक पौराणिक आख्यान लोग गहरी रुचि से सुनते हैं। बार-बार सुनने एवं सुनाने पर भी इन आख्यानों का कथ्य एवं तथ्य नवीन प्रतीत होता है क्योंकि इनमें मानवीय जीवन के चिरन्तन मूल्यों का दिग्दर्शन होता है। कथा, दृष्टांत या व्याख्यान अपने आपमें नया नहीं होता, नई होती है व्याख्याता की शैली। यह शैली ही श्रोताओं के दिल को बांधने वाली होती है। साध्वी इन्द्रुजी की व्याख्यान शैली मधुर, आकर्षक एवं हृदयस्पर्शी थी। वे अधिकतर शिक्षाप्रद प्रामाणिक ऐतिहासिक घटनाएं काम में लिया करती थी।

दाम अंटा-ज्ञान कंठा

वि. सं. १९९१ की घटना है। साध्वी इन्द्रुजी को दीक्षित हुए थोड़े ही दिन हुए थे। मध्याह्न के समय साध्वीप्रमुखा कानकंवर जी पट्ट पर विराजमान थे। साध्वीप्रमुखा के उपपात में अनेक बाल साध्वियां बैठी थी। कई गांवों के लोग सामूहिक उपासना कर रहे थे। सेवार्थी भाई बहनों ने बाल साध्वी से कुछ सुनने की इच्छा प्रगट की। साध्वीप्रमुखाश्री जी ने लोगों के निवेदन पर बाल साध्वी

इन्द्रुजी को भ्रमविध्वंसनम् की हुंण्डी के कई बोल पूछे। साध्वी इन्द्रुजी को गृहस्थ जीवन से हुण्डी कंठस्थ थी। उन्होंने अस्खलित रूप से सारी गाथाएं निर्भीकता पूर्वक सुना दी। गाथाएं सुनाकर साध्वी इन्द्रुजी ज्योंही बैठने लगी, लोगों की तरफ से पुनः मांग आई कि छोटे महाराज ने बहुत अच्छा सुनाया, थोड़ी देर और सुनाएं। प्रमुखाश्रीजी ने पुनः सुनाने का निर्देश दिया। उस युग में भाषण देने का प्रचलन नहीं था। व्याख्यान देना अभी तक आता नहीं था। बाल साध्वी के सामने समस्या थी कि अब और क्या सुनाए? ज्यादा सोच विचार का समय भी नहीं था। बाल साध्वी ने एक औपदेशिक गीतिका शुरू कर दी। साध्वी इन्द्रुजी के कण्ठ भी मधुर थे। श्रोतागण भी भाव विभोर होकर बाल साध्वी के साथ साथ गाने लगे। साध्वी इन्द्रुजी ने माता सुजाणांजी की प्रेरणा से वैराग्यावस्था में ही कई औपदेशिक गीतिकाएं एवं दो-चार व्याख्यान कंठस्थ कर लिए थे। 'दाम अंटा-ज्ञान कंठा' राजस्थानी कहावत सार्थक हो गई। बचपन में सीखी हुई ढालें बाल साध्वी ने पचासों लोगों के बीच हुबहू सुना दी।

साध्वीप्रमुखाजी ने प्रसन्न स्वरों में फरमायाह्नदेखो, इन्द्रुजी! कितना अच्छा सुनाती है। अपनी प्रशंसा सुन बाल साध्वी इन्द्रुजी का उत्साह द्विगुणित हो गया। प्रमुखाश्रीजी ने आपको पारितोषिक स्वरूप नौ कल्याणक भी प्रदान किए।

इन्द्रुड़ी बोछरड़ी है

साध्वी इन्द्रुजी जब छोटी थी तब बहुत चंचल थी। आधा घण्टा भी स्थिर बैठना उनके लिए मुश्किल था। साध्वीप्रमुखा कानकंवरजी जब उन्हें किसी निश्चित स्थान पर बैठकर कंठस्थ करने का निर्देश देती तो वहां बैठकर सीखती। ज्योंही अवकाश मिलता, वे बाल साध्वियों से बातें करने लग जाती। साध्वीप्रमुखाश्री ने बाल साध्वी की यह चंचल वृत्ति देखी और एक दिन किसी प्रसंग में अनेक साध्वियों के बीच कहाह्न'इन्द्रुड़ी री सीखणै री बुद्धि तो तेज है पण आ तो बोछरड़ी घणी है।' जो लड़की अत्यधिक चंचल या उच्छृंखल होती है उसे राजस्थानी भाषा में बोछरड़ी कहा जाता है। साध्वी इन्द्रुजी ने दस वर्ष की अल्पायु में संयम का मार्ग स्वीकार किया था। संयम का पथ निश्चलता का पथ है। किन्तु संयम के पथ पर चरणन्यास करते ही साधक निश्चल बन जाए यह जरूरी नहीं। उसके लिए प्रलंब साधना की अपेक्षा होती है। फिर साध्वी इन्द्रुजी को तो अभी दीक्षित हुए एक साल ही पूरा नहीं हुआ था। अवस्था जन्य बचपन

कहां जाता? वह किसी न किसी रूप में प्रकट हो ही जाता। बाल साध्वी की वह बाल सुलभ चपलता कई बार मनोरंजन का कारण बन जाती।

बाकी काम तो नानकी संभाल लेगी

विक्रम संवत् १९९२ की घटना है। साध्वी सजनांजी ने दौलतगढ़ में प्रथम चातुर्मास सम्पन्न कर आचार्यवर के दर्शन किए। आचार्यवर ने साध्वी सजनांजी के प्रथम एवं सफल चातुर्मास के संबंध में उत्साह वर्धक शब्द फरमाए। साध्वी सजनांजी ने निवेदन की भाषा में कहाह्नगुरुदेव! आपने श्रावकों की तात्कालिक अर्ज पर चातुर्मास करने हेतु भेजा, वह कार्य गुरु-कृपा से सानन्द पूरा हो गया। अब कृपया पुनः राज में रखाने का अनुग्रह करावें। गुरुदेव ने अनुग्रह पूर्ण शब्दों में फरमायाह्नकमाऊ पूत को कौन घर में रखे? साध्वी सजनांजी ने कहाह्नगुरुदेव! मैं तो कुछ जानती नहीं। गुरुदेव ने बाल साध्वी इन्द्रुजी की तरफ संकेत करते हुए कहाह्न'सजनांजी! निगाह रखना तो जानती हो, और क्या करना है? बाकी काम तो यह नानकी स्वतः संभाल लेगी।' गुरुदेव के इन शब्दों में जहां बाल साध्वी की योग्यता के प्रति अटूट विश्वास बोल रहा था वहां साध्वी सजनां को भी अपने बहिर्विहार के संबंध में निश्चिन्तता का वरदान मिल गया।

व्याख्यान का निर्देश

साध्वी सजनांजी ने एक दिन अवसर देख साध्वीप्रमुखाश्री कानकंवरजी के दर्शन हेतु राजलदेसर जाने की भावना प्रगट की। आचार्यवर ने तत्काल राजलदेसर जाने का आदेश प्रदान कर दिया। गुरुदेव के निर्देशानुसार साध्वी सजनांजी का अपने पूरे सिंघाड़े सहित राजलदेसर आगमन हुआ। उस समय बहिर्विहारी साध्वियों के अनेक वर्ग साध्वीप्रमुखा की सन्निधि में थे। राजलदेसर में तनसुखलालजी बैद की बहुत बड़ी हवेली थी। उसके दो खण्ड थे। नीचे वाले खण्ड में प्रवासी साध्वियों और ऊपर वाले खण्ड में गुरुकुल वाली साध्वियों का प्रवास था। पार्श्ववर्ती मन्नालालजी बैद की हवेली में प्रायः प्रातः एवं मध्याह्न का व्याख्यान होता था। एक दिन साध्वीप्रमुखाश्री जी ने बाल साध्वी इन्द्रुजी को मध्याह्नकालीन व्याख्यान देने का निर्देश दिया। लोगों ने सोचाह्नआज तो नए महाराज व्याख्यान देने पधारे हैं अतः थोड़ी देर ही होगा। किन्तु बाल साध्वी ने बेधड़क एक घंटे तक व्याख्यान दिया।

बोछरड़ी बेहतरड़ी बन गई

बाल साध्वी की आवाज इतनी बुलन्द थी कि तनसुखलाल जी बैद की

हवेली तक आवाज स्पष्ट सुनाई दे रही थी। कुछ साध्वियों ने साध्वीप्रमुखाश्रीजी से विनम्र स्वरों में पूछाह्नआज आपने किसको व्याख्यान देने भेजा है? प्रमुखाश्री ने विस्मय के स्वरों में प्रतिप्रश्न कियाह्नक्यों? साध्वियों ने कहाह्नआज तो व्याख्यान यहां तक साफ सुनाई दे रहा है। साध्वी सजनांजी उस समय साध्वीप्रमुखाश्रीजी के उपपात में ही बैठी थी। प्रमुखाश्रीजी ने साध्वी सजनांजी की पीठ थपथापते हुए कहाह्न'सजनांजी! इन्द्रुड़ी बोछरड़ी तो भले ही है पर व्याख्यान देने में तो चरूड़ी है।' इतने में ही बाल साध्वी इन्द्रुजी व्याख्यान देकर प्रमुखश्रीजी को वन्दना करने पहुंची। साथ में गांव के अनेक बुजुर्ग श्रावक भी थे। सबने बाढ़ स्वर में एक साथ प्रमुखाश्रीजी से निवेदन कियाह्न'छोटे महाराज की फरमावणी तो बड़ी तेज है।' प्रमुखाश्री जी ने ठीक निशाने पर चोट करते हुए कहाह्न'इन्द्रुजी बोलने में तो हुशियार है पर बातें करने में भी तेज है।' बाल साध्वी को यह बात बहुत अप्रिय लगी। उसे यह आशा थी कि साध्वीप्रमुखाजी निश्चित ही आज कुछ बक्शीष करवाएंगे किन्तु हुआ इसके सर्वथा विपरीत। समझदार को इशारा ही काफी होता है। सब लोगों के बीच प्रशंसा के स्थान पर दिए गए हलके से उपालम्भ ने उन्हें सदा के लिए सचेत कर दिया। उन्होंने उसी क्षण से बिना मतलब इधर-उधर घूमने और व्यर्थ की बातों में समय न खोने का दृढ़ संकल्प कर लिया। इस छोटे से संकल्प ने प्रगति के द्वार खोल दिये।

ह्नः ६ :ह्न
अनुशासन की कसौटी पर

साध्वी सजनांजी का अनुशासन बहुत कठोर था। उनके अनुशासन को सहना साधना की कड़ी कसौटी थी। अनेक साध्वियां तो उनके निकट जाने में भी सकुचाती थी। इस स्थिति में उनके पास रहना कितना दुष्कर था। किसी की छोटी सी गलती भी उनके लिए बर्दाश्त से बाहर की बात थी। उनके पास रहना एक तरह से जन्ती में से निकलना था।

एक बार की बात है। साध्वी इन्द्रुजी एक गांव में सूत्र का व्याख्यान दे रहे थे। व्याख्यान का समय पूरा होने वाला था। इतने में दूसरे गांव से पांच छह ग्रामीण भाई प्रवचन सुनने के लिए आ गए। कुछ प्रमुख श्रावकों ने कहाह्न 'महाराज! पांच-सात मिनट व्याख्यान और सुनाओ, फिर दया कह देना।' साध्वी इन्द्रुजी असमंजस की स्थिति में थी। व्याख्यान आगे बढ़ाए तो साध्वी सजनांजी के उपालम्भ का भय और न सुनाए तो श्रावक नाराज। वे एक दो मिनट मौन रहे। साध्वी इन्द्रुजी को मौन देख दो-तीन जिम्मेदार श्रावकों ने कहाह्न'महाराज! व्याख्यान शुरू कीजिए। ये ग्रामीण लोग आपको सुनने के लिए ही तो इतनी दूर से पैदल चलकर आए हैं। बड़े महाराज आपको कोई उपालम्भ नहीं देंगे। यदि कुछ फरमाएंगे तो उसकी जबावदारी हम लेते हैं।' आखिर साध्वी इन्द्रुजी ने श्रावकों की अत्यधिक अर्ज पर पांच मिनट अधिक व्याख्यान दे दिया।

व्याख्यान पूरा कर साध्वी इन्द्रुजी ने साध्वी सजनांजी के दर्शन किए। साध्वी सजनांजी ने तेज स्वर में पूछाह्नव्याख्यान पूरा करने में पांच मिनट देर कैसे की? साध्वीश्री ने सविनय निवेदन कियाह्नमहाराज! आज कुछ नए भाई विलंब से आए इसलिए पांच मिनट व्याख्यान और सुना दिया। साध्वी सजनांजी ने कड़ा उपालम्भ देते हुए कहाह्न'पांच मिनट अधिक व्याख्यान किसकी आज्ञा से सुनाया? यह मनमानी मैं सहन नहीं करूंगी।' कई कठोर वाक्य कहे। व्याख्यान

उठने के बाद काफी लोग साध्वी सजनांजी के दर्शन करने आए। सबके बीच साध्वी सजनांजी ने ऐसा उपालंभ दिया कि लोग देखते रह गये। कुछ लोग तो वन्दना कर तुरन्त सीढ़ियां उतर गए। न चाहते हुए भी अब उन लोगों को आगे आना पड़ा, जिन्होंने व्याख्यान आगे बढ़ाने की जिम्मेदारी अपने ऊपर ली थी। उन्होंने हिम्मत कर कहाह्न'महाराज! साध्वी इन्द्रुजी की कोई गलती नहीं है। हम सबके अत्यधिक अनुनय पर ही साध्वीश्री ने पांच मिनट व्याख्यान ज्यादा सुनाया। यह गलती हमसे हुई है। अतः कृपया यह उपालम्भ भी हमको ही दें।'

साध्वी सजनांजी ने श्रावकों को भी उसी भाषा में उपालंभ देते हुए कहाह्न 'भले आए इसका पक्ष लेने वाले। आज्ञा तुम्हारी चलती है या मेरी? इसे तुम्हारे साथ भेजा है या मेरे साथ? फिर इसने मुझे बिना पूछे व्याख्यान कैसे आगे बढ़ाया?'

श्रावकों ने प्रश्नात्मक भाषा में कहाह्न'अगर पांच मिनट अधिक व्याख्यान हो गया तो कौन सा अनर्थ हो गया?'

'सवाल पांच मिनट या पांच घण्टे का नहीं, सवाल है आज्ञा की पालना का। मैं आज्ञा की लापरवाही बिल्कुल बर्दाश्त नहीं कर सकती। कोई जरूरत नहीं गृहस्थों को साधुओं के बीच में पंचायती करने की।'

अब कौन बोले? सब एक दूसरे को चुपचाप देखने लगे।

श्रावकों ने सोचाह्नअब तो जरूर साध्वी इन्द्रुजी बड़े महाराज के सामने बोलेंगे किन्तु यह क्या? सामने बोलना तो दूर बाल साध्वी ने तहत् के सिवाय दूसरा शब्द भी होठों से बाहर नहीं निकाला। कुछ लोगों ने सोचाह्नलोक लज्जा या भयवश भले ही छोटे महाराज ने अभी कुछ नहीं कहा हो पर अन्दर जाकर.....। किन्तु उनकी यह कल्पना उस समय बिल्कुल मिथ्या हो गई जब दो तीन मिनट बाद साध्वी इन्द्रुजी हाथों में झोली लिए हंसते-हंसते गोचरी की आज्ञा लेकर भिक्षार्थ चले गए। बाल साध्वी का सहज संयत चेहरा देखकर सब अवाक् रह गए। सबकी आशंका निर्मूल हो गई। यह दृश्य देख एक बुजुर्ग श्रावक ने कहाह्नऐसी विनीत साध्वियों से ही धर्म की शोभा बढ़ती है।

अनुशासन की प्रखर आंच

साध्वी सजनांजी का नाथद्वारा में चातुर्मास था। वहां साध्वी इन्द्रुजी की संसारपक्षीय बुआजी केसरबाई दर्शन करने आई। साध्वी सजनांजी ने साध्वी इन्द्रुजी से कहाह्न'इन्द्रुड़ी! तुम्हारी बुआ दर्शन करने आई है। पर, तुम्हें इस कमरे

से बाहर नहीं जाना है। इस कमरे के कोने में बैठकर जोर-जोर से पाठ याद करो।' साध्वी इन्द्रुजी बड़े विनम्र थे। अग्रगण्य के निर्देशानुसार वे कमरे में बैठकर बोल याद करने लगे। साध्वी सजनांजी स्वयं पहरेदार की भांति कमरे के दरवाजे के बीच में बैठ गई। अब न कोई बाहर से भीतर जा सकता और न कोई भीतर से बाहर आ सकता। केसरबाई कुछ देर तक तो भतीजी-महाराज के आने की प्रतीक्षा में बाहर बैठे रहे पर जब उन्होंने देखा यहां तो सेवा होने के कोई आसार ही नजर नहीं आ रहे हैं तो उनसे रहा नहीं गया। उन्होंने विनम्र शब्दों में साध्वी सजनांजी से पूछाह्नमहाराज! भतीजी महाराज सेवा कब करवाएंगे? यह पूछते ही साध्वी सजनांजी तड़क कर बोलेह्नसेवा करनी है तो मेरी कर लो, दर्शन तो सामने से हो रहे हैं।

केसरबाई ने सहजभाव से कहाह्नसाध्वीश्री! मैं तो इतनी दूर से भतीजी महाराज की सेवा के लिए ही तो आई हूं।

साध्वी सजनांजीह्नछोटी-छोटी साध्वियों की अभी क्या सेवा करनी है। यह अध्ययन का समय है या सेवा का?

केसरबाई विस्फारित नेत्रों से देखते रह गए। साध्वी सजनांजी के कठोर अनुशासन और साध्वी इंद्रुजी की सहिष्णुता को देखकर केसरबाई स्तब्ध रह गई।

साध्वी इन्द्रुजी ने साधुत्व के साथ केवल वेश और परिवेश को ही नहीं बदला था, अपने मन को भी बदल लिया था। इसलिए साध्वी सजनांजी के कठोर अनुशासन का पालन करने में उन्हें किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव नहीं हुआ। आचार्यश्री तुलसी की ये पंक्तियां उनके जीवन में सदा आलोक बनीह्न'अनुशासन कांटों का पथ है पर उस पथ से गुजरने वाला हर कांटा फूल बन मुस्कुरा उठता है। अनुशासन वह आंच है जिसमें तप कर हर व्यक्ति कुन्दन बन निखर उठता है।' साध्वी इन्द्रुजी ने उस आंच में अपने आपको तपाया और अपने आंतरिक व्यक्तित्व को निखारा। उनकी संवेदना की ऊर्मियां इसी बिन्दु पर केन्द्रित रहीह्न'जो कुछ हो रहा है मेरे हित के लिए हो रहा है' इसलिए वह कठोर अनुशासन उनके लिए बन्धन नहीं वरन् जीवन-निर्माण का महान् उपक्रम सिद्ध हुआ।

इसके जैसी तो यही है

वि. सं. १९९५ की घटना है एक बार साध्वी सजनांजी आचार्यश्री तुलसी की उपासना में बैठी थी। साध्वी इन्द्रुजी भी उनके साथ थी। प्रसंगवश

साध्वी इन्द्रुजी की तरफ संकेत कर गुरुदेव ने फरमायाह्नसजनां जी! नानकी की अभी यहां जरूरत है अतः इसे यहीं छोड़ दो। साध्वी सजनांजी ने उल्लसित स्वरों में कहाह्नगुरुदेव! ऐसा सौभाग्य कहां? किन्तु……।

'किन्तु परन्तु फिर क्या?' आचार्यश्री ने सीधे सपाट शब्दों में पूछा।

साध्वी सजनांजी ने कहाह्न'प्रभो! यदि इन्द्रुजी को आप राज में रखा लेंगे तो पीछे हम तीन साध्वियों में गोचरी-पानी आदि की काफी दिक्कत पड़ेगी।' आचार्यवर ने समाधान की भाषा में कहाह्न'कोई बात नहीं, एक साल के लिए हम तुम्हें दूसरी साध्वी दे देंगे। फिर तो किसी काम की दिक्कत नहीं पड़ेगी।'

'गुरुदेव! अगर आप इसके जैसी ही विनीत नानकी बगसाएं तो मैं ……।'

गुरुदेव ने मुस्कान बिखेरते हुए कहाह्न'सजनांजी! इसके जैसी तो यही है, अन्य नहीं। अतः इसे ही ले जाओ।'

सहने का परिणाम

साध्वी इन्द्रुजी ने अपनी सहिष्णुता एवं विनम्रता के कारण स्वल्प काल में ही अपने अग्रगण्य का दिल जीत लिया। पांच वर्ष पूर्व जिनके भ्रू विक्षेप मात्र से साध्वी इन्द्रुजी सहम जाते थे, उन्हीं के जीवन-काल में पांच वर्ष बाद ऐसा भी समय आया जब स्वयं साध्वी सजनांजी हर कार्य में अपनी सहयोगिनी साध्वी इन्द्रुजी की सहमति लेना अनिवार्य समझने लगे। अपने अग्रगण्य का सर्वाधिक विश्वास प्राप्त करने के बाद भी उनकी विनय और समर्पण की चेतना सदैव अपने कर्तव्य के प्रति जागरूक रही।

एक बार की बात है। साध्वी इन्द्रुजी अचानक जल्दी-जल्दी में व्याख्यान देने चले गए। व्याख्यान का आधा समय बीत जाने पर सहसा उन्हें याद आया कि आज तो बड़ी भूल हो गई। साध्वीश्री की आज्ञा लिए बिना ही व्याख्यान शुरू कर दिया। अब क्या किया जाए? वे तुरन्त व्याख्यान के बीच में ही उठे और कमरे के भीतर पुनः आज्ञा लेने गए। साध्वी सजनांजी ने कहाह्न'आज्ञा लेना भूल गई तो क्या हुआ, व्याख्यान पूरा होने के बाद मालूम कर देती।' साध्वी इन्द्रुजी ने कहाह्न'यह कैसे हो सकता है? भूल जब याद आए तभी प्रायश्चित्त कर लेना चाहिए। आप मेरे अविनय को क्षमा करें।' जैसे ही परिषद् के बीच साध्वी इन्द्रुजी ने व्याख्यान के बीच में जाने का कारण स्पष्ट किया, उपस्थित श्रावक समाज ने अनुशासन एवं आज्ञा के प्रति जागरूकता की वर्धापना की।

ह्नः ७ :ह्न
निर्भीक व्यक्तित्व

अहिंसा की आराधना के लिए अभय की साधना अत्यन्त आवश्यक है। कायर व्यक्ति कभी संयम के दुष्कर पथ पर चरणन्यास नहीं कर सकता। जिनका आत्मबल और मनोबल मजबूत है, वही संयम के पथ पर अबाधगति से बढ़ सकता है, उपसर्गों और बाधाओं से विचलित नहीं होता। आत्मबल ही एक ऐसा तत्त्व है जो साधक को निर्भीकता प्रदान करता है। निर्भीकता मुनि जीवन का विशिष्ट गुण है। साध्वी इन्द्रुजी का व्यक्तित्व बचपन से ही निर्भीक था। अनेक दैविक एवं मानवकृत उपद्रवों का उन्होंने जिस निर्भयता से मुकाबला किया वह सचमुच रोमांचकारी है।

वि. सं. १९९९ की घटना है। उस वर्ष साध्वी सजनांजी का चातुर्मास देशनोक (बीकानेर) में था। वहां से चार मील दूर 'राशीसर' गांव में साध्वी तखतांजी का चातुर्मास था। तेरापंथ धर्मसंघ के साधु-साध्वियों में पारस्परिक सौहार्द, स्नेह, सेवा और सहयोग के संस्कार कूट कूट कर भरे हैं। जहां कहीं भी संघ के साधु-साध्वियां मिल जाते हैं, उनका रोम-रोम पुलक उठता है। कवि की निम्न पंक्तियां वहां चरितार्थ हो उठती हैह्न

चार मिले चौसठ खिले, बीस रहे कर जोड़।
सज्जन से सज्जन मिले, पुलकित सात करोड़।।

आयु-वृद्ध एवं दीक्षा-वृद्ध साध्वी तखतांजी के प्रति साध्वी सजनांजी के मन में अत्यन्त अहोभाव था। अतः आप उस चातुर्मास में साध्वी तखतांजी से मिलने पांच बार राशीसर पधारे। बार-बार आत्मीय मिलन का यह दृश्य देखकर श्रावक श्राविकाओं का हृदय भी आह्लादित हो उठता। दोनों ही क्षेत्रों में साध्वियों के अथक परिश्रम से अच्छा उपकार हुआ। भाई बहनों ने काफी तात्विक थोकड़े कंठस्थ किए। तपस्याएं भी अच्छी हुई। एक एक कर दिन निकलते गए। चातुर्मास अब समाप्ति के अंतिम चरण पर था। किन्तु साध्वी

इन्द्रुजी का एक बार भी राशीसर पदार्पण नहीं हो सका। साध्वी तखतांजी ने भी अनेक आर साध्वी इन्द्रुजी को भेजने का अनुरोध किया। जब कभी आप जाने के लिए सोचती तो यह प्रश्न उभरताह्न प्रातःकालीन प्रवचन कौन दे? साध्वी सजनांजी कभी व्याख्यान फरमाते नहीं थे। प्रातःकालीन व्याख्यान का दायित्व इन्द्रुजी का था। उसे किसे संभलाए?

एक दिन देशनोक का नाहटा परिवार सुबह-सुबह मंगलपाठ सुनने आया। साध्वी सजनांजी ने इतने बड़े परिवार को एक साथ देखकर पूछाह्नआज सब मिलकर कहां जा रहे हो? मौका देख उन लोगों ने एक स्वर में कहाह्नमहाराज! आज तो हमारे महाराज को भी भेजने की कृपा करो। साध्वी सजनांजी ने विस्मित स्वरों में पूछाह्नतुम्हारे महाराज कौन से हैं? उनमें से एक व्यक्ति ने कहाह्नसाध्वी इन्द्रुजी हमारे महाराज हैं। क्योंकि हम नाहटा हैं और साध्वी इन्द्रुजी नाहटा परिवार की बेटी है अतः आज तो उन्हें ही भेजने की कृपा करें। साध्वी सजनांजी ने सोचाह्नशायद गोचरी की अर्ज कर रहे हैं अतः तत्काल हां भरते हुए कहाह्न'मेरी कोई मनाही नहीं, जब चाहो ले जाओ तुम्हारे महाराज को।' उसी समय साध्वी इन्द्रुजी को साध्वी सजनांजी ने फरमायाह्न'यह खड़ा तुम्हारा सारा परिवार। गोचरी की अर्ज कर रहा है। पात्री झोली में डालो और झटपट गोचरी करके आ जाओ ताकि व्याख्यान में देरी न हो।'

नाहटा बंधुओं ने कहाह्न'महाराज! हम सब तो आज राशीसर जा रहे है। कृपया साध्वी इन्द्रुजी को भी वहीं गोचरी भिजवाने का अनुग्रह करावें।'

दो अपशकुन

ज्ञातिजनों का अनुरोध, अपने वचन का निर्वाह और साध्वी तखतांजी का विशेष आग्रहह्नसाध्वी सजनांजी ने साध्वी इन्द्रुजी को राशीसर जाने का आदेश दे दिया। साध्वी तखतांजी को साध्वी इन्द्रुजी के आगमन की सूचना देने नाहटा परिवार बैलगाड़ी में रवाना हो गया। साध्वी इन्द्रुजी ने कुछ देर बाद वहां से विहार किया। जैसे ही आपने ठिकाने से बाहर पैर रखा, एक भाई ने पूछाह्न'आज आप कठै पधार रह्या हो?' थली प्रदेश में कठै शब्द का उच्चारण अशुभ माना जाता है। 'कठकारा' सुनते ही साध्वी इन्द्रुजी के बढ़ते पांव कुछ क्षण के लिए वहीं रुक गए। आपने इष्ट स्मरण कर पुनः राशीसर के लिए प्रस्थान किया। आपके साथ साध्वी पन्नांजी (राजलदेसर) थे। दोनों साध्वियों ने दो तीन कदम रखे ही होंगे कि पीछे से साध्वी सजनांजी ने आवाज दीह्नइन्द्रुजी! क्या पथवाहक

(काशीद) साथ है? शकुन शास्त्र के अनुसार आगे जाते हुए व्यक्ति को पीछे से कोई आवाज दे तो लक्षित कार्य में बाधा आने की संभावना रहती है।

दूसरे रास्ते पर

साध्वी सजनांजी की आवाज ज्योंही साध्वी इन्द्रुजी के कानों में टकराई, उन्हें बड़ी झुंझलाहट आई। यह क्या? आज पहली बार तो जाने का मुहूर्त्त निकला और जाते जाते दो अपशकुन तो हो गए। अग्रगण्य को कहे भी तो क्या? उन्होंने तुरन्त पीछे मुड़कर निर्भीकता दिखाते हुए कहाह्न'महाराज! किसी व्यक्ति को साथ लेने की जरूरत क्या है? मैं तो खुद ही रास्ता जानती हूं। वैसे नाहटा परिवार की बैलगाड़ी आगे आगे जा रही है। आगे का रास्ता गडार (बैल गाड़ी के पहियों से चिह्न) के अनुसार पार करते जाएंगे।' यों कहकर साध्वी इन्द्रुजी ने द्रुतगति से राशीसर की ओर प्रस्थान किया, दोनों साध्वियां रेलवे पटरी के रास्ते पर तेजी से चल रही थी। लगभग दो कि. मी. का रास्ता पार हो गया। दोनों साध्वियों ने दूर दूर तक दृष्टि पसार कर देखा पर कहीं भी बैलगाड़ी की परछाई तक नजर नहीं आई। साध्वी इन्द्रुजी ने सोचाह्नलगता है बैलगाड़ी बहुत आगे निकल गई है। अब उसे पकड़ पाना मुश्किल है। इस रास्ते से पहुंचने में ज्यादा समय लगेगा। अच्छा हो खेतों के रास्ते से जल्दी पहुंच जाएं। यह चिन्तन कर आपने बाड़ के पास से गुजरने वाली संकरी पगडण्डी का मार्ग ले लिया। कुछ दूरी पर खेत में काम करने वाला एक किसान भाई मिला। उसने नमस्कार किया, पूछाह्न'महाराज! आप इधर किधर जा रहे हैं?' साध्वी इन्द्रुजी ने कहाह्न'भाई! हम राशीसर जा रहे हैं।'

'महाराज! यह रास्ता आपको किसने बताया? यह तो जाटों की ढाणी की तरफ जाता है। राशीसर तो रेलवे लाइन का रास्ता सीधा जाता है।'

साध्वी इन्द्रुजी ने लंबा श्वास छोड़ते हुए कहाह्न'अरे! हमने तो उस रास्ते को छोड़कर जल्दी पहुंचने के लिए यह रास्ता लिया और हुआ उल्टा। आए थे चक्कर टालने के लिए, किन्तु पड़ा दुगुना चक्कर। खैर, अच्छा हुआ, जो तुम यहां मिल गए वरना हम तो आज कहां पहुंच जाते? कुछ कहा नहीं जा सकता।'

उपद्रव सर्प का

अब साध्वी इन्द्रुजी ने पुनः द्रुतगति से रेलवे लाइन की ओर कदम बढ़ाए। थोड़ी ही देर में दोनों साध्वियां रेलवे-पटरी पर पहुंच गई। समस्या की एक घाटी

को पार कर उन्होंने निश्चिन्तता की सांस ली पर उन्हें क्या पता था कि फिर कोई दूसरी समस्या उनकी परीक्षा लेने उपस्थित होने वाली है। राशीसर लगभग डेढ़ कि. मी. दूर रहा तब अचानक भैंस के पाड़े की चीख जैसी भयानक आवाज साध्वी इन्द्रुजी के कानों से टकराई। उन्होंने तत्काल पीछे मुड़कर देखा तो दंग रह गए। एक विशालकाय भयंकर काला नाग छलांगे भरता हुआ साध्वी इन्द्रुजी की तरफ सरपट दौड़ा आ रहा था। असि-फलक की भांति चमचमाती जीभ, अंगारे बरसाती रक्तिम आंखें, हृदय को कंपा देने वाली भीषण फुफकार, डरावनी विकराल मुद्राइन सबकी समन्विति साक्षात् रौद्र रस को प्रकट कर रही थी। ऐसा लग रहा था मानों स्वयं काल देव सर्प के रूप में डसने को उद्यत हो रहा है। जैसे ही साध्वी इन्द्रुजी की उस पर दृष्टि पड़ी, सर्प और अधिक क्रुद्ध हो गया। उसने पहले क्षण में पैर से लेकर मस्तिष्क तक तीक्ष्ण दृष्टि बाण फेंका। दूसरे क्षण विष-बुझे फण को ऊपर उठाते हुए सुदूर आकाश-प्रदेश की ओर गेंद की भांति जोर से उछाला। तीसरे क्षण बम विस्फोट की तरह तेज धमाके के साथ धड़ाम से धरती पर गिरा। दूसरी तीसरी बार भी सर्प ने इसी प्रकार की आवृत्ति की।

सर्प को संबोधन

साध्वियां ज्यों-ज्यों तेज चलकर आगे निकलने की कोशिश कर रही थी, सर्प भी त्यों-त्यों आग की लपट की तरह निकट होता जा रहा था। इस भयावह दृश्य को देख दोनों साध्वियां क्षण भर के लिए तो भयभीत हुई किन्तु सर्प की इस विचित्र क्रिया को देख साध्वी इन्द्रुजी ने सोचाइनिश्चय ही यह कोई दैविक उपद्रव है। उन्होंने पटरी के बीचोंबीच चलते हुए साध्वी पन्नांजी का हाथ पकड़ा और एक तरफ खड़ा करके कहाइ'लगता है यह कोई दैविक परीक्षा की घड़ी है। अब डरने से काम नहीं चलेगा। आप मन को मजबूत बनाकर तन्मयता से 'ॐ भिक्षु ॐ अरिहन्त देव' का जप करें।' साध्वी इन्द्रुजी ने सर्पाभिमुख हो नागकुमार को संबोधित करते हुए कहाइ'हे नागराज! मन वचन काया से किसी भी प्रकार की हमारी ओर से आशातना हुई हो तो हम सरल हृदय से खमतखामणा करते हैं। अर्हत् प्ररूपित शुद्ध धर्म को हमने स्वीकार किया है। आचार्य भिक्षु के निर्मल मार्ग का अनुसरण किया है। संयम, शील और तप की निरतिचार आराधना की है। हमारे मन में न जीने का मोह है, न मरने का भय। देव, गुरु और धर्म की शरण हमारे साथ है। इतनी देर तो तुम हमारे पीछे दौड़ रहे थे। लो अब हम स्वयं तुम्हारी ओर मुंह करके खड़े हैं। जो कहना है स्पष्ट कहो,

वरना अपनी देव माया अपने तक सीमित रखो।'

श्रद्धा का चमत्कार : साधना का प्रभाव

साध्वी इन्द्रुजी के यह कहते ही सर्प पर जैसे जादू हो गया। कुछ क्षण पहले जो कराल काल सा रौद्र रूपधारी प्रतीत हो रहा था वह अब लगभग ४-५ फुट की दूरी पर बिल्कुल शांत, श्रवणोत्सुक मुद्रा में फन ऊपर तानकर सीधा बैठ गया। चमकीले सिन्दूरी रंग में चमकते काले धब्बों वाला खूब लम्बा चौड़ा मोटा ताजा वह डरावना सर्प अब इतना शांत एवं निश्चल बैठा था जैसे कोई योगी ध्यानासन में स्थित हो। यह था संयमी आत्माओं के तप-त्याग और शील का प्रभाव। यह था जप का अद्‌भुत चमत्कार।

सर्प अभी भी साध्वियों की ओर टकटकी लगाए देख रहा था और साध्वियां उसे तन्मयता से जप सुना रही थी। लगभग दस-पन्द्रह मिनट तक यही स्थिति बनी रही। फिर साध्वी इन्द्रुजी ने जप के क्रम को विराम देते हुए कहाह्न'हे सर्प देव! अब हम आगे जा रहे हैं। भविष्य में कभी किसी को इस प्रकार मत सताना। एक बार फिर तुमसे शुद्ध अंतःकरण से क्षमायाचना करते हैं।' सर्प जैसे साध्वीश्री के शब्दों को एक दम ध्यान से सुन रहा था। वह बिल्कुल मौन बैठा था। साध्वीश्री ने देखा, लगता है अभी तक इसका सेवा करने का मन है। उन्होंने फिर कुछ आगम के पद्य सुनाए लेकिन सर्प न हिलता है न डुलता है और न ही इधर-उधर दृष्टि घुमाता है। पूर्ण कायोत्सर्ग की मुद्रा। आखिर दोनों साध्वियों ने मंगलपाठ सुनाकर वहां से प्रस्थान किया। कुछ दूर जाकर साध्वियों ने पीछे मुड़कर देखा तो सर्प ज्यों का त्यों बैठा दिखाई दिया। साध्वियों ने सोचाह्नयह कहीं छलांग भरकर हमारे पीछे न आ जाए इसलिए दो क्षण रुक कर दृष्टि घुमाकर पुनः तीन बार विघ्न हरण मंत्र का जप किया और मंगलपाठ सुनाया। देखते-देखते सर्प कहां अदृश्य हो गया, पता नहीं लगा।

साध्वी इन्द्रुजी ने हिम्मत और साहस से समस्या की दूसरी घाटी को पार कर दिया किन्तु अब उनका पूरा शरीर ढीला पड़ने लगा। कदमों की गति श्लथ हो गई। यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि जब किसी भारी भरकम हादसे को आदमी अचानक झेलता है तो उसके बाद उस घटना का प्रभाव लम्बे समय तक मन-मस्तिष्क और शरीर को असंतुलित कर देता है। साध्वी इन्द्रुजी के साथ भी यही हुआ। जिस किसी तरह उन्होंने सर्प के उपद्रव का मुकाबला तो कर लिया किन्तु अब एक कि.मी. भी चलना उनके लिए अत्यन्त मुश्किल हो गया। एक ओर रेलवे पटरी के बीच बिखरे नुकीले पत्थर, दूसरी ओर पटरी के आसपास

कंटीली झाड़ियों के तीखे कांटे। तीसरी ओर सूरज का मध्याकाश में परिभ्रमण। ऊपर से तेज धूप, नीचे अंगारे सी जलती धरती और बीच में गर्म तवे सा तपता शरीर, प्यास से सूखते कंठ, दर्द से फटता सिर, जलती आंखेइन सारी दुविधाओं के बावजूद एक ही लक्ष्य, जैसे तैसे राशीसर पहुंचना। दोनों साध्वियां धीमे धीमे रास्ता पार कर रही थी।

सबने संतोष की सांस ली

साध्वी तखतांजी साध्वी इन्द्रुजी के आने की सूचना सुनकर बहुत सुख हुए। पर जब ग्यारह बजे तक दोनों साध्वियां नहीं पहुंची तो साध्वी तखतांजी को काफी चिन्ता हुई। चार मील के रास्ते में इतना लम्बा समय कैसे लगा? रास्ता भूल गये या कोई तकलीफ हो गई? नाना विकल्प उभरने लगे। आखिर कुछ श्रावक सामने जाने के लिए तत्पर हुए, वे दो-चार कदम चले होंगे कि दोनों साध्वियां ठिकाने पहुंच गई।

साध्वी इन्द्रुजी का रंग गोरा तो था ही, तेज धूप में चलने से लाल सूर्ख हो गया। हृदय की धड़कन तेज हो गई। सांस फूलने लगी। साध्वी तखतांजी ने तुरन्त नब्ज देखकर कहाह्न'नानकी को तो तेज बुखार है।' अल्पाहार और अल्प विश्राम के बाद साध्वी तखतांजी ने साध्वी इन्द्रुजी से कहाह्न'नानकी! तुम्हारा शरीर तो भट्टी की तरह सिक रहा है। सजनांजी ने तुम्हें इतनी तेज बुखार में कैसे भेज दिया?' तब साध्वी इन्द्रुजी ने हांफते स्वरों में पथवर्ती समग्र वृत्तान्त बताते हुए कहाह्न'साध्वीश्री! आज तो हम बच गए, वही बड़ी बात है। वरना, उपद्रव तो ऐसा था कि जीवन लीला ही समाप्त हो जाती। सर्प का समग्र वृत्त सुनकर साध्वी तखतांजी के भी रोंगटे खड़े हो गए। उन्होंने साध्वी इन्द्रुजी की पीठ थपथपाते हुए कहाह्न'नानकी है तो हिम्मतवाली। ऐसे ही क्षणों में साधु की साधना एवं साहस की परीक्षा होती है। इन्द्राई! आज तू इस परीक्षा में उत्तीर्ण हो गई।'

साध्वी इन्द्रुजी ने हंसते हुए कहाह्न'महाराज! मैं तो पहली बार आपके दर्शन के लिए आई और पहली बार में ही मेरी जबर्दस्त परीक्षा हो गई। इस परीक्षा को तो मैं जिन्दगी भर भुला नहीं पाऊंगी।' साध्वी तखतांजी ने हास्ययुक्त स्वरों में कहाह्न'नानी! घणा दिना स्यूं अड़ीकतां-अडीकतां आज आई है। ईं वास्तै ही इसी कड़ी परीक्षा हुई है।'

चातुर्मास काल के कारण साध्वी इन्द्रुजी को पुनः उसी दिन देशनोक पहुंचना था। अतः थोड़ी देर पारस्परिक बातचीत एवं विश्राम के बाद साध्वीश्री

ने तेज बुखार में भी दोपहर में ठीक तीन बजे पुनः वहां से विहार कर दिया। लौटते वक्त भी वही पथ था। साध्वी इन्द्रुजी ने चारों तरफ दृष्टि दौड़ाई पर कहीं भी वह सर्प नजर नहीं आया। संध्या को सूर्यास्त होते-होते दोनों साध्वियां देशनोक पहुंच गई। थकान आई तो इतनी गहरी कि साध्वी इन्द्रुजी के गले से तो शब्द भी मुश्किल से निकल रहा था। साध्वी सजनांजी ने दोनों के क्लान्त एवं श्रान्त चेहरे को देखकर पूछाह्न'क्या बात है इन्द्रु! आज बोलती कैसे नहीं? क्या कोई तकलीफ है या साध्वी तखतांजी ने कुछ कह दिया?' साध्वी इन्द्रुजी ने कहाह्न'महाराज! क्लान्ति का कारण तो दूसरा ही है। उसे प्रतिक्रमण के पश्चात् सुनाऊंगी।' प्रतिक्रमण के पश्चात् साध्वी इन्द्रुजी से पूरा घटनाक्रम सुनकर साध्वी सजनांजी दंग रह गई। उन्होंने विस्मित स्वरों में कहाह्न'लगता है यह कोई भीषण उपद्रव था किन्तु अरिहन्तदेव एवं भिक्षु स्वामी के जप से तुम बच गई। वरना, न जाने क्या होता? खैर, राशीसर से देशनोक की यह लघु यात्रा तुम्हें जीवन भर याद रहेगी। ऐसे विकट क्षणों में साधना की सही कसौटी होती है। जो निर्भीक और साहसी होते हैं वे ही ऐसे उपद्रवों का मुकाबला कर सकते हैं।'

साध्वी इन्द्रुजी ने महज इक्कीस वर्ष की उम्र में इस भीषण उपद्रव में जिस निडरता का परिचय दिया, वह एक उत्प्रेरक घटना-प्रसंग बन गया।

एक खतरनाक सफर : डाकुओं का उपद्रव

वि. सं. २००७ की घटना है। साध्वी सजनांजी ने जोजावर (मारवाड़) चातुर्मास परिसम्पन्न कर गुरु दर्शनार्थ जयपुर की ओर प्रस्थान किया। चलते-चलते रास्ते में राणावास आया। आपको दूसरे दिन राणावास से सीधा मांडा गांव पहुंचना था। धीरे चलने वाली दो साध्वियों ने पहले विहार कर दिया। साध्वी सजनांजी, साध्वी इन्द्रुजी आदि चार साध्वियों ने देरी से विहार किया। काशीद भी उन साध्वियों के साथ चला गया। राणावास से मांडा का मार्ग बड़ा विकट था। उस समय सड़कें नहीं थी। कहीं चौड़ा रास्ता था तो कहीं संकरी संकरी गलियां। कहीं ऊबड़-खाबड़ पथरीली जमीन तो कहीं सीधी सपाट रेतीली पगडण्डियां। कहीं ऊंची नीची झाड़ियां और उनके कहीं तीखे तीखे कांटे तो कहीं बड़े-बड़े भाटे। दूर दूर तक कोई बस्ती नहीं। चारों ओर गहन सुनसान, कहीं इन्सान का नामोनिशान तक नहीं। साध्वी सजनां जी ने सोचाह्नशीघ्र इस भीषण पथ को पार कर लें तो अच्छा रहे। मार्ग की शून्यता को देख साध्वियों का कलेजा भी धड़क रहा था। सबके कदम द्रुतगति से गंतव्य की तरफ बढ़ने लगे।

यह एक मनौवैज्ञानिक सत्य है जब निकट भविष्य में कोई अनिष्ट घटना घटित होने वाली होती है तो मनुष्य की जैविक घड़ी उसकी सूचना पहले ही दे देती है। साध्वी सजनां जी के मन में उठने वाली शंका उस समय सही निकली जब दो-चार कदम चलते ही अचानक उनके कानों में ऊंटों की आवाज टकराई। साध्वी सजनांजी ने ज्योंही पीछे मुड़कर देखा तो एक बारगी एड़ी से चोटी तक सिहर उठी। यह क्या ऊंटों पर सवार दो जवान उनका पीछा कर रहे हैं। नशे में धुत, लाल आंखें, हाथों में चमकती बड़ी पिस्तोलें, तनी हुई बड़ी बड़ी बंटदार मूंछे, सिर पर आंटेदार मोटी पाग, मुख पर बंधा काला कपड़ा, डरावनी शक्ल। उनके हावभाव से स्पष्ट झलक रहा था कि ये कोई लंपट प्रकृत्ति के व्यक्ति हैं। किन्तु यथार्थ में ये कौन हैं? कहां से आए हैं? क्यों आए हैं। इत्यादि अनेक यक्ष-प्रश्न मन की धरती पर एक साथ उग रहे थे। पर, पूछे कौन?

जब साध्वियां धीमी गति से चलती तब वे धीमे चलते। जब तीव्रगति से चलती तब वे तेजी से चलते। स्थिति का आकलन करते हुए साध्वी सजनां जी ने कहाह्न'इन्द्रुजी! ये तो बदमाश लोग लग रहे हैं।' साध्वीश्री कुछ कहे उससे पहले ही साध्वी इन्द्रुजी ने प्रसंग बदलते हुए कहाह्न'महाराज! ये तो भले आदमी हैं। हमारा भला ही तो सोच रहे हैं। मार्ग संकरा है। आगे निकलने से हमारे कहीं चोट या खरोंच लग सकती है इसलिए आगे नहीं निकल रहे हैं। इतनी देर इस सूने मार्ग में अपन अकेले चल रहे थे, अब इन अच्छे भाइयों का साथ हो गया तो सुरक्षित आगे पहुंच जाएंगे।' साध्वी इन्द्रुजी ने इन शब्दों का प्रयोग इसलिए किया कि शायद ऐसा कहने से उनकी नीयत बदल जाए पर हुआ विपरीत। यह सुनते ही एक जवान ने व्यंग्यात्मक भाषा में कहाह्नहां, हम कैसे हैं? इसकी पहचान कराने के लिए ही तो तुम्हारे साथ चल रहे हैं। खैर, तुम सबको तो हम अच्छी तरह अगले गांव पहुंचा देंगे। साध्वियों ने सोचाह्नअब बोलने में कोई फायदा नहीं। ॐ भिक्षु और अरिहन्त देव की शरण हमारे साथ है। जो हो रहा है उसे चुपचाप देखते जाओ।

साध्वियों ने तेजी से कदम उठाए। चलते-चलते कुछ ही देर में चौड़ा रास्ता आ गया। आगे-आगे चारों साध्वियां और पीछे वे दोनों उष्ट्रारोही जवान। बीहड़ पथ को देख दोनों आपस में फुसफुसाने लगे। उनकी अभद्र चेष्टाओं को देख साध्वी इन्द्रुजी ने साध्वी सजनां से कहाह्न'महाराज! ये तो डाकू लग रहे हैं। इतनी देर हो गई फिर भी हमारा पीछा नहीं छोड़ रहे हैं। अब यदि हम इसी तरह चुपचाप चलते रहे तो संभव है ये कुछ भी अवांछित करने पर

उतारू हो जाएं। गांव अभी दूर है और श्रावकों को हमारे आगमन की सूचना नहीं है अतः संभाल करने भी यहां कौन आए?'

साध्वी इन्द्रुजी के समयोचित सुझाव को स्वीकार कर साध्वी सजनांजी ने सहयोगिनी साध्वियों को निर्देश दियाह्नसब यहीं पर रुक जाओ और बोझ (सामान) को उतारकर जमीन पर रख दो। साध्वियों ने एक क्षण का विलम्ब किए बिना तुरन्त आदेश का पालन किया। सामान के चारों ओर साध्वियां घेरा लगाकर खड़ी हो गई। साध्वियां ज्यों ही रुकी, ऊंट पर आरूढ़ जवान भी रुक गए। स्थिति की विकटता को भांपते हुए साध्वी सजनांजी ने कहाह्न'साध्वियों! सावधान! यह हमारी परीक्षा की घड़ी है। किसी को घबराने या डरने की जरूरत नहीं। यदि शील सुरक्षा का प्रसंग उपस्थित हो तो हमें संथारा-संलेखना कर आत्म व्युत्सर्ग कर देना चाहिए। यदि समय पर अन्य कोई उपाय कामयाब न हो सके तो नांगलों की डोरी को गले में डालकर प्राणत्याग किया जा सकता है। यह हमारी प्राचीन आगमिक परम्परा है। जो व्रत को तोड़ देता है, वह जीवित भी मृत के तुल्य है। बस अब तो स्वामीजी का जप ही हमारा सच्चा रक्षक है।' यों कह साध्वी सजनांजी ने ॐ भिक्षु का जप शुरू कर दिया। सहयोगिनी साध्वियां भी उनके साथ एक स्वर से जप की धुनी रमाने लगी।

स्तम्भीभूत हो गई पिस्तौल

डाकुओं ने सोचाह्नसहज ही ये ढूंढणियां ठहर गई हैं तो हमें भी अविलम्ब अपना काम कर लेना चाहिए। अपनी निकृष्ट योजना को अंजाम देने के लिए वे साध्वियों के ठीक पास बाईं साइड में ऊंटों को बिठाकर नीचे उतरने की कोशिश करने लगे किन्तु वे ऊंटों की मोरी (बांधने की डोरी) खींचते खींचते थक गए पर ऊंट तो घुटनों को बिल्कुल मोड़ते ही नहीं। दोनों ऊंट जैसे तनकर सीधे खड़े हैं। मानों उन्हें बैठने से कोई रोक रहा हो। डाकू ज्यों-ज्यों ऊंटों की मोरी को खींचते त्यों त्यों वे जोर-जोर से चिल्लाते परन्तु बैठते नहीं। एक अजीब किस्म की चिल्लाहट को सुन वे अचम्भे में पड़ गए। न तो ऊंट बीमार लगते हैं, न कोई भूत प्रेत की छाया का असर दीखता है फिर कारण क्या है। लगता है इन ढूंढणियों (सतियों) ने अपने मंत्र बल से ऊंटों की टांगों को स्तम्भित कर दिया है। खैर, ये तो जानवर हैं जो इनकी मंत्र शक्ति के वश में हो गए पर हम तो बहादुर राजपूत हैं, हर हालत में अपनी मंशा पूरी करके छोड़ेंगे। यों चिन्तन कर दोनों जवानों ने अपनी अपनी पिस्तौल निकाली और साध्वियों की तरफ निशाना बांधकर पिस्तौल का घोड़ा दबाया पर आश्चर्य, दो तीन बार प्रयत्न

करने पर भी बन्दूक से एक भी गोली नहीं छूटी। मानों पिस्तौल भी स्तम्भित हो चुकी थी। पिस्तौल सही है, पिस्तौल को दबाने का तरीका सही है फिर भी गोली कैसे नहीं चली? यह प्रश्न बार-बार उनके मस्तिष्क में टकरा रहा था पर जबाब कौन दे?

अहिंसा का विजय

आदमी का अहं इतना प्रबल होता है कि वह जल्दी से हार मानना पसंद नहीं करता। और कोई उपाय कामयाब बनता नजर नहीं आया तो वे ऊंट के पलान पर खड़े हुए और एक ही छलांग में सीधे जमीन पर कूदने की चेष्टा करने लगे। ज्योंही जमीन पर कूदने के लिए पलान से बाहर एक पैर निकाला कि बांयीं तरफ सोन चिड़िया बोलने लगी। उन्होंने सोचाह्नअपशकुन हो रहा है। यदि हमने उनके (साध्वियों) साथ कुछ अभद्र या अश्लील व्यवहार किया तो भयंकर दुष्परिणाम भोगने पड़ेंगे। दोनों की नीयत में सहसा ऐसा बदलाव आया कि तत्काल उन्होंने अपने ऊंटों को पीछे की ओर मोड़ दिया और दूसरे रास्ते से ऊंटों को तेजी से आगे निकालकर चले गए। यह थी अहिंसा की विजय और यह था आचार्य भिक्षु के नाम का दिव्य प्रभाव।

ज्योंही ऊंट वाले पीछे मुड़े, साध्वियों को लगा जैसे मौत का न्यौता देने आए यमदूत बिना कुछ कहे वापस चले गए। सबने निश्चिन्तता की सांस ली। साध्वी इन्द्रु जी ने साध्वी सजनांजी से कहाह्नमहाराज! वे दोनों ऊंट वाले तो चले गए हैं। अब हमें भी यहां से प्रस्थान करना चाहिए। साध्वी सजनांजी के मन में अब भी संदेह का सर्प फन दबाए बैठा था। उन्होंने कहाह्न'इन्द्रुजी! उनका क्या भरोसा? संभव है वे हमें चकमा देने के लिए आगे जाकर कहीं झाड़ियों में छिप जाएं। अतः जब तक काशीद न आए तब तक यहीं रुकना उचित है।'

साध्वी इन्द्रुजी ने कहाह्न'साध्वीश्री! यदि काशीद देरी से आया तो अपन कब तक इस खुले जंगल में बैठे रहेंगे? धूप भी तेज है और प्यास भी गहरी लग चुकी है। यदि संकट आना ही है तो यहां बैठे भी आ सकता है और नहीं आना है तो वहां भी कुछ नहीं हो सकता।'

साध्वी इन्द्रुजी की बात साध्वी सजनां जी को जंच गई। उन्होंने तत्काल साध्वियों को विहार का आदेश दिया। साध्वियों ने तुरन्त बोझ कंधों पर रखा और विहार कर दिया। थोड़ी सी दूर चले होंगे कि सामने के मार्ग से एक आदमी आता हुआ दिखाई दिया। 'दूध का जला छाछ को भी फूंक फूंक कर पीता है'ह्नसाध्वियों ने सोचा कहीं वे ही जवान तो रूप बदलकर नहीं आ गए हैं? क्षण

भर के लिए साध्वी सजनांजी ने बढ़ते कदमों को रोका। फिर सोचाह्नरुकने से क्या होगा? चलना तो पड़ेगा ही चाहे कोई भी क्यों न आए। स्वामीजी का पहरा निरन्तर हमारे साथ है। हमारा कौन क्या बिगाड़ सकता है? इष्ट स्मरण कर साध्वियों ने तेजी से कदम उठाए। ज्योंही उस आदमी की आकृति दिखाई दी, भ्रम दूर हो गयाह्न'अरे हम तो व्यर्थ ही डर रहे थे। यह तो काशीद ही है।'

'महाराज! आपने तो बहुत देर कर दी। एक घण्टे से साध्वियां आपका इन्तजार कर रही हैं। रोज आप देरी से विहार करके भी आगे पधारे जाते हैं। आज क्या बात हुई? अभी तक क्यों नहीं पधार? किसी की तबीयत खराब हो गई या रास्ता भूल गए। मुझे तो बड़ी चिन्ता हुई।' काशीद ने हांफते-हांफते एक ही सांस में सारी बात कह डाली।

साध्वी सजनांजी ने संक्षेप में डाकुओं की घटना का जिक्र करते हुए कहाह्न'भाई! आज तो दिन अच्छा था। हम गुरु कृपा से बाल-बाल बच गए वरना न जाने क्या अघटित हो जाता?'

'अच्छा तो पधारो। मैं दोनों साध्वियों को सुरक्षित स्थान पर बिठाकर आपकी खबर लेने आया हूं। अब आपके पधारने पर ही वे विहार करेंगे।' यह सुन साध्वी सजनांजी ने सत्वर कदम बढ़ाए। एक सघन छायादार वृक्ष के नीचे दोनों साध्वियां विश्राम कर रही थी। साध्वी सजनांजी आदि चारों साध्वियां वहां पहुंची। छहों साध्वियों ने एक साथ मांडा के लिए विहार कर दिया।

गांव के बीच से जाने वाला मार्ग सीधा निकलता था अतः साध्वियों ने वही रास्ता लिया। जैसे ही साध्वियों ने विहार किया, वे ही दोनों जवान गांव के मध्य से गुजरते हुए नजर आए। साध्वियों ने काशीद से कहाह्नये दोनों कौन हैं? पूछकर पता लगाओ। साध्वियों का संकेत पा काशीद उनके पीछे वेग से दौड़ा। उसने जोर से आवाज लगाते हुए कहाह्नठाकुर साहब! ठहरो! ठहरो! ठहरो! पर उन्होंने तो जैसे एक बार भी पीछे मुड़कर न देखने का संकल्प ले लिया था। जोर जोर से आवाजें लगाते लगाते काशीद का गला थक गया। ऊंट वाले क्यों सुनते काशीद की आवाज को? वे तो स्वयं इस आशंका से भयभीत थे कि कोई हमें पकड़ न ले। भागते-भागते काशीद के पैर भी उत्तर देने लगे। आखिर वह भी एक स्थान पर थककर बैठ गया।

जब वे दोनों जवान गांव से काफी दूर चले गए तो गांव के कुछ प्रमुख लोगों ने काशीद से कहाह्न'अरे ओ बटाऊ! तूं किनके पीछे दौड़ रहा है? क्या तुझे पता नहीं ये कौन है?'

काशीदह्व'ये कौन है, इसी का पता लगाना है।'

ग्रामवासीह्व'किसने कहा है तुम्हें उनका पता लगाने के लिए?'

काशीदह्व'हमारे महाराज ने।'

ग्रामवासीह्व'क्या मतलब है उन्हें?'

काशीदह्व'उन उष्ट्रारोहियों ने हमारे महाराज को रास्ते में खूब परेशान किया था। मैं उनकी खबर लेने के लिए आया हूं।'

ग्रामवासीह्व'अरे भोले शम्भू! उनकी क्या खबर लेगा, कहीं वे तुम्हारी खबर न ले ले। जान बचानी है तो भाग यहां से। ये तो बड़े बदमाश ठाकुर हैं। कहीं कुछ लूटपाट करके आए दीखते हैं। अब ये क्षण भर भी यहां नहीं रुकेंगे। लगता है तुम्हारे महाराज की तकदीर अच्छी थी, जो सही सलामत रह गए वरना इन खूंखार डकैतों के चंगुल से निकलना कठिन था।' ग्रामवासियों से यह बात सुन काशीद उल्टे पांव साध्वियों की ओर दौड़ा। साध्वी सजनांजी ने उत्सुक स्वरों में पूछाह्वक्यों क्या खबर लाए? काशीद ने सहमाए स्वरों में कहाह्व'महाराज! आज तो आप देव, गुरु, धर्म के प्रताप से बच गए। वरना, उन डाकुओं का क्या भरोसा? वे तो गांव का गांव लूटने में भी नहीं चूकते। गांव के लोग बता रहे हैं कि बन्दूक के सिवाय इनकी कोई भाषा नहीं।' यह सुन साध्वी इन्द्रुजी ने कहाह्व'जप के प्रभाव से डाकुओं का यह भयानक संकट टला। वरना हमारी क्या ताकत थी जो इन खूंखारों से मुकाबला कर लेते।'

कुछ ही देर में साध्वियां सकुशल 'मांडा' पहुंच गई। गांव में पहुंचने के बाद जब साध्वियों ने श्रावकों को रास्ते की पूरी घटना सुनाई तो सब क्षणभर के लिए अवाक् रह गए। फिर बोलेह्व'महाराज! यह स्वामीजी के नाम का चमत्कार था जो आपका बाल भी बांका नहीं हुआ। यदि कुछ अवांछित घटित हो जाता तो हमारा मुंह काला हो जाता।'

डाकुओं के इस रोमांचक उपद्रव में जहां साध्वी सजनांजी की सूझबूझ एवं संकटों से जूझने की क्षमता के दर्शन होते हैं वहां युवा साध्वी इन्द्रुजी का साहस भी श्लाघनीय है। उन्होंने इस विकट परिस्थिति का जिस हिम्मत से सामना किया वह निःसंदेह उनके जीवन का एक उल्लेखनीय पृष्ठ बन गया।

ह्नः ८ :ह्न
चैनपुरा से कीड़ीमाल की भयावह यात्रा

वि. सं. २००९ की घटना है। उस वर्ष साध्वी सजनांजी मेवाड़ में परिभ्रमण कर रही थी। वैशाख कृष्णा एकादशी का दिन। साध्वी सजनांजी ने अपनी सहयोगिनी साध्वियों के साथ चैनपुरा से कीड़ीमाल की ओर विहार किया। सुनसान, पथरीला और भयानक मार्ग। यदा कदा कोई सा राहगीर गुजरता नजर आता था। कीड़ीमाल के श्रद्धालु श्रावक हरखचंदजी चावत साध्वीश्री की रास्ते की सेवा कर रहे थे। पांच साध्वियां और एक श्रावकह्नछह के अतिरिक्त सातवां कोई भी मनुष्य नहीं। दूर-दूर का शून्य प्रदेश, चारों ओर सघन झाड़ियां, सांय-सांय करता निर्जन मार्ग, पहाड़ी घुमाव भी इतने विकट कि दस बीस कदम भी कोई आगे पीछे रह जाए तो आगे वाले पीछे वालों को और पीछे वाले आगे वालों को देख नहीं सकते। मार्ग की भयानकता को देख साध्वी सजनांजी के निर्देशानुसार सब साध्वियां एक साथ कदम-दर कदम रास्ता काट रही थी।

चलते चलते अचानक एक स्थल पर साध्वी इन्द्रुजी के पांव थम गए। साध्वी सजनांजी ने पूछाह्नइन्द्रुजी! रुक कैसे गए? क्या कहीं दर्द हो गया? साध्वी इन्द्रुजी ने विस्मित स्वरों में कहाह्न'महाराज! यहां तो मनुष्यों की तीखी और गहरी-गहरी आवाजें सुनाई दे रही हैं। पर, आस-पास किसी मनुष्य की छाया तक दृष्टिगत नहीं होती। फिर ये आवाजें कौन लगा रहा है?' साध्वी सजनांजी ने कहाह्न'तुम्हें ऐसे ही बहम हो गया होगा। यहां तो कोई आदमी भी नहीं दीखता फिर आवाज कौन देगा?' साध्वी इन्द्रुजी ने अपनी बात को दृढ़ता के साथ दोहराते हुए कहाह्न'महाराज! मुझे तो रत्तीभर भी बहम नहीं है। लगता हैह्नआस-पास में कहीं न कहीं जरूर डाकू छिपे हुए होंगे।' अन्य साध्वियों ने भी ध्यान से कान लगाकर सुना, सब एक साथ बोल उठेह्न'हां महाराज! काफी दूरी से कोई गहरी आवाज निकल रही है।' तब साध्वी सजनांजी ने भी संकेतित

दिशा की ओर चित्त को एकाग्र किया। उनके कानों में भी कर्कश और अव्यक्त ध्वनि तरंगें टकराई। उन्हें भी साध्वी इन्द्रुजी के कथन में सत्यता परिलक्षित होने लगी।

सहगामी श्रावक हरखचंदजी ने सोचाह्नशायद किसी आवश्यक कार्यवश साध्वीश्री रुके होंगे। अतः वे भी आगे जाकर मोड़ की ओट में बैठ गए। किन्तु कई देर तक जब साध्वियों ने प्रस्थान नहीं किया तो उन्हें बड़ी चिन्ता हुई। वे दो चार कदम पुनः पीछे की ओर लौटे, जोर से आवाज लगाकर पूछाह्न'महाराज! क्या बात है धूप चढ़ रही है। विहार में देरी क्यों हो रही है?' साध्वी सजनांजी ने कुछ निकट आकर धीमे स्वरों में कहाह्न'हरखचंदजी! ये तीखी आवाजें कहां से आ रही हैं? बस इसी का पता लगाने के लिए हम इतनी देर से बैठे हैं। चारों तरफ दृष्टि घुमाकर देख लिया पर कहीं कोई सुराग नहीं मिला।' हरखचंदजी ने दबे हुए स्वर में कहाह्न'महाराज! इस संदर्भ की बात यहां करने में कोई फायदा नहीं क्योंकि यह बड़ा खतरनाक एरिया है। प्रतिक्षण यहां दस्युओं का आतंक छाया रहता है। जहां-तहां पहाड़ों की गुफाओं, कन्दराओं, घाटियों और गुप्त स्थानों में खूंखार डाकुओं की टुकड़ियां रहती हैं। कोई राहगीर अगर सही सलामत निकल जाए तो समझना चाहिएह्नवह मौत के मुख से जिन्दा निकल आया है।'

साध्वी इन्द्रुजी ने हरखचंदजी से पूछाह्न'तो फिर जान-बूझकर सरकार चुप क्यों बैठी है? क्या वह इन डकैतों का प्रतिकार नहीं कर सकती?'

हरखचंदजी ने कहाह्न'साध्वीश्री! पहली बातह्नसरकार गांवों के प्रति उपेक्षा बरतती है। दूसरी बातह्नडकैत डाका डालने में इतने माहिर हैं कि किसी की पकड़ में नहीं आते। यदि किसी तरह पकड़ में आ भी जाएं तो उनका गिरोह इतना शक्तिशाली है कि पकड़ने वाले को ही मौत की घाट उतार दे। पूरा गांव इनकी पदचाप से थर्राता है। अतः आपसे विनम्र निवेदन है कि कृपया पैर जल्दी उठाएं। यदि किसी डाकू को पता लग गया तो आपकी और मेरी खैर नहीं।' यह सुन साध्वी सजनांजी ने त्वरा से चरण बढ़ाए। थोड़ी दूर चले होंगे कि किसी पक्षी के अपशकुन हुए। साध्वी सजनांजी ने अपशकुन का फलित निकालते हुए कहाह्नइन्द्रुजी! मुझे ऐसा आभास हो रहा है, आज जिस गांव में जा रहे हैं वहां डाकुओं का गिरोह आएगा। साध्वी इन्द्रुजी ने जिज्ञासा कीह्नसाध्वीश्री! आपको यह कैसे पता लगा? साध्वी सजनांजी ने विश्वास पूर्ण शब्दों में कहाह्नइन्द्रुजी! यह गांव पहाड़ों के बीच बसा हुआ है, चारों ओर प्रांशु पर्वतमालाएं और

जटीली झाड़ियां है। ऐसी जगह में डाकू लोग अपना काम कर छिप जाते हैं। पीछा करने पर भी उनकी कहीं खोज-खबर नहीं लगती।' एक तरफ साध्वी सजनांजी का अनुभव जनित अनुमान बोल रहा था तो दूसरी तरफ साध्वी इन्द्रुजी का युवा मन तर्क के तारों में उलझ रहा था। किन्तु इस अनिष्ट सूचना ने सबके भीतर हलचल जरूर पैदा कर दी।

पांचों साध्वियां द्रुतगति से रास्ता पार कर कीड़ीमाल पहुंच गई। उस समय कीड़ीमाल में श्रद्धा के (तेरापंथ के) सात घर थे। उनमें हरखचंदजी चावत का परिवार मुख्य था। कीड़ीमाल पधारने वाले साधु साध्वियों की रास्ते की सेवा आदि कार्य-सम्पादन में चावत परिवार अग्रणी था। हरखचंद जी का मकान बड़ा, खुला एवं साताकारी था। अतः प्रायः चारित्रात्माओं का यहीं विराजना होता था। साध्वी सजनांजी का प्रवास-स्थल भी यही मकान बना। मध्याह्न में साध्वी इन्द्रुजी ने प्रवचन सुनाया। प्रवचन के दौरान आपने अणुव्रत की चर्चा की। हरखचंदजी प्रवचन सुन इतने प्रभावित हुए कि उसी समय परिषद में खड़े होकर यह संकल्प लिया कि जब तक आपका इस क्षेत्र में विराजना होगा तब तक मैं पूर्णरूपेण अणुव्रत के नियमों का पालन करूंगा।

लगभग तीन बजे साध्वी इन्द्रुजी व्याख्यान सम्पन्न कर सीढ़ियों पर चढ़ ही रहे थे कि अचानक कुछ कोलाहल सुनाई दिया। चारों ओर भगदड़ सी मच गई। कोलाहल क्यों हो रहा है? उसका पता लगाने के लिए साध्वी इन्द्रुजी गलियारे की छोटी सी खिड़की में से बाहर झांकने लगे। उन्होंने देखाह्नबीसों अजनबी जवान ऊंटों को दौड़ाते हुए तेजी से गांव में प्रवेश कर रहे हैं। किसी के हाथ में नंगी तलवार तो किसी के हाथ में बन्दूक, किसी के हाथ में खासरा की गीली लकड़ी तो किसी के हाथ में तीर-कमान, किसी के हाथ में बरछी तो किसी के हाथ में चाकूह्नइस प्रकार सब नाना मारक हथियारों से लैस हैं। लाल-लाल आग्नेय नेत्र, बंटदार बड़ी-बड़ी मूंछें, सिर पर केसरिया मोटे मोटे मारवाड़ी दूमाले (एक विशेष प्रकार की पाग) मुंह पर बांधे हुए काले कपड़े, भीष्म आकृतियांह्न इस रौद्र रूप को देख साध्वी इन्द्रुजी को यह समझते देर न लगी कि ये कौन हैं? उन्होंने तत्काल ऊपर खड़े ही साध्वी सजनांजी को आवाज दीह्न'महाराज! यहां तो डाकू आ गए हैं। गांव के लोग प्राण बचाने इधर-उधर भाग रहे हैं। किसी भी क्षण कुछ भी घटित हो सकता है। बस, अब तो नमस्कार महामंत्र का जप ही हमारा सच्चा रक्षक है।' यह सुन सजनांजी सहित सब साध्वियां पूर्ण सतर्क बन गई। सभी ने जब तक डाकुओं का उपद्रव न मिटे तब तक चारों आहार-पानी

का त्याग कर दिया। वैशाख की चिलचिलाती धूप में सोपान वीथी के बीच स्थित एक चौड़े शिलाखण्ड पर विराजकर साध्वी इन्द्रुजी तन्मयता से नमस्कार-मंत्र का जप करने लगी। साध्वी पिस्तांजी व साध्वी सुजाणांजी लगभग ढाई घंटे तक विघ्न हरण की गीतिका गाती रही। साध्वी भीखांजी साध्वियों के बोझ की देखभाल में नियुक्त थी। साध्वी सजनांजी ऊपर की मेड़ी में ॐ भिक्षु मंत्र का जप कर रही थी।

मकान के ऊपरी भाग में दोनों तरफ मेड़ियां थीं। एक तरफ की मेड़ी में साध्वियों का प्रवास था। दूसरी तरफ की मेड़ी में लूट-खसोट, मार-काट और मानवीय बर्बरता का खौफनाक नाटक खेला जा रहा था। हरखचंदजी के भाई की बारह वर्षीय पुत्री पानकंवरी डाकुओं के इस आतंक को देख सिहर उठी। प्राणों का व्यामोह किसे नहीं होता? पानकंवरी ने सोचाह्नये डाकू कहीं मुझे मार न दे। वह प्राणों को बचाने के लिए मेड़ी के पिछवाड़े कुम्हार के घर में कूद पड़ी। उसके जोर से कूदने से कोल्हू की कच्ची टपरी टूट पड़ी। छत की शहतीर पर लगाए हुए बड़े-बड़े लक्कड़ भी नीचे आ गिरे। पानकंवरी की दुबली पतली देह भारी भरकम काष्ठ स्तम्भों के बोझ से दब चुकी थी। खाई से निकलकर कुए में गिरने वाली कहावत चरितार्थ हो उठी। मौत के एक संकट को उसने जैसे तैसे पार किया और बिना बुलाए ही दूसरा संकट फिर उपस्थित हो गया। पानकंवरी उन मोटे-मोटे लक्कड़ों के नीचे दबी सिसक रही थी पर निकाले कौन? किन्तु जिसके आयुष्य की डोर लम्बी होती है, उसे बचाने वाला कोई निमित्त स्वतः मिल ही जाता है।

पानकंवरी के चाचा हरखचंदजी, जो कुम्हार के घर में छुपे हुए थे, तेज धमाका सुन तत्काल बाहर निकल आए। टूटी हुई टपरी के पास गिरे लकड़ों में दबी पानकंवरी की चुनरी पर जैसे ही उनकी नजर पड़ी कि पहचानते देर नहीं लगी। अरे! यह तो मेरे भाई की बेटी है। तत्काल भारी भरकम लकड़ों को इधर-उधर हटाकर जैसे-तैसे उन्होंने पानकंवरी को खींचकर बाहर निकाल लिया। उसी समय गांव की सबसे ऊंची हवेली (चांदमलजी भटेवरा का मकान) की छत पर खड़े होकर चारों तरफ निरीक्षण कर रहे डाकुओं के सरदार की दृष्टि हरखचंदजी पर पड़ी। उसने जोर से हल्ला मचायाह्नअरे! बनिया भाग रहा है। जल्दी से पकड़ो। सरदार की बात सुनते ही चार डाकू झट उधर दौड़े और हरखचंदजी को पकड़ लिया। बेटी को निकालने के मोह में स्वयं फंस गए। अब क्या किया जाए? इष्ट स्मरण के अतिरिक्त उन्हें डाकुओं की गिरफ्त से मुक्त कराने वाला कोई नहीं था।

चाचा के पास खड़ी पानकंवरी यह दृश्य देख दहल उठी। वह अवस्था से भले ही छोटी थी किन्तु प्रकृति से साहसी एवं होशियार थी। डाकू हरखचंदजी को पकड़ पाते, उससे पहले ही पानकंवरी ने अपने सिर पर बंधा सोने का बोर उतारा और टूटी टपरी के भग्नावशेषों के नीचे छिपा दिया। हरखचंदजी के बाद ज्योंही डाकू पानकंवरी को पकड़ने झपटे कि उसने हाथों की चूड़ियां खोलकर डाकुओं के सम्मुख फेंकते हुए कहाह्न'लो! लो! ये पीतल की चूड़ियां तुम ले जाओ।' लड़की का यह निर्भीक उत्तर सुन डाकू बड़े प्रभावित हुए। उन्होंने न पानकंवरी को पकड़ा और न उसके गहनों को छुआ। जाते जाते एक डाकू अल्हड़ता से बोलाह्न'चल भाग यहां से पगली कहीं की।' डाकू का इतना कहना था कि पानकंवरी तो वहां से नौ दो ग्यारह हो गई परन्तु हरखचंदजी जी डाकुओं की जकड़न से कैसे मुक्त होते?

डाकू हरखचंदजी को घसीटते हुए घर पर लाए और धमकी देते हुए बोलेह्न'अरे ओ महाजन के बेटे! भोले लोगों को ठग-ठग कर खूब धन कमाया है तूने! बस अब चुपचाप अपने सारे धन का पता बता दे, वरना जान को खतरा है।' उन दिनों वहां डाकुओं का आतंक बहुत रहता था अतः हरखचंदजी ने अपने गहने-रुपए आदि कीमती वस्तुएं किसी दूसरे गांव में रिश्तेदार के यहां सुरक्षित रख दी। डाकुओं ने जब धन के बारे में पूछा तब हरखचंदजी असमंजस की स्थिति में पड़ गए। बताए तो जीवन भर की कमाई जाए न बताए तो डाकुओं की मार खाए। वे चुपचाप स्तम्भीभूत से खड़े रहे। कुछ न बताने पर डाकुओं को बड़ा तेज गुस्सा आया। खासरा की गीली लकड़ी से तड़ातड़ पीटना शुरू कर दिया। एक डाकू भी पिटाई करके बेहाल कर सकता है वहां एक साथ चार पांच डाकू गीली लकड़ी से प्रहार करे तो कितनी वेदना होती है? डाकुओं ने सोचाह्नबनिये का बेटा है आखिर दम कितना है, एक दो मार पड़ेगी तो अपने आप बोल जाएगा पर एक के बाद एक लगातार कसकर तेरह प्रहार करने पर भी हरखचंदजी कुछ नहीं बोले। उन्होंने जोर से धमकाते हुए कहाह्नठीक तरीके से बताता है तो बता दे वरना तुम्हें और तुम्हारे पूरे परिवार को इसी क्षण मौत के घाट उतार देंगे। यह देख चमकती तलवार! अभी टुकड़े-टुकड़े कर डालते हैं।

हरखचंदजी इतनी देर तो मौन थे पर अब चुप रहना उनके लिए कठिन हो गया। वे अहिंसक भी थे और साहसी भी। इसलिए एक तरफ परिवार की अनर्थ हिंसा से उनका मन कांप रहा था तो दूसरी तरफ डाकुओं के सामने अकारण झुकना भी उन्हें मान्य नहीं था। उन्होंने दो टूक शब्दों में कहाह्न'मैं अणुव्रती हूं

मुझे झूठ बोलने का त्याग है। मैं सच कहता हूं कि मेरे पास अभी कुछ नहीं है।' हरखचंदजी का इतना कहना था कि एक उछलकर उत्तेजित स्वरों में बोलाह्न 'बड़े आए सच बोलने वाले। गांव के नामी सेठ हो फिर हम कैसे मान लें कि तुम्हारे पास कुछ नहीं है। अणुव्रती-अणुव्रती का हमें पता नहीं। हमें तो सिर्फ धन का पता चाहिए।' हरखचंदजी ने अपने चोले (अंगरखे) को उतारकर दोनों जेबें दिखा दी। वस्तुतः एक रुपया भी नहीं था। एक डाकू ने कहाह्नअच्छा! चलो, उसके घर की तलाशी लो। जो कुछ घर में पड़ा है अपने आप सामने आ जाएगा।

हां हां अभी तलाशी लेते हैह्नयों कहते हुए डाकू घर के अन्दर घुस गए।

अन्तस् का आह्वान

साध्वी इन्द्रुजी इस हो-हल्ले को सुन एकदम सतर्क हो गई। ज्यों ही डाकू घर में घुसे, साध्वी इन्द्रुजी ने साध्वी सजनांजी को संकेत की भाषा में सूचना दी। साध्वी सजनांजी उस समय ऊपर की मेड़ी में ॐ भिक्षु का जप कर रही थी। साध्वी इन्द्रुजी का संकेत पाकर उन्होंने सहवर्ती साध्वियों को चेतावनी देते हुए कहाह्न'सतियो! आज दुर्गम परीक्षा की घड़ी है। हमारे मन में न जीने का मोह है, न मरने का भय। संकल्प को निभाते जीना भी श्रेयस्कर है तो संकल्प को निभाते मरना भी उत्तम। आज हमें ऐसा ही परिचय देना है।' सब साध्वियां कायोत्सर्ग की मुद्रा में सामूहिक जप करने लगी। साध्वी इन्द्रुजी पहले से ही सोपान वीथी के मध्यम-भाग में आसीन थी। उन्होंने उसी जगह खड़े होकर इन संकल्पों के साथ जप शुरू कियाह्न'हमारी संयम साधना अगर सच्ची है तो एक भी डाकू हमारी तरफ न बढ़े।' मन ही मन आचार्य भिक्षु को संबोधित करते हुए उन्होंने कहाह्न'हे स्वामीजी! यदि आपका नाम सच्चा सुरक्षा कवच है तो ये डाकू हमारा एक भी उपकरण नहीं ले जा सकते। हम तो आपकी शरण में है।' इन संकल्पों को दोहराते दोहराते साध्वी इन्द्रुजी ॐ भिक्षु, ॐ जय तुलसी' का तन्मयता से आंखें मूंदे जप कर रही थी। सहसा एक आश्चर्यकारी घटना घटित हुई। साध्वी इन्द्रुजी को ऐसा आभास हो रहा था, जैसे स्वयं आचार्यश्री तुलसी कंधों पर रजोहरण धारण किए सम्मुख पधार कर आशीर्वाद की मुद्रा में फरमा रहे हैं कि तुम पर कोई आंच आने वाली नहीं है। ऐसा लग रहा था जैसे स्वयं आचार्य भिक्षु आचार्यश्री तुलसी की आकृति में प्रतिबिम्बित हो रहे हैं। साध्वी इन्द्रुजी इस दृश्य को

देख भाव विभोर हो उठी। वे प्रसन्नता और निश्चिन्तता के साथ पुनः जप में संलग्न हो गई।

सांवरिया! भक्त की लाज रखना

हरखचंदजी को स्वयं से भी ज्यादा साध्वियों की चिन्ता थी। डाकू कहीं साध्वियों को परेशान न कर दे। वे भीतर ही भीतर बार-बार यही पुकार रहे थेह्नहे सांवरिया! आज भक्त की लाज रखना। यदि साध्वियों को कुछ हो गया तो मैं आचार्यश्री को मुंह दिखाने लायक नहीं रहूंगा। साध्वियों की सुरक्षा उनका अहम दायित्व था। अपने दायित्व के निर्वाह के लिए उन्होंने हिम्मत कर डाकुओं से कहाह्न'ठाकुर साहब! कृपया एक मेहरबानी करना। इधर की मेड़ियों में पांव भी मत धरना।' यह सुन डाकू चौंक पड़े। उन्होंने झल्लाते हुए हरखचंदजी की पीठ पर तेजी से प्रहार किया तथा ऐंठते हुए बोलेह्न'क्यों! क्या विशेष बात है उधर? जो हमें जाने से रोकते हो। तुम कौन हो हमें रोकने वाले? लो अभी जाते हैं। अब इधर-उधर करने से कुछ नहीं होगा। हम राई रत्तीभर भी छोड़ने वाले नहीं हैं।' हरखचंदजी समयज्ञ थे। वे इस बात को अच्छी तरह जानते थे कि तो काम धन और शक्ति से नहीं होता, वह वाणी की मधुरता से क्षण भर में हो जाता है। डाकू जितने उत्तेजित थे, हरखचंदजी उतने ही शांत। उन्होंने बड़ी शालीनता से कहाह्न'भाइयो! यह मेरा सौभाग्य है कि आप जैसे मेहमानों का बिना निमंत्रण ही मेरे घर पदार्पण हुआ। आप जहां चाहे वहां विराजें। सारा मकान आपका ही है। मेरा तो केवल इतना सा अनुरोध है कि इधर वाली मेड़ी में हमारे गुरु महाराज विराज रहे हैं और उधर वाली मेड़ी में हम रहते हैं। मेरे साथ आप चाहे जैसा व्यवहार करें, लेकिन इन्हें कोई कष्ट न हो क्योंकि साधुओं को सताना घोर पाप है।'

डाकुओं ने हरखचंदजी की बात को सुना और तत्काल साध्वियों की तरफ घूरते हुए कहाह्नओह! ये मुंहपट्टी वाले ढूंढिये तुम्हारे गुरु महाराज हैं? सब डाकू साध्वियों की खिल्ली उड़ाने लगे। साध्वी इन्द्रुजी ने डाकुओं के ये कर्णकटु शब्द सुने। उनसे चुप नहीं रहा गया। वे प्रतिकार की भाषा में बोलेह्न'क्या कहा? ढुंढिये? और कोई शब्द नहीं मिला तुम्हें हमें संबोधित करने के लिए। क्या मजाक समझ रखा है तुमने? हम जैन साधु हैं। सारा संसार हमें जानता है। हम छल, प्रपंच और माया से कोसों दूर हैं। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रहह्नइन पांच महाव्रतों का मन वचन और काया से आजीवन पालन करते हैं। याद रखना ऐसे शुद्ध साधुओं को सताने वाले कभी सुखी नहीं हो सकते।'

साध्वीश्री की यह बुलन्द आवाज सुन डाकू भीतर तक सहम गये। उनमें से एक ने हाथ ऊपर उठाकर विनम्र स्वरों में कहाह्न'महाराज! हमारा बड़ा अपराध हुआ है। कृपया हमें क्षमा करें। हम लोग आपको सताने के लिए नहीं आए। आप आराम से अपना भगवत् भजन करे। हम आपको कुछ नहीं कहेंगे।' साध्वी इन्द्रुजी डाकुओं के ये शब्द सुन पूर्णतः आश्वस्त हो गई। वे पुनः जप में तल्लीन हो गईं। डाकुओं के इस विवेक पूर्ण व्यवहार ने हरखचंदजी को निश्चिन्त कर दिया।

डाकुओं ने देखाह्नइस सेठ के गुरु महाराज तो बड़े प्रभावी और करामाती हैं। पर देखते हैं इस बनिये की करामात को? देखें, कैसे धन नहीं बताता है। खाली हाथ लौटना हमने जिन्दगी में कभी सीखा ही नहीं। जब डाका डालने आ ही गए तो कुछ लेकर ही जाएंगे। इस उत्तेजित वातावरण में भी हरखचंदजी निमीलित नयन बिल्कुल शांति से 'ॐ भिक्षु' का जप कर रहे थे। एक डाकू ने हरखचंदजी को जोर से झिंझोड़ते हुए कहाह्न'अरे ओ सत्यवादियों के चेले! बहुत देर हुई गुण-मुण गुण-मुण करते। सच सच बता तेरा गल्ला (पैसों की पेटी) कहां है?' हरखचंदजी ने नीचे दुकान की ओर संकेत करते हुए कहाह्न'वहां पड़ा है गल्ला। जो चाहो सो ले जाओ।' अब तो डाकू खुशी से झूम उठे। उन्हें आशा थी कि निश्चित ही गल्ले में दस-बीस हजार रुपये तो मिलेंगे ही। पर, ज्योंही उन्होंने गल्ला खोलकर देखा तो सिर्फ दस-बीस रुपये हाथ लगे। 'खोदा पहाड़ निकली चुहिया'ह्नसब आक्रोश और दुगुने जोश के साथ भूखे भेड़िये की तरह हरखचंदजी पर झपट पड़े। हरखचंदजी फिर भी अविचलित थे। वे पूर्णतः शांत और निर्भ्रान्त होकर जप में लीन बने हुए थे।

घासलेट से जलाने की तैयारी

हरखचंदजी की ध्यान-मुद्रा देख डाकुओं को तेज गुस्सा आ गया, उन्होंने तुरन्त दुकान में पड़े घासलेट के बड़े टीन (पीपा) को उठाया और हरखचंदजी के सिर पर पानी की तरह उंडेल दिया। टीन के पास ही अन्य विक्रयार्थ सामान के साथ कुछ माचिस की डिब्बियां भी पड़ी थी। दूसरा डाकू माचिस की डिब्बी उठाकर लाया और फटाफट दीयासलाई को बाहर निकाल कर जलाने लगा। अन्य सब डाकू हरखचंदजी को घेरे हुए बैठे थे। ताकि वे उठकर कहीं भाग न सके। डाकुओं के इस बर्बर कृत्य को देख साध्वी इन्द्रुजी का कोमल अन्तःकरण कांप उठा। उन्होंने सोचाह्नकुछ अन्यथा घटित हो गया तो यह धर्मशासन की अप्रभावना का प्रसंग बन जाएगा।

उनके सामने यक्ष प्रश्न था जैन शासन और तेरापंथ की प्रभावना का। संघ के भक्त पर आंच आने का अर्थ है संघ पर आंच आना। संघ की प्रभावना पर आंच आए, यह बात साध्वी इन्द्रुजी को स्वप्न में भी अभीष्ट नहीं थी। उनकी अटूट संघ निष्ठा इन स्वरों में मुखर हो उठीह्न'हे भिक्षु स्वामी! आप जहां कहीं भी हों, हमारी आवाज आप तक पहुंच जाए। यदि आज तुम्हारा भक्त हमारी आंखों के सामने जला दिया तो संघ की अवहेलना का प्रसंग बन जाएगा। हे सांवरिया! संयमी आत्माओं के रहते हूए भी यह जघन्य कृत्य हो गया तो विरोधी लोग यह ताना कसेंगेह्नबस, देख लिया ना तेरापंथ की श्रद्धा लेने का परिणाम? धन भी गया और जान भी। ऐसे धर्म गुरु किस काम के, जो विपदा में आड़े न आ सके? इस विकट घड़ी में संघ की प्रभावना आपके हाथ है। हम तो मात्र आपके पथ के पथिक हैं।' ये शब्द साध्वी इन्द्रुजी के होठों से नहीं, अंतरात्मा से निकल रहे थे। आत्मा की आवाज आत्मा तक पहुंची और अचानक परिस्थिति में एक आश्चर्यकारी मोड़ आया।

यह करामात है गुरु महाराज की

डाकू यह देखकर हैरान थे कि एक एक कर माचिस की चार दीयासलाई जलाई पर एक भी दीयासलाई आग नहीं पकड़ पाई। इस विफलता ने उन्हें और अधिक उत्तेजित कर दिया। सब एक साथ बोल उठेह्नअरे! इतने दिन तो हमने बनियों की नाक में दम किया था पर यह बनिया तो बड़ा उस्ताद निकला, जिसने बिना किसी हथियार और प्रतिकार के हमारी नाक में दम ला दिया। खैर, हम भी तो कोई छोटे मोटे डाकू नहीं हैं जो हार मान लें। ठहरो, इसे उठाकर नीचे पटकते हैं, अपने आप सर फूट जाएगा और एक ही मिनट में काम तमाम हो जाएगाह्नयों सोच डाकूओं ने हरखचंदजी को जोर से झिंझोड़ा पर वे तो न हिलते हैं न डुलते हैं। न आंखें खोलते हैं, न बोलते हैं। डाकू जोर लगाते लगाते थक गए पर हरखचंदजी तो मानों वज्र के हो गए। पूरा शरीर पसीना पसीना हो गया। एड़ी से चोटी तक दम लगाने पर भी डाकू हरखचंदजी को उठा नहीं सके। इस दूसरी विफलता ने सबको हताश कर दिया। उनमें से एक ने झल्लाते हुए कहाह्न'अरे इस दुबले-पतले आदमी में इतना बोझ कहां से आया जो उठाए नहीं उठता।' इतने में दूसरे ने कहाह्न'अरे! हम सब भ्रम में बैठे हैं। यह सारी करामात तो उसके गुरु महाराज की है। वो देखो सामने खड़े-खड़े मंत्र पढ़ रहे हैं।' सबका ध्यान साध्वी इन्द्रुजी की ओर गया। उन्हें जप करते देख सब एक साथ बोल उठेह्न'हां-हां बिल्कुल सही बात है। अब समझ में आया सारी परेशानी का राज।

लगता है इसीलिए माचिस ने आग नहीं पकड़ी और इसी कारण इस हलके फुलके अदने से आदमी को हम हट्टे-कट्टे नौजवान भी पूरा दम-खम लगाकर नहीं उठा सके। हो न हो, यह इन मुंहपट्टियों का प्रभाव है।'

न रहेगा बांस और न बजेगी बांसुरी

'चलो चलो भागो यहां से। बस, बहुत देख लिया, यहां कुछ भी मिलने वाला नहीं'ह्नयों कहकर एक डाकू जल्दी से उठा और ऊपर की मेड़ी की तरफ भागा। वहां पानकंवरी की शादी के लिए कुछ नए वेश तथा आभूषण तैयार किए हुए पड़े थे। ज्योंही ऊपर वाले डाकू की नजर उन चीजों पर पड़ी उसने तत्काल नीचे खड़े अपने साथियों को आवाज लगाईह्न'अरे! सब फटाफट ऊपर आ जाओ। यहां धन मिल गया है।' आवाज सुनते ही सब ऊपर की दौड़े। हरखचंदजी भी उचित मौका देख वहां से उठे और सीधे उस स्थान पर आए जहां साध्वियां विराज रही थी। साध्वियों को वन्दना कर वे कुछ कहे उससे पूर्व ही भटेवरों के मकान की छत पर खड़े डाकू-सरदार की नजर हरखचंदजी पर पड़ी। दस्युपति ने तुरन्त बन्दूक निकाली और हरखचंदजी की तरफ निशाना बांधा। हरखचंदजी त्वरा से नीचे उतर कर खेतों की ओर दौड़ गए। पास खड़े एक मजदूर ने सरदार से कहाह्न'वणिक् तो दौड़ गया है। साध्वियों के गोली लग जाएगी तो आपकी जिन्दगी बिगड़ जाएगी।' यह बात सुनते ही सरदार का आवेश कुछ कम हुआ। उसने तुरन्त बन्दूक की नोक इस तरह मोड़ी कि गोली साध्वियों के पास वाली दीवार को छेद कर निकल गई। इधर हरखचंदजी ने तेजी से दौड़ते-दौड़ते एक खेत को पार किया। एक स्थान पर घास (रजका) का बहुत बड़ा ढेर था। वे एक पल का विलम्ब किये बिना उसके अन्दर छुप गए। डाकू-सरदार ने सोचाह्नमेरा निशाना कभी खाली नहीं जा सकता। बनिया जिस दिशा में दौड़ रहा है उसी दिशा में बन्दूक चलाता रहूंगा। कोई न कोई गोली अवश्य लगेगी और एक ही क्षण में पूरे शरीर को छलनी कर देगी। जब आदमी का लक्ष्य बुरा बन जाता है तो उसकी शक्ति भी बुरे कामों में ही लगती है। वह जो सोच लेता है उसे पूरा किए बिना चैन से सो नहीं सकता। सरदार बन्दूक के घोड़े को दबाता रहा और गोलियां दनादन निकलती रही।

'जांको राखे सांइया मार सके ना कोय'ह्नहरखचंदजी तो घास के झुरमुट में सुरक्षित बैठे थे। बन्दूक की गोलियां घास के झोंपड़ीनुमा ढेर से टकराती रही और नीचे गिरती रही। सरदार ने सोचाह्नअब तो शायद बनिया मर गया होगा। उसने अपने साथियों से कहाह्नचलो-चलो, अब हमारा काम हो गया। सब डाकू

सरदार के पास एकत्रित हो गये। एक डाकू ने कहाह्नबनिया तो हमारी गोली से मर ही गया है पर उसके परिवार का भी अगर कोई सदस्य जिन्दा हो तो उसे भी मार डालो ताकि कोई भी हमारी शिनाख्त न कर सके। बस, अब क्या था? डाकू पूरे घर की तलाशी लेने लगे। घर के एक एक कोने को छान लिया पर कहीं इन्सान का चेहरा तक नजर नहीं आया।

गहरी छानबीन के बाद जब घर के अन्दर एक भी सदस्य नहीं मिला तो डाकुओं ने सीढ़ियों पर खड़े साध्वी इन्द्रुजी की ओर घूरते हुए कहाह्नए मुंहपट्टी वाली! सभी किधर मर गए? चुप क्यों बैठी है? बता तो सही। पर, जबाब कौन दे? साध्वियां तो जप में तल्लीन थी। जब कोई जबाब नहीं मिला तो डाकू जोर जोर से गालियां बकते हुए भाग निकले। जाते वक्त एक डाकू साध्वियों की तरफ वाली एक सीढ़ी पर चढ़ा। एक क्षण रुक कर वापस मुड़ गया। डाकू को आते देख साध्वी सजनांजी ने साध्वी इन्द्रुजी से कहाह्नतुम रास्ता छोड़ दो। लगता है डाकू ऊपर आना चाहते हैं। साध्वी इन्द्रुजी ने निर्भीक शब्दों में कहाह्नचारित्रात्माओं को लांघकर आने की हिम्मत हो तो आ सकते हैं। मैं अपने स्थान से क्यों हटूं? साध्वी इन्द्रुजी ने न रास्ता छोड़ा, न पीछे मुड़कर देखा। ड्यूटी पर तैनात सिपाही की भांति सीना ताने डटकर खड़े रहें। दो-तीन डाकू उन सीढ़ियों पर भी दो तीन कदम चढ़े पर वापस मुड़ गए। डाकू वापस जा रहे थे तब ऐसा लग रहा था जैसे उन्हें कोई हाथ पकड़ कर जान बूझकर नीचे उतार रहा हो। इस प्रकार पांच घण्टे तक लोमहर्षक धमाल कर डाकू लौट गए।

मौत के मुंह में भी जिन्दा

रात काफी ढल चुकी थी। हरखचंदजी रजके से निकलकर गुप्त मार्ग से साध्वियों के प्रवास-स्थल पर आए। हरखचंदजी को सही सलामत देख सब विस्मय विमुग्ध हो उठे। साध्वियों ने आश्चर्य के साथ पूछाह्न'हरखचंदजी! जिन्दा कैसे बच गए। डाकुओं ने तो गोलियों की बौछार सी की थी।' हरखचंदजी ने श्रद्धा भरे शब्दों में कहाह्न'महाराज! यह सब आपका प्रताप है। यद्यपि एक गोली मेरी कनपटी से जरूर टकराई थी पर तत्काल मैं सावधान हो गया फिर दूसरी-तीसरी गोली भी आयी पर कुछ दूरी से ही निकल गई। यह देव, गुरु, धर्म का ही प्रभाव था कि मैं मौत के मुंह में जाकर भी जिन्दा बच गया। यदि आज आपका इस मकान में विराजना नहीं होता तो मेरी मौत निश्चित थी।' यों कहते-कहते हरखचंदजी के कण्ठ श्रद्धा के भावोद्रेक से गद्‌गद

हो उठे। आंखों में हर्ष के आंसू छलकने लगे। हर्ष के क्षण कितने स्वल्प होते हैं, मनुष्य की अंशग्राही चेतना इस सत्य को कभी पहचान नहीं सकती।

सदमे ने लिए मां के प्राण

हरखचंदजी भी हर्षोत्फुल्ल मुद्रा में अपनी वृद्धा मां को प्रणाम करने के लिए ऊपर वाले कक्ष में गए। कक्ष में प्रवेश करते ही उन्होंने देखाह्नमां कक्ष के एक कोने में मूर्च्छित अवस्था में पड़ी थी। मां को बेहोश देख वे अवाक् रह गए। उन्होंने सोचाह्नवृद्धावस्था, दुर्बल देह, गर्मी का मौसम और फिर आयंबिल तपह्नइन चारों निमित्तों के एक साथ मिलने से मांजी को बेहोशी आ गई है। उन्होंने तत्काल वैद्यजी को बुलाया। सूचना मिलते ही गांव के लोग भी इकट्ठे हो गए। गांव वालों ने मांजी को सचेत करने के लिए पानी पिलाने की कोशिश की। काफी झिंझोड़ने के बाद मांजी ने हलकी सी गर्दन हिलाकर न पीने का संकेत किया। हरखचंदजी माता की अस्वीकृति का संकेत पाकर प्रसन्न थे। क्योंकि वे नहीं चाहते थे कि आयंबिल में मांजी को रात्री में पानी पिलाया जाए।

हरखचंदजी धर्मपरायण और सुविनीत पुत्र थे। वे नमस्कार महामंत्र का जप तन्मयता से करते रहे। ज्यों ज्यों रात ढल रही थी, मांजी की बेहोशी गहरी होती जा रही थी। वैद्य ने नब्ज देखकर कहाह्नलगता है बुढ़िया ने किसी दर्दनाक घटना को देखा है। उसी के कारण अचानक यह स्थिति बनी है। हृदय एवं मस्तिष्क की कोमल नाड़ियों पर इतना गहरा दबाव पड़ा है कि रक्त संचार एकदम अवरुद्ध हो गया है। शरीर की स्थिति गंभीर है। वैद्यजी और हरखचंदजी आपस में यों बात कर ही रहे थे कि मांजी को दो तीन तेज श्वास आए और शरीर एकदम निस्पन्द हो गया।

हरखचंदजी के मन में बार-बार एक ही प्रश्न उठ रहा थाह्नमांजी सुबह तक एकदम ठीक थी, सहसा ऐसे कैसे बीमार हो गई? पूछताछ करने पर पता लगाह्नडाकुओं द्वारा पुत्र को बेदर्दी से पीटते एवं घासलेट डालकर जलाने का प्रयत्न करते बर्बर दृश्य को मांजी ने अपनी आंखों से देखा था। इस हृदय विदारक दृश्य को देख मांजी को गहरा आघात लगा और वही आघात जानलेवा बन गया। हरखचंदजी को जहां साध्वियों के सुरक्षित रहने एवं स्वयं के जीवित बच जाने का हर्ष था वहां मातृ विरह का शोक भी था। शोक और दुःख की इन दारुण घड़ियों में भी उन्हें इस बात की प्रसन्नता थी कि मां ने त्यागमय समाधिमरण प्राप्त किया है। वृद्धा मां के मरण की सूचना मिलते ही साध्वियों ने तत्काल पारिवारिक-जनों को दर्शन दिए, संबल प्रदान किया। सबको अत्यधिक

सान्त्वना मिली। दूसरे दिन सुबह सूर्योदय होते ही साध्वी सजनांजी ने कीड़ीमाल से विहार कर दिया।

पुलिस ने साध्वियों से बयान लेना चाहा

साध्वीश्री के विहार के पश्चात् भीम, रायपुर आदि तीन गांवों की पुलिस एक साथ वहां पहुंची। कार्यवाही के दौरान पुलिस ने पूछाह्नडकैती के समय यहां और कौन कौन थे? किसी युवक ने कह दियाह्न'तेरापंथी महाराज थे। हम सब तो डाकुओं का नाम सुनते ही भाग गये थे। पुलिस ने कहाह्न'कहां है तुम्हारे महाराज?' हरखचंदजी ने सोचाह्नअगर साध्वियों को इस घटनाचक्र के बीच में फंसा दिया गया तो संघ की गरिमा के अनुकूल काम नहीं होगा। वे कड़ककर बोलेह्नहमारे महाराज तो कभी किसी की साक्षी देते नहीं और न ही किसी की जमानत देते हैं। न किसी पर केस करते हैं न किसी को छुड़ाने का प्रयत्न करते हैं। वे तो कंचन कामिनी के त्यागी हैं। उनका न कोई निश्चित धाम है न कोई निश्चित ग्राम। वे तो रमते राम हैं। 'जोगी तो रमता भला' हमें पता भी नहीं है कि वे कहां गए है? यह सुन पुलिस के मुखिया ने क्रुद्ध स्वर में कहाह्न'तुम बनिये हो इसलिए हमें भी झुठला रहे हो। 'तुम्हें अपने महाराज का पता नहीं'ह्नयह बात कैसे मान्य हो सकती है? लगता है तुम अपने पकड़े जाने के भय से ठिकाना पता नहीं बता रहे हो।' हरखचंदजी ने छाती पर हाथ रख कर दृढ़ता से कहाह्न'न तो मुझे पकड़े जाने का भय है, न झुठलाने की साजिश। रही बात महाराज की, वे तो सबके हैं। न तो महाजनों ने उनको खरीदा है, न अन्य लोगों ने उन्हें बेचा है। वे तो सबको भलाई का उपदेश देते हैं। फिर उन्हें किसी का डर क्यों हो? दूसरी बातह्नमुझे वास्तव में यह जानकारी ही नहीं कि साध्वियों ने किस दिशा में विहार किया है क्योंकि मैं तो रात से ही माताजी के अंतिम संस्कार की तैयारी में लगा हुआ हूं। अतः साध्वीश्री के दर्शन भी नहीं कर सका।'

डाकुओं की प्रतिज्ञा

कोई प्रामाणिक गवाहीदार नहीं मिला तो पुलिस खाली हाथ लौट गई किन्तु उसने अपनी तफ्तीश जारी रखी। अन्ततोगत्वा सफलता मिल गई। कीड़ीमाल की डकैती के कुछ ही महिनों बाद किसी अन्य डकैती के प्रसंग में भीम थाना पुलिस द्वारा डाकू गिरफ्तार कर लिए गए। उस वक्त साध्वी सजनांजी आसीन्द (मेवाड़) में विराज रहे थे। आसीन्द के श्रावक विजयसिंहजी भीलवाड़ा तहसील में पेशकार थे। उन्होंने एक दिन साध्वीश्री से कहाह्नमहाराज! कीड़ीमाल में डकैती करने वाले डाकू पकड़ में आ गए। मैंने स्वयं डाकुओं को यह कहते

हुए सुना है कि आज के बाद जहां मुंहपट्टी वाले महाराज होंगे वहां कभी चोरी नहीं करेंगे। जिन्दगी में चोरियां और डकैतियां तो खूब की पर कभी पुलिस की पकड़ में नहीं आये। यह पहला मौका है जब हमने जेल की हवा खाई है। लगता है, उन मुंहपट्टी वाले महाराज का मंत्र काम कर गया। अब तो जहां मुंहपट्टी वाले साधु होंगे वहां डकैती डालने की तीन तिलाक है।' डाकुओं की यह प्रतिज्ञा सुन पेशकार साहब स्वयं चकित रह गए।

विजयसिंहजी ने जब साध्वियों को पूरी घटना सुनाई तब साध्वी सजनांजी के मुख से सहज ही ये स्वर फूट पड़ेह्न'जो जैसा करता है वैसा फल स्वतः मिल जाता है। चाहे कोई कितना ही शक्तिशली क्यों न हो, कर्म के आगे हर इन्सान मजबूर है।'

उस सम्पूर्ण घटना क्रम में एक ओर जहां श्रद्धालु श्रावक हरखचंदजी की सृदृढ़ श्रद्धा एवं सामायिक सूझबूझ का योग है वहां दूसरी ओर साध्वी सजनांजी और साध्वी इन्द्रुजी के साहसी व्यक्तित्व की झलक है। साध्वी इन्द्रुजी का जहां कहीं प्रवास होता वे इस इस घटना को बड़े रसात्मक ढंग से सुनाती। एक बार उन्होंने फतेहपुर (जयपुर) में रात्रीकालीन व्याख्यान में यह घटना सुनाई। उस समय वहां श्रावक दौलतरामजी छाजेड़ भी उपस्थित थे। वे आशु कवि थे। उन्होंने तत्काल कुछ छन्दों की रचना की। उन छन्दों में कीड़ीमाल की डकैती का सजीव चित्रण है। प्रसंगवश उन पद्यों को भी यहां प्रस्तुत किया जा रहा हैह्न

दोहा

दो हजार नव साल में, सित ग्यारस बैशाख।
कीड़ीमाल लूंटन लिए, डाकू दिल अभिलाख।।१।।

सेवैया

चख लाल थी देह विशाल अहा, रंग लाल कपाल रूमाल कसे।।
रजपूत व रावत गूजर थे, दिल क्रूर परिणाम अपार वसे।।२।।
कर में करवाल कुचाल वृत्ति, दुहुं नैन विशाल मसाल चसे।।
पग मूसल ज्यों जमदूत चले, कीड़ीमाल में डाकूड़े चाल धसे।।३।।

श्रावक हरखचंदजी के लिए

निज बेटी पे मोह अनुकंपा करी, अनुराग के राग में झूल गया।।
मन बीच बना हद डाकुओं का, भय था पर मोह मैं भूल गया।।४।।
लख एक डकैत लगा बकने, सब झुण्ड तबै प्रतिकूल भया।
धन पूछन हेत लगे पीटने, तन का चमड़ा सब फूल गया।।५।।

दृढ़ अणुव्रतीह्नमृत्यु को भी चुनौती

मृष बोलन त्याग किया पहिले, धन के हित भी ललचायो नहीं।।
बदमाश घने मिल मार दीन्हीं, पर हर्ष दिले अखतायो नहीं।।६।।
धन श्रावक हर्ष सहर्ष सदा, मन बीच जरा सकुचायो नहीं।
तन तेल किरोसिन डाल दिया, जलने हित भी घबरायो नहीं।।७।।
तन जलान हेत सलाई चसी, सठ क्रूरपने में कमी न करी।।
बुझगी जब दूजी जलान लग्यो, न जली तो जलान लग्यो तीसरी।।८।
तृतीया भी बुझी तो आवाज हुई, ओ देखत इनके सतिराज खड़े।
निज आयु संयोग न इंच जला, ना जाने यह कोई मंत्र पढ़े।।९।।
सती वन्दन हेत सचेत हृदये, सतिवर के पास में आ ही गया।।
पिटने की जरा परवाह न करी, ना दिल बीच जरा अकुला ही गया।।१०।।
गर डाकू भड़ाभड़ गोली चली, ना एक रती सकुचा ही गया।।
कर हिम्मत दौड़ लगा करके, चट जंगल बीच चला ही गया।।११।।
जिनधर्म प्रताप अमाप खुशी, हर हिम्मतवान उपासक है।।
धन श्रावक हर्ष सहर्ष सदा, जिन शासन में विश्वासक है।।१२।।
मरणान्तक कष्ट जो आय पड़ै, नहीं कायरता का प्रकाशक है।।
उनके सब विघ्नक दूर हुवै, जिनके गुरु श्री जिन शासक है।।१३।।

साध्वी इन्द्रुजी की प्रतिज्ञा

जो है संयम खरा हमारा, तो यह डाकू बढ़ै ही नहीं।।
श्री भिक्षु है संघ रूखारा, डाकू मेड़ी चढ़ै ही नहीं।।१४।।
ब्रह्मचर्य की प्रबल शक्ति तो, हाथ इधर में करै ही नहीं।।
ये सब इन्दु सती प्रतिज्ञा, डाकू हिम्मत पड़ै ही नहीं।।१५।।

आचार्यश्री तुलसी के साक्षात् दर्शन

बालक वय व्रतधार धुरन्धर, बनी ताकतवन्त सजोस उमंगा।।
वदनानन्दन का दृग दर्शन, संयम शीत सरोज सुरंगा।।१६।।
ब्रह्मचर्य की प्रबल शक्ति से, दूर हुआ सब कष्ट अड़ंगा।।
श्री तुलसी गण बड़ा चमत्कृत, निरमल नीर समुज्ज्वल गंगा।।१७।।

भैक्षव शासन के प्रति

तप त्याग प्रभाव प्रत्यक्ष सही, गण सौरभ विश्व विकासन की।।
बलिहारी जका प्रण पक्व रहे, बलिहारी गुरु नवमासन की।।१८।।
बलिहारी जिनागम दक्षवृत्ति, बलिहारी गणीश्वर भाषण की।।
बलिहारी मुनि सती शासन के, बलिहारी सदा जिनशासन की।।१९।।

ह्नः ९ :ह्न
कटार की डकैतीह्नरोमांचक प्रसंग

कीड़ीमाल से विहार कर साध्वी सजनांजी जब कटार के समीप पहुंच रहे थे तब अचानक चलते-चलते तेजी से भागते हुए ऊंटों की पदचाप सुनाई दी। साध्वी इन्द्रुजी ने पीछे मुड़कर देखा तो लगाह्नचार-पांच ऊंटों पर सवार लोग कटार के रास्ते में ही आ रहे हैं। उनमें से एक असवार सबसे आगे चल रहा है। वह राह चलती महिलाओं से गांव का परिचय ले रहा है। साध्वी इन्द्रुजी उस असवार की बातें ध्यान से सुन रही थी। बातचीत के लहजे से साध्वी इन्द्रुजी ने अनुमान लगा लिया कि संभवतः ये डाकू होने चाहिए। उन्होंने साध्वी सजनांजी के निकट जाकर मंद स्वरों में कहाह्न'महाराज! लगता है आज फिर डाकू आ गए हैं।' साध्वी सजनांजी ने आश्चर्य के साथ पूछाह्न'इन्द्रुजी! तुम्हें कैसे पता लगा?' साध्वी इन्द्रुजी ने पीछे की ओर संकेत किया। साध्वियों ने पीछे मुड़कर देखाह्न सचमुच चार पांच उष्ट्रारोही तेजी से ऊंटों को दौड़ाते हुए आ रहे हैं। एक साध्वी ने मजाक में कहाह्न'ऊंट पर सवार होने वाले सब डाकू थोड़े ही होते हैं। हो सकता है बेचारे किसी आवश्यक कार्यवश आ रहे हों।' साध्वी इन्द्रुजी ने कहाह्न'साध्वीश्री! यह सच है कि ऊंट पर सवार होने वाले सब डाकू नहीं होते और पैदल चलने वाले सब साहूकार नहीं होते पर इनकी चाल-ढाल एवं बातचीत के लहजे से यह स्पष्ट लग रहा है कि ये डाकू ही होने चाहिए।' दोनों की बात पर पटाक्षेप करते हुए साध्वी सजनांजी ने कहाह्न'छोड़ो तुम दोनों अपनी अपनी बात को। यदि डाकू नहीं हैं तो सबसे बढ़िया बात है पर यदि डाकू हैं तो हमें अपनी सावधानी रखनी चाहिए। शीघ्र पैर उठाओ और गांव में चलो।'

साध्वियों ने द्रुतगति से कदम बढ़ाए और अतिशीघ्र गांव में प्रवेश किया। साध्वीश्री की अगवानी करने आये श्रावक श्राविकाओं को भी यह रहस्य समझते देर नहीं लगी। डाकुओं के आगमन की हलकी सी भनक ज्यों ही लोगों के कानों में पड़ी कि सब तितर-बितर हो गए। जिसको जहां गुप्त स्थान मिला वहीं

जाकर छुप गया। अब पांच साध्वियां और सिर्फ एक श्रावक जगह बताने के लिए रहा। प्राणों का व्यामोह भला किसे नहीं होता? वह श्रावक भी दूर से ही जगह बताकर कहीं जा छुपा। इतने बड़े भवन में पांच साध्वियों के अतिरिक्त कोई नहीं। बाहर से सुन्दर और विशाल मकान को देख डाकुओं ने सोचाह्नसबसे मालदार सेठ तो इस मकान वाला मालिक ही लगता है। चलो सबसे पहले यहीं से श्रीगणेश करें। डाकुओं ने तत्काल उसी मकान की ओर ऊंट दौड़ाए। साध्वियां अभी तक कंधों से बोझ ही नहीं उतार पाई थी कि धमाधम करते डाकू बरामदे में आ धमके। साध्वी इन्द्रुजी उस समय कमरे के द्वार पर खड़ी थी। उन्होंने गौर से देखाह्नडाकू कल वाले तो नहीं हैं। इनकी मुखाकृति उनसे भिन्न है। पर वेशभूषा वैसी ही है।

डाकू को प्रतिबोध

साध्वी इन्द्रुजी ने हिम्मत कर पूछाह्न'भाई साहब! आप कौन हैं? कहां के हैं? यहां क्यों आए हैं?' डाकू सब मौन थे। कौन देता इन प्रश्नों के उत्तर? सब सुना-अनसुना करके नौ-दो ग्यारह हो गए। सबसे पीछे वाले डाकू ने कहाह्न'ठहरो! ठहरो, मैं अभी वापस आ रहा हूं। फिर जबाब दूंगा।' यों कहकर वह भी अपने साथियों के साथ जा मिला। साध्वी सजनांजी ने साध्वी इन्द्रुजी को उपालम्भ देते हुए कहाह्न'तुमने डाकू से बात करके अच्छा काम नहीं किया। यदि वह वापस आ गया तो पता नहीं क्या करेगा?' साध्वी इन्द्रुजी तहत् के सिवाय कुछ भी प्रत्युत्तर दिए बिना प्रहरी की भांति दरवाजे के बीचोंबीच बैठ गये। अन्य सब साध्वियां कमरे के भीतर बैठ गयी।

साध्वी इन्द्रुजी को यह विश्वास ही नहीं था कि डाकू वापस आएगा। पर, ज्योंही वह दूर से आता हुआ दिखाई दिया कि सबके हृदय का स्पन्दन कुछ क्षण के लिए तीव्र हो गया। ज्यादा चिन्ता साध्वी इन्द्रुजी को थी। जो होना होगा, वही होगा अब चिन्ता करने से क्या? यों सोच साध्वी इन्द्रुजी ने अपने आपको संतुलित किया। अन्य साध्वियां 'ॐ भिक्षु' का जप करने में संलग्न हो गई।

डाकू जब कमरे के निकट पहुंचा तब साध्वी इन्द्रुजी ने पूछाह्न'तुम अकेले वापस कैसे आए?'

डाकूह्न'मैं आपको कहकर गया था इसलिए वापस आया हूं।'

साध्वीश्रीह्न'और सब कहां गये?'

डाकूह्न'वे सब बनियों का धन लूंटने गए हैं।'

साध्वीश्रीह्न'तुमने धन नहीं लूंटा?'

डाकूह्न'धन तो जिन्दगी में खूब लूंटा है और लूंटता रहूंगा। आज तो वचन निभाने के लिए पहले आपके पास आया हूं।'

साध्वीश्रीह्न'तो फिर पहले ही यहां रुक जाते, वापस आना नहीं पड़ता।'

डाकूह्न'यदि आते ही बात करने लग जाता तो साथियों के साथ धोखा हो जाता। अब उन्हें सूचित करके आया हूं ताकि मुझ पर अविश्वास न हो।'

साध्वी इन्द्रुजी ने सोचाह्नजो आदमी वचन का इतना पक्का है वह निःसंदेह किसी उच्च जाति का है। अच्छे संस्कार में पला है। इसके बात करने का ढंग बड़ा शालीन है। लगता है किसी बुरी संगत से डकैती करना सीख गया है। साध्वी इन्द्रुजी ने उसे देव-गुरु-धर्म का परिचय देते हुए कहाह्न'अरे भाई! दिखने में बड़े भले लगते हो फिर यह बुरा काम क्यों करते हो? हाथ, पांव और दिमाग तुम्हारे पास है फिर दूसरों को लूंटकर क्यों पाप का भार सिर पर चढ़ाते हो। पाप का यह कर्ज चुकाओगे तब पता चलेगा। यह मनुष्य जीवन कुछ अच्छे कामों के लिए मिला है। इसे यों ही खोना बड़ी मूर्खता है। अपनी मेहनत से कमाया हुआ थोड़ा पैसा भी ज्यादा बरकत करता है। मुफ्त का धन लूंटने वाला कभी सुखी नहीं होता। अगर अपना दारिद्र्य मिटाना है तो अपनी भुजाओं की आश रखो, पराए धन की नहीं।'

हितकर उपदेश का तीर ऐसा लगा कि डाकू का हृदय बदल गया। उसने सदा सदा के लिए डकैती का पेशा छोड़ने का संकल्प ले लिया। संतों की वाणी में वह शक्ति है जो शैतान को इन्सान बना देती है। थोड़ी देर पहले जो खूंखार डाकू था वह अब सरल भद्र मनुष्य बन गया। क्रूरता करुणा में बदल गई। डाकू ने श्रद्धा से मस्तक झुकाया और बाहर जाने लगा,इतने में होहल्ला करते उसके डाकू-साथी वहीं आ पहुंचे। उन्हें कटार के वणिकों के पास धन माल विशेष मिला नहीं था अतःसबकी आंखों में रोष स्वाभाविक था। वे आक्रुष्ट स्वर में बोलेह्न'अरे! कब का बैठा है इन ढुंढणियों के पास। लगता है तुम पर तो इनका गहरा रंग चढ़ गया है। हम तो घूमते घूमते परेशान हो गये, कहीं कुछ हाथ नहीं लगा। अरे धन तो गया भाड़ में, कहीं कुछ खाने को भी नहीं मिला। बहुत देर हो गई ज्ञान सुनते सुनते। कोई ज्ञान से पेट नहीं भरता। चल उठ, अब तो कहीं रोटी की जुगाड़ कर।'

उस डाकू ने शांति से सबकी बातें सुनी और बोलाह्न'साथियो! जिनको आप

ढूंढणी कहकर मजाक उड़ा रहे हैं वे तो महाज्ञानवान सतियां हैं। देख लिया ना इनकी तपस्या का प्रभावह्वआज आप लोगों को डकैती में कुछ भी नहीं मिला। अच्छा हुआ जो मैं आपके साथ नहीं गया। वरना, मैं भी आपकी तरह खाली हाथ लौटता। मुझे तो आज ऐसा धन मिला है जो कभी खूट नहीं सकता।'

साथियों ने उत्सुक स्वर में पूछाह्व'अरे जल्दी बता वह धन कहां है?'

डाकूह्व'वह धन न मांगने से मिलता है, न खरीदने या लूंटने से।'

'तो फिर वह कौन सा धन है?' सबने उत्कर्ण होकर पूछा।

डाकूह्व'वह संतों के उपदेशामृत से मिलता है। उसका नाम है ज्ञान धन, जो हर व्यक्ति के हृदय में बसा हुआ है। संत तो उसको पाने का रास्ता बताते हैं।'

डाकू ने साध्वी इन्द्रुजी की तरफ संकेत करते हुए कहाह्व'मैंने तो इन सतीजी के उपदेश से डकैती करने का परित्याग कर दिया है। बस, अब तो अपने आप कमाऊंगा और अपना पेट भरूंगा। तुम लोग चाहो तो तुम भी त्याग कर दो।'

साथियों ने हंसकर कहाह्व'भला आया तूं इन मोड़ों के चक्कर में, देखते हैं कितने दिन नियम निभाता है?'

उस डाकू ने बड़े विश्वास के साथ कहाह्व'मैंने तो सोच समझकर अपनी इच्छा से त्याग लिए हैं, न कि जबर्दस्ती।'

साथियों ने खिल्ली उड़ाते हुए कहाह्व'ले छोड़ त्याग-वैराग की बातें, पहले पेट पूजा तो कर लो।' यों कहते कहते अन्य सब साथी उसे जबरन पकड़ कर बाहर ले गये।

जहां साधु होंगे वहां डाका नहीं डालेंगे

कुछ ही दूरी पर एक हलवाई की दुकान थी। वहां कुछ खाने पीने का सामान था। डाकू उसे खा पीकर मस्त हो चलते बने। जिस डाकू ने त्याग किये थे उसने एक दाना भी नहीं खाया। अन्य साथी उसकी इस दृढ़ नियम-निष्ठा को देखकर विस्मित थे। उनके मन में भी कुछ बदलाव आया। सबने कहाह्व'यद्यपि हम हमेशा के लिए डाका डालना नहीं छोड़ सकते किन्तु हम अंतर्मन से यह संकल्प करते हैं कि आज के बाद जिस किसी गांव में साधु होंगे वहां डाका नहीं डालेंगे।' उनकी इस प्रतिज्ञा से पहले त्याग करने वाले डाकू को बहुत खुशी हुई। उसने सोचाह्वत्याग का महत्व अब इनकी समझ में आने लगा है। आज इतना

संकल्प किया है, हो सकता है भविष्य में पूरा ही डाका डालना छोड़ दे। उसने अपने साथियों को खूब साधुवाद दिया।

डाकू जब बहुत दूर चले गए तब घरों में छुपे लोग बाहर आए और साध्वियों के पास जाकर कहने लगेह्न'महाराज! आज तो हम सब आपके प्रताप से बच गए। हम ही नहीं, हमारा धन माल भी बच गया। सामने पड़ा धन भी डाकुओं को नजर नहीं आया।' यह आश्चर्य की बात है। यह सचमुच आपके तप-जप का प्रभाव है। साध्वीश्री जी! ये डाकू तो इतने खूंखार थे कि धन तो क्या, जान को भी जोखिम में डाल देते, पर आपके प्रभाव से हम सब सुरक्षित रह गए। डाकुओं के मुख से हमने ये शब्द सुने हैंह्नआज के बाद जहां साधु होंगे वहां डाका नहीं डालेंगे। जो काम सरकार तलवार और हथियार से वर्षों तक नहीं कर सकी वह काम आपकी वाणी से मिनटों में संभव हो गया।

इस घटना से तेरापंथ की व्यापक प्रभावना हुई। जो लोग तेरापंथ के विरोधी थे अथवा कम आते जाते थे वे तेरापंथ के पक्के भक्त बन गए। साध्वी सजनांजी का वह लघु प्रवास कटार वासियों के लिए तो अमिट यादगार बन गया। साध्वी सजनांजी का जिस दिन कटार में पदार्पण हुआ उस दिन माहौल इतना डरावना था कि लोग घरों में मुंह छुपाए बैठे थे किन्तु जब साध्वियों का कटार से विहार हुआ उस दिन वातावरण इतना प्रसन्न था कि सबके अधरों पर तेरापंथ और आचार्य भिक्षु के जयनाद के स्वर मुखर हो रहे थे। कटार से विहार होने के बाद एक दिन साध्वी सजनांजी ने साध्वी इन्द्रुजी से कहाह्न'इन्द्रुजी! मैंने उस दिन डाकुओं से बात करने पर कहा था कि तुमने अच्छा काम नहीं किया पर अब लगता है तुम्हारा वह कार्य सामयिक और संघ प्रभावक रहा।' साध्वी इन्द्रुजी इन कृपा पूर्ण शब्दों को सुनकर गद्‌गद हो उठी। उन्होंने विनत स्वरों में कहाह्न'यह सब गुरुदेव का प्रताप और आपका अनुग्रह है, मैं तो मात्र निमित्त थी। वस्तुतः शक्ति तो आचार्य भिक्षु भेज रहे थे, जिससे यह सब संभव हो सका।'

ह्नः १० :ह्न
अग्रगण्य पद एवं स्वतंत्र विहार

आपकी योग्यताओं एवं क्षमताओं का प्रस्फुटन शैशव की धरती पर ही होने लगा था। यौवन तक पहुंचते पहुंचते वह और अधिक विकस्वर हो उठा। आचार निष्ठा आदि अनेक विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए वि. सं. २०१७ आमेट मर्यादा महोत्सव के पावन अवसर पर आचार्यश्री तुलसी ने आपको ३७ वर्ष की युवावय में अग्रगण्य पद पर नियुक्त किया। अपनी योग्य नानकी का यह मूल्यांकन देख साध्वी सजनांजी पुलक उठी। उन्होंने विनम्र शब्दों में आभार ज्ञापित करते हुए कहाह्न'गुरुदेव! इन्द्रुजी को अग्रणी बना कर आपने मुझ पर बड़ी कृपा की है। आप इन्द्रुजी को कहीं भी विचराएं, आपकी मर्जी की बात है किन्तु आपकी अनुकंपा से प्रतिवर्ष इन्द्रुजी से मिलना हो जाए, यही मेरी भावना है।' आचार्यवर ने विनोद भरे स्वर में फरमायाह्न'पच्चीस वर्ष हो गए नानकी को साथ रखते रखते, अभी तक मिलना बाकी रह गया क्या? साध्वी सजनांजी ने भी उसी विनोदी अंदाज में कहाह्न'गुरुदेव! साथ ज्यादा रह गए इसीलिए तो मिलने को मन अटकता है।' आचार्यश्री ने फरमायाह्न'ठीक है सजनांजी! तुम्हारी बात ध्यान में है। जैसा अवसर होगा वैसा संयोग स्वतः बैठ जाएगा। अब तुम इसका मोह छोड़ दो।' गुरुदेव के इस कथन से पूरे वातावरण में स्मित हास्य बिखर गया।

अग्रगण्य बनने के पश्चात् साध्वी इन्द्रुजी ने अपनी शक्ति को संघ-प्रभावना की दृष्टि से सलक्ष्य नियोजित किया। प्रचार का सशक्त माध्यम है यात्रा। साध्वी इन्द्रुजी ने लगभग अट्ठाईस हजार किलोमीटर की पदयात्रा कर हजारों लोगों को प्रतिबोधित किया। राजस्थान, हरियाणा, पंजाब, मध्यप्रदेश आदि प्रान्त आपके मुख्य विहार क्षेत्र रहे। ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए आपने इन क्षेत्रों में पूज्य गुरुदेव के निर्देशानुसार चातुर्मास किएह्न

क्रम	कहां	कब
१.	आमेट	वि.सं. २०१८
२.	उज्जैन	२०१९
३.	पेटलावद	२०२०
४.	रतनगढ़	२०२१
५.	विष्णुगढ़	२०२२
६.	जसोल	२०२३
७.	बाड़मेर	२०२४
८.	बालोतरा	२०२५
९.	ब्यावर	२०२६
१०.	टॉटगढ़	२०२७
११.	लाडनूं	२०२८
	आचार्यश्री तुलसी की सेवा में (सेवा केन्द्र में चाकरी)	
१२,१३.	टोहाना	२०२९,२०३०
१४.	हांसी	२०३१
१५.	शार्दूलपुर	२०३२
१६.	चाड़वास	२०३३
१७,१८.	बीदासर	२०३४,२०३५
१९.	सरदारगढ़	२०३६
२०.	देवगढ़	२०३७
२१.	पाली	२०३८
२२.	केलवा	२०३९
२३,२४.	गंगापुर	२०४०,२०४१
२५.	आमेट (आचार्यश्री तुलसी की सेवा में)	२०४२
२६-२८.	नाथद्वारा	२०४३-२०४५

यात्रा और उसकी उपलब्धियां

यात्रा मुनि जीवन का अनिवार्य व्रत है। यात्रा दो प्रकार की होती है अंतर्यात्रा और बहिर्यात्रा। अंतर्यात्रा का अर्थ है चेतना की यात्रा। जो अपने भीतर की यात्रा नहीं करता उसकी बहिर्यात्रा बहुत महत्त्वपूर्ण नहीं होती। जैन

मुनि की पदयात्रा भौतिकता के अंधकार में दिग्भ्रांत मनुष्यों को अध्यात्म का आलोक प्रदान करती है। उनकी यात्रा केवल क्षेत्रों का अवलोकन या मंजिल के फासलों को काटना मात्र नहीं है। वे व्यसनों और बुराइयों की गिरफ्त में जकड़े हुए लोगों को सदाचार, नैतिकता के कल्याणकारी पथ पर चलने की प्रेरणा देते हैं। साध्वी इन्द्रुजी इस कला में माहिर थीं। वे ग्रामीण लोगों के बीच व्याख्यान, सरस भजनों, लघुकथाओं, रोचक दृष्टांतों एवं चित्राम के पन्नों के माध्यम से अणुव्रत की बात सरल भाषा में लोगों के गले उतार देते। उनकी आकर्षक प्रवचन शैली से प्रभावित हो सैकड़ों लोगों ने व्यसन मुक्ति एवं आहार-शुद्धि का संकल्प ग्रहण किया। सैकड़ों लोगों ने सम्यक्त्व दीक्षा एवं शीलव्रत स्वीकार किया। जैन धर्म एवं तेरापंथ के मौलिक सिद्धांतों को अत्यन्त सूक्ष्मता से समझा।

संस्कार देने की कला

आप अपने प्रवासित क्षेत्रों में नए-नए कार्यक्रमों एवं तप-जप आदि उपक्रमों द्वारा नई जागृति का संचार करते रहते। बच्चों एवं बहनों को सिखाने का आपका विशेष प्रयत्न रहता। आपका अभिमत था महिला को संस्कार दिए बिना घर पक्का नहीं बनता। वैसे इस वैज्ञानिक युग में रटना सबको कठिन लगता है किन्तु कुछ चीजें ऐसी होती हैं जिन्हें रटना आवश्यक होता है। साध्वी इन्द्रुजी के सिखाने का तरीका इतना मधुर था कि सैकड़ों भाई बहनों ने पच्चीस बोल, प्रतिक्रमण, थोकड़े आदि कंठस्थ किए। गृहस्थों से अनावश्यक बातें करना आपको कभी अभीष्ट नहीं था। छोटे बच्चों से लेकर जवानों, बड़े बुजुर्गों तक सबको बांधे रखने की आपमें विशिष्ट क्षमता थी। उपासना में आने वाले व्यक्ति को यदि कुछ नया ज्ञान न मिले तो उन्हें संतोष नहीं होता था।

तत्वज्ञान सिखाने की आकर्षक शैली

जब कभी छोटी छोटी साध्वियां उन्हें वन्दना करने जाती तो वे तत्काल छोटे छोटे तात्त्विक एवं ऐतिहासिक प्रश्नों को पूछकर उनकी जिज्ञासा वृत्ति जगाती रहती। कुछ साध्वियां उनके प्रश्न का ठीक उत्तर दे देती तो कुछ नहीं भी दे पाती पर, वे किसी को हतोत्साहित नहीं करती। स्वयं सरलता से गूढ़ प्रश्नों को उत्तरित करती। ऐसा करने से नई साध्वियों के ज्ञान की अभिवृद्धि होती, समय का सदुपयोग होता। कुछ नया पाने का आकर्षण बना रहता। स्वयं का ज्ञान पक्का होता और ज्ञानावरणीय कर्म का सहज क्षयोपशम होता। गहरे बोलों को सीधा स्मृतिगत रखने के लिए वे अधिकतर पहेली की विधा काम में लेती

थी। पहेली एक ऐसी विधा है जिसका सबके मन में आकर्षण रहता है। पहेली के माध्यम से पूछी गई चीज स्थायित्व ग्रहण कर लेती है। साध्वी इन्द्रुजी को भी पहेली पूछने में रस आता था। उन्हें अनेक तात्विक पहेलियां कंठस्थ थी।

वि. सं. २०४५ की घटना है। उस समय आपका नाथद्वारा में प्रवास था। साध्वी रायकुमारीजी (राजलदेसर) का भी वहीं पदार्पण हुआ। उसी दौरान एक दिन संध्याकालीन प्रतिक्रमण के पश्चात् वन्दना करके ज्योंही मैं उठने लगी, आपने कहाह्नठहरो! मेरी पहेलियों का अर्थ बताकर जाओ। मैं चुपचाप वापस बैठ गई। साध्वी इन्द्रुजी ने उस समय मुझे जो पहेलियां पूछी, उनमें से दो पहेलियां यहां प्रस्तुत हैं।

तेसठ शलाका पुरुष में, इकसठ माता जाण।
पिता तो बावन कह्या, गुणसठ जीव पिछाण।।१।।
लख चौरासी जूण में, गूंगा बावन लाख।
बत्तीस कह्या बोलता, चोपन कै नहि नाक।।
चोपन कै नहि नाक, आंख छप्पन क नाहीं।
अठावन कै नहि कान, साख शास्तर मांहीं।।२।।

मैंने अपनी समझ के अनुसार थोड़ा अर्थ बताया किन्तु पूरा स्पष्ट नहीं बता सकी। आखिर साध्वीश्री ने पहेलियों के अर्थ को विश्लेषित करते हुए कहाह्नतत्त्वज्ञान हमारी बुनियाद है। उसे मजबूत बनाए बिना साधना का प्रासाद टिकाऊ नहीं बन सकता। अभी बचपन का समय है। क्षण-क्षण का उपयोग करो। जैसे भी, जहां भी मिले ज्ञानार्जन का लक्ष्य रखो।' मैं साध्वीश्री की इस प्रेरणा को पाकर धन्य हो उठी। तत्त्वज्ञान के प्रति मेरी अभिरुचि प्रारंभ से रही थी, साध्वी इन्द्रुजी की प्रेरणा से वह और अधिक बलवती बन गई। साध्वीश्री को न केवल तात्त्विक बोलों की ही अच्छी जानकारी थी बल्कि संघीय परम्पराओं, वस्त्र-पात्र-उपकरण, गोचरी, शय्यातर संबंधी कल्प आदि की पुरानी धारणाओं की भी प्रामाणिक एवं ठोस जानकारी थी। अनेक साध्वियां इस संदर्भ में आपसे समय-समय पर परामर्श लेती रहती थी।

जन सम्पर्क

महावीर की साधना शैली निश्चय और व्यवहार इन दोनों धाराओं का स्पर्श करती हुई आगे बढ़ती है। निश्चय दृष्टि से आत्म प्राप्तिह्नआत्म संपर्क मुनि जीवन का मुख्य लक्ष्य है। वहां व्यवहार की दृष्टि से जन संपर्क भी मुनि-चर्या का अभिन्न अंग है। आत्म सम्पर्क के हेतु-भूत तत्त्व हैह्नध्यान, तपस्या

स्वाध्याय आदि। जन-सम्पर्क के हेतुभूत घटक हैंह्न प्रवचन, परिव्रजन, वार्तालाप, प्रेरणा आदि। साध्वी इन्द्रुजी ने आत्म-साधना में सतत सजग रहने के साथ-साथ व्यापक जन सम्पर्क भी किया और समाज की नैतिक चेतना के पुनर्जागरण के लिए अणुव्रत आंदोलन को जन व्यापी बनाने में अपना यथाशक्ति योगदान दिया।

उनका प्रवास जहां भी होता वे उस क्षेत्र की पूरी संभाल करती। एक-एक घर और एक एक व्यक्ति की आंतरिक प्रतिलेखना करना वे अपना महत्त्वपूर्ण दायित्व मानती थी। इस दृष्टि से वे सामूहिक गोष्ठियों एवं पारिवारिक गोष्ठियों का क्रम चलाती। संगठन को सक्रिय एवं मजबूत बनाने के लिए विशेष प्रयास करती। जहां कहीं भी विग्रह या फूट की थोड़ी सी भनक आपके कानों में पड़ती तो आप उसे मिटाने के लिए कटिबद्ध हो जाती। किसी से तोड़ो मत, जितना हो सके सूई की भांति टूटे दिलों को जोड़ो। इस संदर्भ में आप बहुधा यह दोहा फरमाया करती थीह्न

मोती फाट्यो बींधता, मन फाट्यो इक बोल।
मोती और मंगावस्यां, मनड़ो मिलै न मोल।।

आपकी वाणी में सहज मृदुता थी, जिससे अक्खड़ से अक्खड़ व्यक्ति भी तत्काल झुक जाता। आपकी प्रेरणा से अनेक लोगों ने अपने जीवन की धारा को बदला और एक नई दिशा की ओर अपने कदमों को गतिमान किया।

ह्नः ११ :ह्न
संतुलन प्रतिकूल परिस्थिति में

महान वह नहीं होता जो गड्ढों को खोदना जानता है। महान वह होता है जो गड्ढों को भरना जानता है। प्याज के छिलकों की तरह बात को उखेड़ने से समस्या का समाधान नहीं होता। समस्या का समाधान होता है उर्वर मस्तिष्क से, स्फूर्त चिन्तन से, वैचारिक उदारता से, अनाग्रह बुद्धि से, अहं विसर्जन से, स्पष्ट दृष्टिकोण से, सहिष्णुता और धैर्य से। जिसके पास विधायक चिन्तन नहीं होता वह किसी जटिल समस्या को समाहित नहीं कर सकता। निषेधात्मक भाव व्यक्ति को निराश, कुंठित, क्रोधी और चिड़चिड़ा बनाते हैं। विधायक भाव आशावादी, उत्साही, शांत, गंभीर और प्रभास्वर व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं। हर व्यक्ति के मन में दोनों प्रकार के भाव होते हैं। निषेधात्मक भावों की बहुलता व्यक्ति को पतन की ओर धकेल देती है। विधायक भावों की बहुलता प्रगति के नए द्वार उद्घाटित करती है। साध्वी इन्द्रुजी के चिन्तन में विधायक भावों का प्राबल्य था। तिल को ताड़ और राई को पहाड़ बनाने वाले लोगों की दुनियां में कमी नहीं है। किन्तु ताड़ को तिल और पहाड़ को राई के रूप में देखने वाले लोग विरल होते हैं। परिस्थितियां भला किसके जीवन में नहीं आती किन्तु जिनकी सोच का आधार विधायक होता है वे अंधेरे में भी उजाला ढूंढ लेते हैं। साध्वी इन्द्रुजी के जीवन में भी अनेक प्रतिकूल परिस्थितियां आई किन्तु हर प्रतिकूलता में उन्होंने अनुकूलता का अहसास किया। हर विफलता को उन्होंने सफलता में बदलने का प्रयास किया। कटुता के क्षणों में भी मधुरता के रस को घोलने का आयास किया।

बाड़मेर चातुर्मास : विरोध और संघर्ष का बीज

विक्रम संवत् २०२४ में साध्वी इन्द्रुजी का बाड़मेर में चातुर्मास था। उसी वर्ष वहां मूर्तिपूजक संत कान्तविजयजी आदि ठाणा दो का पावस प्रवास था।

चातुर्मास से पूर्व मुनि कांतविजयजी का प्रवास बाड़मेर के निकटवर्ती क्षेत्र नाकोड़ा में था। संयोगवश साध्वी इन्द्रुजी का भी नाकोड़ा पदार्पण हुआ। कई भाइयों के सामने अपना परिचय देते हुए संत कान्तविजयजी ने कहाह्न'मैं सुजानगढ़ का हूं। सुजानगढ़ में जो सींघी जी का मन्दिर बना है वह मेरे पूर्वजों द्वारा निर्मित है।' यह बात कुछ तेरापंथी भाइयों को सच प्रतीत नहीं हुई। वे साध्वियों के ठिकाने आए। प्रस्तुत संदर्भ में जिज्ञासा की। सुजाणांजी ने कहाह्नये मेरे संसारपक्षीय भुआजी के पौत्र हैं। इनके पिता का नाम मंगतमलजी सींघी हैं। ये सुजानगढ़ के नहीं, वस्तुतः रतनगढ़ के हैं। कुछ वर्षों पूर्व ये तेरापंथ में दीक्षित हुए थे। संघ से बहिष्कृत होने के बाद ये मूर्तिपूजक सम्प्रदाय में प्रव्रजित हो गए। इनका परिचय तो मैं अच्छी तरह जानती हूं।' साध्वी सुजाणांजी के मुख से यथार्थ परिचय सुन श्रावक स्तब्ध रह गए। वहीं उपस्थित कुछ श्रावक उठे और सीधे संत कान्तविजयजी के पास पहुंच गए। एक साथ अनेक तेरापंथी श्रावकों की उपस्थिति देख मुनिजी ने पूछाह्नअभी कैसे आए हैं आप? यह सुनते ही एक व्यक्ति ने परिचय की बात का हवाला देते हुए कहाह्न'मुनिजी! साधु होकर भी क्यों असत्य बोल रहे हैं आप? हैं तो रतनगढ़ के और बता रहे हैं सुजानगढ़ के। हम आपके बहकावे में नहीं आने वाले हैं। आपका असली परिचय हमें साध्वीश्री से मिल गया है।' श्रावकों की यह बात सुन मुनिजी क्षुब्ध हो गए। वे श्रावकों को फटकारते हुए बोलेह्नतुम्हें क्या पंचायती है साधुओं के बीच बोलने की। हम जानें हमारा काम जाने। गृहस्थ को साधुओं से क्या लेना देना? श्रावक दुगुने जोश के साथ बोल उठेह्न'हमें भी भगवान् महावीर ने बोलने का अधिकार दिया है। हम आज के नहीं, पीढ़ियों के श्रावक हैं। हमारा विनम्र निवेदन है कि आप अपनी भूल सहजता से स्वीकार कर लें, इसी में आपका कल्याण है।'

मुनिजी झल्लाते हुए बोलेह्न'बड़े आए मेरे कल्याण और हित की चिंता करने वाले। पहले अपना कल्याण तो कर लो।' इस तरह बात ही बात में बहस शुरू हो गई। कौन करे अब सच्चाई का फैसला? श्रावकों ने सोचाह्नअब इन्हें कुछ भी कहने का कोई अर्थ नहीं है। मौन रहना ही श्रेयस्कर है। यों सोच श्रावक वहां से लौट आए।

भ्रामक प्रचार

श्रावक तो अपने अपने घर चले गए पर मुनि कांतविजयजी का क्षोभ कम नहीं हुआ। संघ से बहिष्कृत किए जाने के कारण तेरापंथ के प्रति उनके मन में पहले से आक्रोश था ही। इस घटना के बाद वह और अधिक गहरा हो गया। वे

समय की प्रतीक्षा में थे। इधर नाकोड़ा से साध्वी इन्द्रुजी का दूसरे दिन विहार हो गया। कुछ दिन बाद मुनिजी ने भी बाड़मेर की ओर विहार कर दिया। मुनिजी विहार करते-करते निश्चित समय पर बाड़मेर की सीमा में पहुंचे। उधर साध्वी इन्द्रुजी का भी चातुर्मासिक क्षेत्र में पदार्पण हो चुका था। संतों के चातुर्मासिक प्रवेश के उपलक्ष में विशाल जूलूस निकाला गया। रास्ते में साध्वियों का ठिकाना आ गया। साध्वियां उस समय ऊपर की मंजिल के बरामदे में खड़ी थी। सहसा जयकारों की आवाज सुन साध्वियों ने सहज भाव से नीचे की ओर झांका। संयोगवश उसी समय मुनिजी का भी ऊपर की ओर देखना हुआ। बस, अब क्या था? मुनिजी जिस अवसर की ताक में थे वह सहज मिल गया।

उन्होंने अपने श्रावकों के माध्यम से जगह-जगह यह प्रचार करवा दिया कि तेरापंथी साध्वियों में बोलने का विवेक नहीं है। उन्होंने कल जुलूस में हमें चलते देखकर कहाह्न'देखो! ये मसटण्ड जा रहे हैं। क्या साध्वियों को ऐसे अभद्र शब्दों का प्रयोग करना कल्पता है? मसटण्ड हैं तो क्या हुआ? क्या इनकी पांती का खा रहे हैं?' ऐसी भ्रामक बातें सुनकर लोग भड़क उठे। आग को फैलते कितनी देर लगती है? हवा की तरह कुछ ही दिनों में यह बात बाजारों, घरों और दुकानों की चौखट पर चढ़ गई। जहां भी देखो, पूरे बाड़मेर में एक चर्चा। तिल का ताड़ और राई का पहाड़ बने इसमें कोई आश्चर्य नहीं। आश्चर्य तो तब होता है जब बिना तिल ही ताड़ और बिना राई ही पहाड़ खड़ा कर दिया जाता है। यही स्थिति बाडमेर की थी। साध्वी सुजाणांजी के सहज देखने मात्र को विद्रोहियों ने अपनी महत्वाकांक्षा को पूरी करने का अच्छा साधन बना लिया। तेरापंथ की हेठी दिखाने में रस लेने वाले लोगों को अब मनचाहा मौका मिल गया।

विरोध का प्रत्युत्तर शब्दों से नहीं, मौन से

भीड़ का अपना कोई स्वतंत्र चिन्तन नहीं होता। वह जिधर पलड़ा भारी देखती है, उधर झुक जाती है। बाड़मेर में मूलतः ही मंदिरमार्गी श्रावकों का संख्या-बल अधिक था फिर इस घटना से अन्य जातियों के लोग भी उनके साथ हो गए। सबने मिलकर भ्रम का ऐसा जाल फैलाया कि सचाई तक पहुंचने का दृष्टिकोण लुप्त सा हो गया। एक तरफ हजारों लोग और दूसरी तरफ मात्र गिने चुने आदमी। साध्वी इन्द्रुजी ने देखाह्नइस समय श्रावक वर्ग को प्रशिक्षित नहीं किया गया तो विग्रह बड़ा भयंकर रूप ले सकता है। उन्होंने श्रावकों की गोष्ठी आयोजित कर पहले से ही यह निर्देश दे दियाह्न'श्रावको! आचार्य भिक्षु

से लेकर आचार्य तुलसी तक का इतिहास का साक्षी है कि तेरापंथ ने विरोध का प्रतिकार विरोध से नहीं, विनोद से किया है। यह समय हम सबके लिए जटिल परीक्षा का समय है। हमें अपनी संघीय परम्पराओं और मर्यादाओं की गरिमा के अनुरूप शांति का परिचय देना है।' साध्वीश्री के इस सामयिक उद्‌बोधन का श्रावकों पर ऐसा असर हुआ कि सबने विरोध का उत्तर शब्दों से नहीं, मौन से देना शुरू कर दिया।

विद्रोह की तीखे स्वर

इकतरफा संघर्ष अभी भी जारी था। जब छोटे मोटे उपायों से श्रावक उत्तेजित नहीं हुए तब उन्होंने एक नई तरकीब निकाली। वहां कई ऐसे परिवार थे जिनमें बहुएं तेरापंथी घरों की थी और भाई मंदिरमार्गी। धूली बाई वहां की प्रसिद्ध श्राविका थी। उसका पीहर 'बायतू' (मारवाड़) के तेरापंथी परिवार में था और ससुराल बाड़मेर के मंदिरमार्गी परिवार में। धूलीबाई पर भी मंदिरमार्गी श्रद्धा स्वीकार करने हेतु खूब दबाव डाला गया किन्तु उसकी रग-रग में तेरापंथ की आस्था रमी हुई थी। एक बार की बात है। मंदिरमार्गी संत उसके घर गोचरी पधारे। उस समय वह असूझती (अप्रासुक) थी। घर में अन्य कोई बहराने वाला नहीं था। संतों ने पूछाह्नबहन! गोचरी आएं क्या? धूलीबाई ने सहज भाव से कहाह्न'महाराज! मैं तो अभी असूझती (बहराने योग्य नहीं) हूं। अन्य कोई व्यक्ति घर में अभी है नहीं।' यह सुनते ही संत तमतमा उठे। बाहर आकर संतों ने कहाह्नतेरापंथी घरों की लड़कियां हमें दान नहीं देती हैं। यहां तक कि हमें दान देने में पाप बताती हैं। श्रावकों ने जिज्ञासा की कि ऐसी कौन सी बहन है जिसने आपके साथ ऐसा दुर्व्यवहार करने की हिम्मत की है? मुनिजी ने धूलीबाई का नाम प्रस्तुत कर दिया।

अनेक मंदिरमार्गी श्रावक इन बातों को सुन अधिक उग्र हो गए। श्रावकों ने मिलकर यह निर्णय कर लिया कि अपने समाज के किसी भी व्यक्ति को तेरापंथी महाराज के पास नहीं जाने देना है और न ही उन्हें कुछ बहराना है। यदि कोई भूल से या कुतूहलवश गया तो उसे जुर्माना भरना पड़ेगा। यह घोषणा पूरे शहर में प्रचारित कर दी गई। वातावरण अत्यन्त दूषित हो गया। हालांकि कुछ लोग ऐसे भी थे जिनके मन में तेरापंथ के प्रति आदर के भाव थे। किन्तु लोकापवाद के भय से वे साध्वियों के ठिकाने आने में सकुचाते थे। कई लोग ऐसे भी थे जो येन केन प्रकारेण तेरापंथ की अवज्ञा की साजिश रच रहे थे। इस कार्य में विशेषतः युवा वर्ग को बहका-फुसलाकर अगुआ बना दिया गया। वे

बुजुर्गों की शह पाकर हुल्लड़बाजी करने में रस लेने लगे। साध्वियां जब गोचरी जाती तो रास्ते में स्थान-स्थान पर पांच-पांच सात-सात युवकों की टोलियां जोर जोर से व्यंग्य-विनोद एवं अट्टहास करती। फिर भी साध्वियां मौन भाव से सब कुछ सह रही थी।

शर्त अठाई की

एक दिन साध्वियां गोचरी करके ठिकाने आ रही थी। कुछ युवक सामने आये, साध्वियों को घेरकर खड़े हो गए और चिल्लाने लगेह्न'अरे! ये नाम के तो साधु हैं और काम गृहस्थ से भी जघन्य करते हैं। इन्होंने तो जैन धर्म को ही भ्रष्ट कर दिया है। देखो! देखो! अभी अभी ये इस घर से प्याज लहसुन आदि जमीकन्द पात्री में लेकर आए हैं।' युवकों की आवाज सुनकर बिना बुलाए अच्छी भीड़ इकट्ठी हो गई। सब उन युवकों के स्वर में स्वर मिलाने लगे। साध्वी इन्द्रुजी ने देखाह्न'अब यदि शंका का समाधान नहीं किया गया तो संघ की प्रतिष्ठा पर प्रश्नचिह्न लगेगा।' साध्वी इन्द्रुजी ने कड़कते हुए कहाह्न'किसने देखा हमें प्याज लहसुन लेते हुए। यदि किसी ने देखा हो तो वह आगे आकर कहे।' यह सुन कुछ युवक भीड़ को चीरकर आगे बढ़े और छाती ठोककर बोलेह्न'आंखों देखा सत्य झूठ कैसे हो सकता है? हमने छत पर खड़े होकर देखा है। अभी अभी तुम उस घर से जमीकंद लेकर आई हो।'

साध्वी इन्द्रुजीह्न'हमारी पात्री में जमीकंद की कोई चीज नहीं है।'

युवकह्न'पात्री खोलकर दिखाओ, अभी पता चल जाएगा।'

साध्वीश्रीह्न'पात्री बाहर निकालकर दिखाने में मुझे कोई आपत्ति नहीं किन्तु पात्री में प्याज लहसुन नहीं निकला तो तुम क्या करोगे?'

युवक ने तीव्र स्वर में कहाह्न'यदि आपकी पात्री में जमीकंद की वस्तु निकले तो आप अट्ठाई करना। नहीं निकले तो मैं अट्ठाई करूंगा।'

यह शर्त सत्य और झूठ का निर्णायक बिन्दु बन गई। अब सबके आकर्षण का एकमात्र केन्द्र थी साध्वी इन्द्रुजी के हाथ में थमी हुई झोली।

सूरज की तीखी किरणें ज्यों ज्यों धरती को गरमा रही थी, लोगों की उत्सुकता त्यों त्यों बढ़ती जा रही थी। चौक पूरा लोगों से भर गया। साध्वीश्री को पात्री खोलकर दिखाने का यह उपयुक्त समय लगा। साध्वीश्री एक ऊंचे चबूतरे पर खड़ी हो गई। झोली से पात्र निकाले, एक-एक पात्री चारों तरफ घुमाकर दिखाई। पर अन्दर जमींकंद की वस्तु थी ही नहीं, तो दिखाई कहां से

देती। दर्शक विस्फारित नजरों से देखते रह गए। उन्हें अपने कृत्य पर पश्चात्ताप हो रहा था। अब सब उस युवक की पीठ पर थपेड़े लगा रहे थे, जिसने अठाई तप करने की घोषणा की थी। पूर्व निर्णयानुसार उसने उसी समय एक साथ आठ दिन की तपस्या पचख कर अपने वचन का पालन किया।

तेरापंथियों की विजय का उल्लास कैसे सहन होता? वे कुछ बोले, उससे पहले ही सबकी शंका निर्मूल करते हुए साध्वी इन्द्रुजी ने फरमायाह्न'भाइयो! इस तरह मार्ग चलते साधुओं के साथ ऐसा अभद्र व्यवहार करना कभी उचित नहीं होता फिर भी हमारे मन में किञ्चित भी रोष नहीं है किन्तु भविष्य में ऐसी घटना की पुनरावृत्ति न हो, इसके लिए सावधान रहें। यद्यपि आज हमारी पात्री में प्याज, लहसुन आदि कोई भी जमींकंद वस्तु नहीं थी किन्तु कभी हो भी सकती है। यदि होती तो भी कोई दोष नहीं था।'

यह बात सुनते ही कुछ लोग बोल उठेह्न'अरे! इन तेरापंथियों ने तो महावीर के सिद्धांतों को ही झुठला दिया है। गजब हो गया, ऐसे साधुओं की अपेक्षा तो हम गृहस्थ ही अच्छे हैं·····।'

प्रमाण दिखाएं

साध्वी इन्द्रुजी शांति से सब कुछ सुनते गए। जब वे मौन हुए तब साध्वीश्री ने उच्चस्वर में कहाह्न'भाइयो! अभी आपने कहाह्नतेरापंथियों ने तो महावीर के सिद्धांतों को ही झुठला दिया है। खैर, कोई बात नहीं। तुम लोग यह तो बताओ कि महावीर ने कौन से आगम में यह बात कही है कि साधु को प्याज, लहसुन आदि जमींकंद पदार्थ नहीं लेने है। यदि आपके पास प्रमाण हो तो दिखाएं।' यह प्रश्न सुनते ही सब सकपका गये। प्रमाण था ही नहीं, दिखाते कैसे? सब एक दूसरे की तरफ झांकने लगे।

साध्वी इन्द्रुजी ने प्रसंग को आगे बढ़ाते हुए कहाह्न'साधु अपने लिए न स्वयं बनाता है, न किसी गृहस्थ से बनवाता है। गृहस्थ के घर जो कुछ सहज निष्पन्न अचित्त द्रव्य उपलब्ध हो तो उसे लेने में कोई दोष वाली बात नहीं। यह सच है कि प्याज, लहसुन आदि पदार्थ जमीकंद हैं किन्तु पकने के बाद उसमें किसी प्रकार के जीवत्व की संभावना नहीं रहती फिर उसे लेने में इतना विरोध क्यों? जमींकंद द्रव्य को पकाने में जो हिंसा होती है वह गृहस्थ के निमित्त होती है। गृहस्थ यदि अपने निमित्त बनाए हुए द्रव्य को साधु को बहराता है तो उसमें कहीं दोष का प्रसंग नहीं।' साध्वीश्री का युक्तियुक्त उत्तर सुन कुछ लोग शांत हो गए किन्तु कुछ लोग इससे सहमत नहीं हुए। उन्होंने प्रतिप्रश्न की भाषा में

कहाह्न'अच्छा! अच्छा! यह सारा विश्लेषण तो कोरा वाग्विलास मात्र है। अपनी रस लोलुपता को ढकने के लिए साधु को कुछ न कुछ तो तर्क देना ही पड़ता है लेकिन मूल सवाल तो यह है जब हमारे साधुओं का जमीकंद खाए बिना काम चल सकता है तो आपका क्यों नहीं चल सकता? इस बात से स्पष्ट जाहिर है कि हमारे साधु आचार में कठोर हैं और तेरापंथी साधु ढीले हैं।

प्रश्नकर्ता ने जितनी उत्तेजना के साथ प्रश्न किया, साध्वीश्री ने उतनी ही धीरता के साथ सुना। उत्तेजना के क्षणों में अनुत्तेजित रहना ही एक मुनि की साधना है। शांत स्वर में प्रश्न को उत्तरित करते हुए आपने कहाह्न'भाइयो! पहली बात तो यह है कि क्या आप कठोर और शिथिल आचार की भेद रेखा को समझते हैं? तीर्थंकरों ने जिस कार्य की आज्ञा दी है वह आचार सम्मत है। जो कार्य आज्ञा विहित नहीं, वह आचार विरुद्ध है। इस मान्यता के आधार पर जब भगवान ने साधु के लिए अचित्त जमीकंद ग्रहण का निषेध नहीं किया तो फिर कठोर और शिथिल आचार का मुद्दा उठाना ही व्यर्थ है। दूसरी बात यह है कि साधु सहज प्रासुक एषणीय द्रव्य ग्रहण करे तो उसमें कोई दोष नहीं। दसवैकालिक सूत्र के प्रथम अध्ययन में स्पष्ट उल्लेख हैह्न

वयं च वित्तिं लब्भामो, न य कोइ उवहम्मई।
अहागडेसु रीयंति, पुप्फेसु भमरा जहा।।४।।

इस अर्हत् प्रतिपादित विशुद्ध श्रमण चर्या की आराधना करते हुए तेरापंथ के साधु ढीले कैसे हुए? इस संदर्भ में आप लोगों को यह तर्क छोड़ देना चाहिए कि हमारे साधु जमीकंद ग्रहण नहीं करते इसलिए वे आचार में कठोर हैं।'

श्रावकह्न'यह कैसे हो सकता है? हमारे साधु जमीकंद की कोई वस्तु पात्र में ही नहीं लेते, खाने की बात तो बहुत दूर है।'

साध्वीश्रीह्न'क्या आपके साधु भोजन नहीं करते?'

श्रावकह्न'करते हैं।'

साध्वीश्रीह्न'भोजन में कौन से द्रव्य लेते हैं?'

श्रावकह्न'दाल, रोटी, सब्जी, भात आदि।'

साध्वीश्रीह्न'सब्जी के छोंक में क्या-क्या चीजें डाली जाती हैं?'

श्रावक (कुछ झुंझलाते हुए)ह्न'महाराज! आप कहना क्या चाहते हैं? स्पष्ट बताएं। एक लड़की भी जानती है कि सब्जी के छोंक में हल्दी, धाणा, मिर्च, तेल, जीरा आदि चीजें पड़ती हैं।'

साध्वीश्रीह्न'श्रावकों! आप कहते हैं कि सब्जी के छोंक में हल्दी पड़ती है और हल्दी निश्चित रूप से जमीकंद होती है। क्या आपके महाराज हल्दी को टालकर सब्जी खाते हैं?'

'यह कैसे संभव है?'

'फिर जमीकंद का सेवन तो हो ही गया।' साध्वी इन्द्रुजी ने सहज गंभीरता के साथ कहा।

एक श्रावक ने स्थिति को संभालते हुए कहाह्न'हमारे महाराज तो केवल हल्दी का ही सेवन करते हैं किन्तु आप लोगों के तो जमीकंद की कोई सीमा ही नहीं है। जो मिले वही पात्री में डलवा लेते हैं फिर आपके और हमारे साधुओं की तुलना एक साथ कैसे हो सकती है।'

साध्वी इन्द्रुजी ने प्रतिप्रश्न कियाह्न'क्या आपके महाराज सौंठ, अदरक का सेवन नहीं करते?'

श्रावकह्न'हां, उसको तो कभी-कभी ले लेते हैं।'

'क्या सोंठ जमीकंद नहीं होती?'

अब श्रावक क्या बोलते? उन्हें ऐसा लग रहा था जैसे उनका वार उन्हीं पर प्रहार कर रहा है। वे यह सोच विस्मित रह गएह्नतेरापंथ की साध्वियां ही जब चर्चा करने में इतनी तेज है तो साधुओं की तो बात ही क्या? इनसे चर्चा करने का मतलब है अपनी पराजय को न्यौता देना।

साध्वी इन्द्रुजी के पास जहां आगम का ठोस ज्ञान था वहां उसे प्रस्तुत करने का कौशल भी था। एक डेढ़ घण्टे की लम्बी बहस का जो परिणाम आया, उससे वे हताश एवं निराश हो गए। संत कांतविजयजी के पास पहुंचे, आद्योपान्त सारी घटना सुनाते हुए बोलेह्न'मुनिश्री! ये तेरापंथी साध्वियां तो चर्चा करने में इतनी निपुण है कि कोई इन पर हावी नहीं हो सकता। इस तरह इनका कार्यक्रम चला तो अपने कई श्रावक उनकी तरफ आकर्षित हो जाएंगे। हमारी तो केवल संख्या ही बड़ी है पर शक्ति उनमें ज्यादा है। उनसे टक्कर लेना इतना सरल नहीं है जितना हमने समझ रखा है। हमें कोई ऐसी योजना बनानी होगी, जिससे उनका प्रभाव कम किया जा सके।'

श्रावकों से परामर्श कर मुनिश्री ने तेरापंथ के श्रावक-समाज को आकृष्ट करने का निर्णय किया। प्रलोभन के द्वारा उन्हें तेरापंथ की श्रद्धा से विचलित करने की कल्पना की। इसे क्रियान्वित करते हुए भीतर ही भीतर धन, वैभव

और पद का प्रलोभन देकर तेरापंथ के श्रावकों को आकृष्ट करना शुरू कर दिया। श्रावकों को मुनिजी की कूटनीति भांपते देर न लगी। उन्होंने दो टूक शब्दों में जबाव देते हुए कहाह्न'महाराज! धन वैभव तो हमारे भाग्य में जितना लिखा होगा उतना स्वतः मिल जाएगा। पहले कम से कम अपने श्रावकों को तो सम्पन्न बना दीजिए।'

भगवान् महावीर ने तो स्पष्ट कहा हैह्न'अप्पा कत्ता विकत्ता य दुहाण य सुहाण य' अर्थात् सुख दुःख की कर्त्ता आत्मा स्वयं है। संसार के इस क्षणिक वैभव से न किसी को तृप्ति मिली है न मिलेगी फिर इस चन्द सुख के लिए हम अपने देव, गुरु, धर्म रूपी अमूल्य सम्यक्त्व रत्न को क्यों खोएं? कदाचित् सूरज पूरब से पश्चिम में उग सकता है किन्तु हमारी श्रद्धा में तनिक भी फर्क नहीं आ सकता। आगमों में कहा हैह्न'सद्धा परं दुल्लहा' श्रद्धा परम दुर्लभ है और वही मुक्ति रूपी महल की मजबूत नींव है।

बाड़मेर में अनेक श्रावक मंदिरमार्गी से तेरापंथी बने थे इसलिए कान्तविजयजी का प्रयास था कि किसी तरह समझा बुझाकर उन्हें पुनः मंदिरमार्गी बना दिया जाए। उन्होंने श्रावकों को जोर देकर कहाह्न'अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा है। आप लोग पुनः अपनी परंपरा का धर्म स्वीकार कर लें। तेरापंथ की श्रद्धा स्वीकार करने वाला कभी सुखी नहीं रह सकता।'

श्रावकों ने स्पष्ट शब्दों में कहाह्न'महाराज! आप व्यर्थ की बातें कहकर हमें क्यों भ्रम में डाल रहे हैं? सुख-दुःख तो अपने अपने कर्मों के अनुसार मिलेगा। न तो सब मंदिरमार्गी सुखी हैं और न ही सब तेरापंथी दुःखी हैं। दुःख-सुख का संबंध तो व्यक्ति के कर्मों से है न कि सम्प्रदाय विशेष से। सम्यक्त्व कोई चोला तो है नहीं, जिसे जब चाहे उतार दिया जाए और जब चाहे पहन लिया जाए। यह तो आंतरिक श्रद्धा पर निर्भर है। हमने किसी प्रलोभन में आकर तेरापंथ की श्रद्धा स्वीकार नहीं की है जो थोड़ा सा झोंका आते ही टूट जाए। हमारी श्रद्धा मजीठ के रंग की तरह पक्की है क्योंकि हमने सही तत्व समझ कर तेरापंथ धर्मसंघ को अपनाया है न कि भय, आवेश या भ्रम वश। आप एक बार कहें या लाख बारह्नहम अपनी श्रद्धा से तनिक भी हिलने वाले नहीं हैं।' श्रावकों की इस स्पष्टोक्ति से उनकी आशा पर तुषारापात हो गया।

अवांछनीय घोषणाएं

चातुर्मास का समय अपनी गति से आगे बढ़ रहा था। श्रावण मास पूरा हो गया। संवत्सरी महापर्व सामने था। इस महापर्व की प्रायः सभी श्रावक आराधना

करते हैं। इस दिन श्रावक समाज व्याख्यान सुनने के लिए पंचायती नोहरे में एकत्रित हुआ। मुनिजी ने सोचाह्नआज जितनी उपस्थिति चातुर्मास में कभी होने वाली नहीं है। अतः जो कुछ कहना है आज ही कह देना चाहिए। यह सोच संत कांतविजयजी ने नोहरे के मुख्य द्वार को बन्द करवा दिया। अब किसी को भी कहीं बाहर जाने का अवकाश नहीं था। सबकी आंखों में एक ही सवाल था कि आखिर यह सब क्यों? जनता की प्रश्नायित चिन्तनधारा को मोड़ देते हुए संत कांतविजयजी ने कहाह्न'श्रावको! मैंने आप सबको एक विशेष उद्देश्य से एकत्रित किया है। वह उद्देश्य है तेरापंथ के प्रभाव को कम करना। इस उद्देश्य को सफल बनाने के लिए मैं आज सबके बीच सामूहिक रूप से कुछ नियमों की घोषणा कर रहा हूं, जिनका पालन अनिवार्य है।

१. आज के बाद कोई भी व्यक्ति तेरापंथी साधुओं को दान नहीं दे सकेगा।

२. कोई भी व्यक्ति तेरापंथी साधुओं के ठिकाने नहीं जा सकेगा।

३. तेरापंथी परिवारों में जिनके सगाई संबंध तय हुए हैं, चाहे लड़के का हो या लड़की का, उन संबंधों को कोई नहीं रख सकेगा।

४. तेरापंथी परिवारों की लड़कियां शादी-विवाह, जन्म-मृत्यु आदि प्रसंगों में भी अपने पीहर नहीं जा सकेंगी।

५. तेरापंथी लड़कियां, जो मंदिरमार्गी परिवारों की बहुएं होते हुए भी मंदिर में नहीं आती हैं, उन्हें निश्चित रूप से मंदिरमार्गी सम्यक्त्व लेनी होगी।

६. जो इन नियमों का उल्लंघन करेगा उसे जुर्माना स्वरूप मंदिर में रुपए चढ़ाने होंगे। अगर तेरापंथियों के साथ कोई संबंध रखेगा तो उसे जुर्माने के अतिरिक्त न्यात बाहर (समाज से बहिष्कृत) कर दिया जाएगा।

ये अकल्पित घोषणाएं सुनकर पूरी सभा सहम गई। कइयों को ये घोषणाएं अटपटी भी लगी पर बोले कौन?

मंदिरमार्गी सम्प्रदाय के भी कुछ श्रावक ऐसे थे जो तेरापंथ के प्रति विशेष श्रद्धाभाव रखते थे। उनसे तेरापंथ का विद्रोह कैसे सह्य होता? वे सीधे साध्वी इन्द्रुजी के पास पहुंचे और चिन्तित स्वरों में बोलेह्न'साध्वीश्री! आज तो गजब हो गया। संत कान्तविजयजी ने अभी श्रावकों को जो निर्देश दिए हैं, उन्हें सुनकर हम स्तब्ध रह गए।' श्रावकों ने मुनिजी द्वारा घोषित नियमों की चर्चा करते हुए कहाह्न'यदि किसी ने इन नियमों का जरा भी उल्लंघन किया तो उसे

दंड स्वरूप जुर्माना भरना पड़ेगा तथा तेरापंथी परिवार के साथ संबंध रख लिया तो उसे समाज से बहिष्कृत किया जाएगा।'

उत्तेजना का अनल : शांति का सलिल

संवत्सरी के दिन मंदिरमार्गी श्रावकों द्वारा ये अकल्पित बातें सुनकर एक बार तो पूरी परिषद् सन्न सी रह गई। विक्षोभ और तनाव का वातावरण बन गया। शांति का वह महापर्व उत्तेजना का पर्व सा प्रतीत हो रहा था। पौषध का कालमान भी पूरा करना मुश्किल लगने लगा। विरोध और प्रतिशोध का उद्वेग इतना प्रबल बना कि भाई कस्तूरचंद जैन ने तो पौषध भी तोड़ दिया।

साध्वी इन्द्रुजी समयज्ञ साध्वी थी। श्रावकों के चेहरे पर चढ़ती उतरती उत्तेजनात्मक भाव भंगिमाओं को पढ़ते देर नहीं लगी। उन्होंने सोचाह्नअभी यदि आवेश के उन्मत्त हस्ति पर अंकुश नहीं लगाया गया तो स्थिति और अधिक विषम बन सकती है। साध्वीश्री ने श्रावकों को संबोधित करते हुए कहाह्नकिसी को भयभीत अथवा उत्तेजित होने की अपेक्षा नहीं है। सब धैर्य एवं शांति बनाए रखें। सांवरिया इस संघ की स्वतः रक्षा कर रहा है। हमें किसी का विरोध कर अपनी शक्ति और ऊर्जा का अपव्यय नहीं करना है। विद्रोह का काला धुंआ सत्य की किरण फूटते ही स्वतः छंट जाएगा। साध्वी इन्द्रुजी के इस कथन से सबको पाथेय मिला। आक्रोश, रोष और भय की रेखाएं सिमटने लगी।

स्थिति की विकटता

संवत्सरी की रात पूरी हुई। दूसरे दिन क्षमा याचना का पर्व। इस महापर्व पर दोनों वर्गों के बीच क्षमायाचना के बजाय आक्षेपों-प्रत्याक्षेपों का वातावरण बन गया। स्थिति इतना विकट रूप धारण कर चुकी थी कि साध्वियों का गोचरी-पानी जाना भी दूभर हो गया। आचार्यवर के पास भी ये समाचार पहुंच गए। अकस्मात् ये संवाद सुनते ही पूज्य गुरुदेव को बड़ी चिन्ता हुई। आचार्यवर ने तत्काल कुछ विश्वस्त श्रावकों को वस्तुस्थिति की जानकारी हेतु संकेत दिया। गुरुदेव का निर्देश पाकर रामलालजी पुगलिया (श्रीडूंगरगढ़) ताराचंदजी बोथरा (बीकानेर) तेरापंथ महासभा के भू. पू. अध्यक्ष श्री केवलचंदजी नाहटा (मोमासर) आदि श्रावक बाड़मेर पहुंचे। केवलचंदजी नाहटा तथा अर्जुनलालजी चावत (सिरेवड़ी) ने लगभग दो महिने तक साध्वीश्री की सेवा की। आगन्तुक श्रावकों ने साध्वी इन्द्रुजी तथा तेरापंथी सभा (बाड़मेर) के अध्यक्ष चम्पालालजी बैद से पूरी जानकारी की। सबसे बड़ी समस्या यह थी कि जिन तेरापंथी लड़कियों का ससुराल मंदिरमार्गी संप्रदाय में था उनका ठिकाने में आना

जाना बिल्कुल बन्द हो चुका था। उनसे बातचीत किए बिना स्थिति को सुलझाना संभव नहीं था। काफी सोच विचार के बाद चम्पालालजी बैद के माध्यम से आगन्तुक श्रावकों ने समाधान का एक नया विकल्प ढूंढ निकाला। घर-घर यह प्रश्न प्रसारित कर दिया गया कि जब तुम्हारे घर संत कान्तविजयजी गोचरी आए तो तुमने क्या उत्तर दिया? जिसने जो उत्तर दिया, उसे लिपिबद्ध किया गया। धूलीबाई को साध्वियों के ठिकाने बुलाकर आगन्तुक श्रावकों ने पूरी बात पूछी।

धूलीबाई ने निर्भीकता से वस्तु स्थिति स्पष्ट करते हुए कहाह्न'मेरे घर कई बार संत कांतविजयजी पधारे पर संयोग की बात थी कि मैं असूझती मिली। बार-बार ऐसा प्रसंग उपस्थित होने पर संत बड़े क्षुब्ध हुए। उन्होंने रोष भरे शब्दों में कहाह्नतुम तो हमें देना नहीं चाहती हो इसलिए जानबूझकर असूझती हो जाती हो। तुम तेरापंथियों के व्याख्यान में जाती हो। हमारे यहां कभी नहीं आती। मंदिरमार्गी घर की बहू होकर भी मंदिर की पूजा नहीं करती होह्नआदि बहुत सी उल्टी सीधी बातें सुनाई तब मेरे से चुप नहीं रहा गया। मैंने उनको साफ साफ कह दियाह्न'आप चाहे जो कुछ कहें, मेरी श्रद्धा जो है वही रहेगी। मुझे तेरापंथी साध्वियों के ठिकाने जाने से रोक दिया जाए तो भी मैं अपनी श्रद्धा नहीं छोडूंगी। मेरे वही श्रद्धेय रहेंगे। किसी के दबाव में आकर श्रद्धा को न बेचा जा सकता है न खरीदा जा सकता है।'

गोचरी-पानी, व्याख्यान आदि के प्रसंग में भी मैंने स्पष्ट कह दियाह्न 'आपको यदि असूझती के हाथ से भिक्षा लेने में दोष नहीं लगता हो तो ले लीजिए। व्याख्यान तो मेरा मन होगा वहां सुनूंगी।' मेरे इस दो टूक जबाव को सुनकर वे बड़े नाराज हुए। उन्होंने चारों ओर मेरे बारे में वितण्डावाद कर दिया। धूलीबाई के इस दृढ़ता पूर्ण उत्तर को सुनकर आगन्तुक श्रावक अत्यन्त प्रभावित हुए। उन्होंने धूलीबाई को साधुवाद देते हुए कहाह्न'बहन! तुमने जो कुछ कहा वह उचित है। इसमें विवाद करने जैसी कोई बात नहीं है। ऐसा करके तुमने संघ की वफादार श्राविका का दायित्व निभाया है।' उसी समय अन्य श्राविकाओं के लिपिबद्ध उत्तर भी पढ़े गए। वे उत्तर भी धूलीबाई के विचारों से मिलते जुलते थे। आगन्तुक श्रावकों ने सबके उत्तरों का निचोड़ निकालते हुए कहाह्न'लगता है ऐसी दृढ़ धर्मिणी श्राविकाओं की दृढ़ आस्था ही संत कांतविजयजी के लिए समस्या बन गई।'

सफल हुए सद्भाव के प्रयत्न

दूसरे दिन आगन्तुक श्रावकों ने तेरापंथी एवं मंदिरमार्गी समाज के प्रमुख

लोगों से गहरा विचार-विमर्श किया फिर साध्वी इन्द्रुजी के सान्निध्य में विशेष चिन्तन गोष्ठी आयोजित की गई। दोनों ओर से एकता स्थापित करने के स्वर सुनाई दे रहे थे किन्तु एक शब्द पर निर्णय होते होते अटक रहा था। इतरवर्गीय श्रावकों ने कहाह्नआपकी साध्वियों ने हमारे साधुओं को 'मसटण्ड' शब्द कहकर अपमान किया है। हम सब कुछ सह सकते हैं किन्तु अपने साधुओं का अपमान कैसे सहन कर सकते हैं? आगन्तुक श्रावकों ने तुरन्त सबके बीच साध्वीश्री से पूछाह्न'क्या आपने इस शब्द का प्रयोग किया?' साध्वीश्री ने स्पष्ट कहाह्नहमने ऐसे कटु शब्द का प्रयोग कभी किया ही नहीं। यदि किया होता तो जुलूस में हजारों लोग मुनिजी के साथ चल रहे थे। वे भी इस शब्द को अवश्य सुनते। जब इन्होंने नहीं सुना तो अकेले मुनिजी ने कैसे सुन लिया? यह बिना सींग पूंछ वाली बात है। अगर किसी ने सुना हो तो बताए? हम अभी भी स्पष्टीकरण करने के लिए तैयार हैं।' आगन्तुक श्रावकों ने साध्वीश्री के प्रश्न को दोहराते हुए उपस्थित मंदिरमार्गी संप्रदाय के प्रमुख श्रावकों से पूछाह्न'क्या किसी ने ऐसा शब्द सुना?' श्रावक सब मौन थे। श्रावकों के मौन से यह स्पष्ट जाहिर था कि साध्वियों की कोई गलती नहीं है।

सही निशाने पर चोट करते हुए साध्वी इन्द्रुजी ने कहाह्न'भाइयों! हम तो साधु हैं। आज यहां कल वहां चले जाएंगे। किन्तु आप लोगों को तो हमेशा इसी गांव में रहना है। इसी समाज के साथ काम करना है। इस तरह साधुओं को बीच में डालकर अगर आप फूट डालते हैं तो इसमें हमारा न कुछ बिगड़ने वाला है और न कुछ उजड़ने वाला है। जरा सोचिए, इस फूट का नुकसान किसको भुगतना पड़ेगा? जिस गांव में फूट होती है उसका कभी विकास नहीं हो सकता। अगर आप अपने क्षेत्र की एकता कायम रखना चाहते हैं तो दुराग्रह, वैमनस्य और संकीर्णता की जंजीरों को तोड़कर उदारता, सामंजस्य और पारस्परिक सहयोग का दृष्टिकोण अपनाएं। आचार्यश्री तुलसी समन्वय के सूत्रधार हैं। समन्वय का अर्थ है अपने सिद्धांतों पर दृढ़ आस्था रखते हुए किसी दूसरे सम्प्रदाय पर आक्षेप नहीं करना। तेरापंथ न किसी पर आक्षेप करता है न किसी दूसरे को इस कार्य के लिए प्रेरित करता है। अगर नीति के पथ पर चलते चलते भी कोई आक्षेप लगा देता है तो वह उसका प्रतिकार मौन रहकर करना जानता है।

धर्म का क्षेत्र अलग है और समाज का क्षेत्र अलग। धर्म के नाम पर सामाजिक विग्रह खड़ा करना उचित नहीं है। आप सब बुद्धिमान और चिंतनशील श्रावक हैं। जैसा उचित समझें वैसा करें। हमारा कोई आग्रह नहीं है,

साध्वी इन्द्रुजी के इस उद्‌बोधन का ऐसा असर हुआ कि समन्वय का वातावरण स्वतः निर्मित हो गया। सबने एक स्वर में कहाह्न'साध्वीश्री! आपने जो कुछ फरमाया है उसीमें हमारा हित है। हमारे कारण आपको जो कष्ट हुआ है हम उसके लिए सविनय क्षमाप्रार्थी हैं। आज के बाद हमारी ओर से किसी विघटनकारी कदम की पहल नहीं की जाएगी। पूर्व में तेरापंथ और मंदिरमार्गी समाज के बीच विद्वेषवश सामूहिक भोज, शादी, जन्म-मृत्यु आदि प्रसंगों पर आने जाने तथा तेरापंथी परिवारों की बहु बेटियों के ससुराल व पीहर में आवागमन की जो बंदिश लगाई गई थी वे सब बातें आज से अमान्य और अस्वीकार्य हैं। आपसी लेन-देन, भाइचारा पूर्ववत् रहेगा।' इस घोषणा के साथ ही उत्तेजना का वातावरण उल्लास में बदल गया। सबने परस्पर गद्‌गद हृदय से खमतखामणा किया।

आगन्तुक श्रावक सम्पूर्ण स्थिति का निवेदन करने तुरन्त गुरु-चरणों में पहुंचे। दर्शन करते ही आचार्यवर ने पूछाह्नबोलो, बाड़मेर की क्या स्थिति है? श्रावकों ने पुलकित स्वरों में बाड़मेर की स्थिति का आद्योपान्त विवरण सुनाते हुए कहाह्नगुरुदेव! स्थिति तो बहुत विकट थी किन्तु आपके प्रताप से सब कुछ ठीक हो गया। साध्वी इन्द्रुजी ने न केवल स्थिति को ठीक ढंग से संभाले रखा बल्कि तेरापंथ के वर्चस्व को भी बढ़ाया है।' बाड़मेर के सुखद समाचार सुनकर आचार्यवर ने प्रसन्न मुद्रा में फरमायाह्न'इन्द्रुजी हमारे संघ की धीर गम्भीर साध्वी है। उन्होंने बड़ी समझदारी से काम लिया, यह प्रसन्नता की बात है। तेरापंथ सदा से मंडनात्मक नीति का पक्षधर रहा है। साध्वी इन्द्रुजी ने संघ की गरिमा के अनुरूप कार्य करके सूझबूझ का परिचय दिया है।' श्रावकों के माध्यम से जब गुरुदेव के ये कृपा पूर्ण शब्द साध्वी इन्द्रुजी ने सुने तो वे धन्य हो उठी। धन्यता की अनुभूति इन स्वरों में मुखर हो उठीह्न'मैं करने वाली कौन हूं? जो कुछ हुआ, वह गुरुदेव की शक्ति से ही संभव हुआ है। गुरुदेव महान हैं। वे अपने प्रत्येक शिष्य के छोटे से छोटे कार्य का मूल्यांकन कर उसे उत्साहित करते हैं। ऐसा संघ और ऐसे संघपति भाग्योदय से ही मिलते हैं।'

ह्नः १२ :ह्न

विग्रह-शमन के सार्थक प्रयत्न

वि. सं. २०३९ में साध्वी इन्द्रुजी का चातुर्मास केलवा में था। वहां कई वर्षों से किसी बात को लेकर श्रावक समाज में आपसी मन-मुटाव चल रहा था। वैमनस्य इस कदर बढ़ता गया कि तेरापंथी श्रावकों के दो गुट हो गए। दोनों की अर्थ व्यवस्था, विवाह, जन्म, मृत्यु, स्नेह भोज आदि सामाजिक कार्यक्रमों में भी अलग अलग संभागिता थी। पारस्परिक व्यवहार बिल्कुल बन्द हो गया। साध्वी इन्द्रुजी ने इस स्थिति को देखा। उनका मन भीतर तक उद्वेलित हो उठा। चातुर्मास के प्रारंभ से ही उन्होंने इस बारे में सलक्ष्य प्रयत्न शुरू किया। दोनों पक्षों के प्रमुख लोगों की समवेत उपस्थिति के बिना यह कार्य असंभव था। प्रयत्नपूर्वक ऐसा करना अत्यन्त मुश्किल था। देखते-देखते चातुर्मास का श्रावण महीना बीत गया, भाद्रव मास में पर्युषण का प्रसंग आया। इस अवसर पर गांव के सभी बड़े-बूढ़े जवान प्रवचन सुनने सभा भवन में आते, लगभग दो घण्टे प्रातःकालीन कार्यक्रम चलता। साध्वी इन्द्रुजी ने अपने व्याख्यानों के द्वारा सामांजस्य पूर्ण वातावरण की अच्छी भूमिका बना ली। धूमधाम से संवत्सरी महापर्व मनाया गया। दूसरे दिन जैन उपाश्रय में मैत्री पर्व का आयोजन था।

अनेक लोगों ने मैत्री पर्व के संबंध में अपने विचार रखे। कार्यक्रम समाप्ति के पहले सभा के बीच में ही एक अधेड़ उम्र का आदमी उठा और कुछ गरमजोशी के साथ बोलाह्नमैत्री पर्व मनाने की सफलता तो तब होगी जब दोनों पक्षों का मनोमालिन्य धुल जाए। वरना हर साल मैत्री पर्व आता है और केवल खमतखामणा की औपचारिकता में पूरा हो जाता है। उसकी हां में हां मिलाते हुए कई समवयस्क एक साथ उठ खड़े हुए। बात कुछ आगे बढ़े, उससे पूर्व ही ठीक निशाने पर चोट करते हुए साध्वीश्री ने कहाह्नभाइयो! औपचारिकता को वास्तविकता में बदलने वाले भी आप सब हैं और वास्तविकता को औपचारिकता का जामा पहनाने वाले भी आप हैं। इन्हीं हाथों से आदमी धागे

को उलझा सकता है और इन्हीं हाथों से धागे को सुलझा सकता है। आप चाहें तो एक मिनट में सारे कांटे साफ हो सकते हैं और न चाहें तो ऊपर से भले लाख कोशिश कर लें पर कोई वांछित परिणाम नहीं निकल सकता। बारह महिने में एकमात्र यही ऐसा पर्व आता है जिस दिन हर व्यक्ति मानसिक रूप से हल्केपन का अनुभव करता है। खमतखामणा करके भी यदि मन की गांठें नहीं खुली तो कैसे ठहरेगा आपका श्रावकपन और कैसे सुरक्षित रह पायेगी आपकी सम्यक्त्व? केलवा तेरापंथ की उद्गम स्थली है। यहां के श्रावकों में भी अगर वैमनस्य रहता है तो हम दूसरे क्षेत्रों के लोगों को क्या कहेंगे? आचार्य भिक्षु जीवन के अंतिम क्षण तक विरोधियों को क्षमा प्रदान करते रहे। आप लोगों को भी उस आदर्श पुरुष का स्मरण करते हुए शुद्ध अंतःकरण से परस्पर क्षमा का आदान-प्रदान करना चाहिए।

साध्वीश्री के प्रेरणा भरे मधुर शब्दों को सुनकर श्रावकों के मन में कुछ भावना पैदा हुई। उन्होंने विनम्र भाषा में निवेदन कियाह्न'साध्वीश्री! आपका फरमाना तो बिलकुल ठीक है लेकिन.....।'

'लेकिन फिर क्या?'

श्रावकों ने सकुचाते हुए कहाह्न'साध्वीश्री! बात यह है कि इस कार्य के लिए हमें आपके मार्गदर्शन की अपेक्षा है किन्तु आप अभी अस्वस्थ हैं। एक साथ सैकड़ों व्यक्तियों से बात करना, घर घर घूम-घूम कर सबकी बात सुनना, सबको समझाना बहुत श्रमपूर्ण कार्य है।'

साध्वीश्री ने मुस्कुराते हुए कहाह्न'विवाद को सुलझाने में यदि हमारे समय का उपयोग हो तो इससे बढ़कर हमारी चातुर्मासिक सफलता और क्या हो सकती है? इसीलिए तो गुरुदेव ने हमें भेजा है। इसके लिए हम जितना समय दें उतना कम है क्योंकि यह हमारा दायित्व है। रही बात स्वास्थ्य की। वह तो गुरुदेव की कृपा से धीरे धीरे ठीक होगा ही, ऐसा मुझे दृढ़ विश्वास है।'

साध्वीश्री ने समस्या के समाधान की दृष्टि से परामर्श दियाह्न'नीति का निर्धारण गांव के सब व्यक्ति नहीं कर सकते। गांव के कुछ प्रमुख चिन्तनशील लोग जो आचार संहिता तय करते हैं उसी के अनुरूप सब चलते हैं। यदि दोनों पक्षों की तरफ से चार-चार पंचों को नियुक्त कर दिया जाए तो मैं भी उनकी बात शांतिपूर्वक सुन सकूंगी और साथ में अपना चिन्तन भी उन लोगों तक ठीक ढंग से पहुंचा सकूंगी। फिर जो फैसला होगा वह सर्वमान्य हो जाएगा।' लोगों के दिमाग में यह बात जच गई। सब प्रसन्न स्वरों में एक साथ बोल उठेह्न'हां

महाराज! यह सुझाव तो अत्युत्तम है।' इस सुझाव के अनुसार गांव के प्रत्येक घर में सार्वजनिक मीटिंग की सूचना प्रसारित कर दी गई। निर्धारित समय पर आम सभा आयोजित हुई। सर्व सम्मति से दोनों पक्षों के चार-चार व्यक्तियों का चुनाव किया गया।

भाद्रव शुक्ला त्रयोदशी के दिन अंधेरी ओरी में साध्वीश्री के सान्निध्य में मध्याह्न में ठीक एक बजे दोनों पक्षों के आठ व्यक्ति उपस्थित हुए। कुल दस व्यक्तियों के बीच आचार्य भिक्षु के स्मरण के साथ चर्चा प्रारंभ हुई। लगभग तीन घंटे तक विचार विमर्श होता रहा। साध्वीश्री ने भी कुछ समन्वय के सूत्र सुझाए। लोगों के चिन्तन में कुछ बदलाव आया किन्तु स्पष्ट निर्णय नहीं हो सका। आश्विन शुक्ला त्रयोदशी को पुनः उसी स्थान पर गोष्ठी आयोजित की गई। चिन्तन को निर्णायक दिशा मिली। समझौते के कुछेक बिन्दु निश्चित हुए, जिन्हें दोनों पक्षों ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। एकता स्थापित करने का प्रयत्न सफल हो गया। दोनों पक्षों ने सरल हृदय से खमतखामणा किया। पूरा वातावरण प्रसन्नता से भर उठा। मुख-मुख पर एक स्वर अनुगुंजित हो उठाह्न आनन्दकुमारीजी ने आनन्द कर दिया। उल्लेखनीय है उस समय तक साध्वी इन्द्रुजी का नाम किसी कारणवश आनन्दकुमारीजी के रूप में परिवर्तित कर दिया गया था। नाम परिवर्तन की घटना का विवरण सप्रसंग उल्लिखित है।

केलवा के इस वैमनस्य को मिटाने के लिए इससे पूर्व कई प्रयत्न हो चुके थे किन्तु वे सफल नहीं हुए। साध्वी आनन्दकुमारीजी का प्रयास इतना जल्दी सफल होगा, ऐसी उम्मीद भी किसी को नहीं थी। लगता है साध्वी आनन्दकुमारीजी को इस कार्य की सफलता का श्रेय मिलना था इसीलिए पूज्य गुरुदेव की कृपा से उनका प्रयास सार्थक हो सका।

स्थिरवास का उल्लेखनीय प्रसंग

वि. सं. २०३९ में आचार्यश्री तुलसी ने नाथद्वारा में मर्यादा महोत्सव मनाया। महोत्सव का भव्य आयोजन बहुत ऐतिहासिक एवं अविस्मरणीय रहा किन्तु महोत्सव के पश्चात् कुछ ऐसी स्थितियां बनी कि स्थानीय श्रावक समाज में दो गुट हो गए। वैमनस्य इस कदर बढ़ा कि दोनों गुटों के बीच पारस्परिक बातचीत का व्यवहार तो दूर, एक दूसरे के निकट उठना बैठना तक भी बंद हो गया। विवाह आदि प्रसंगों में भी आना-जाना बंद हो गया। विवाद को निपटाने के अनेक प्रयत्न किए गए किन्तु समस्या का समाधान नहीं हुआ।

वि. सं. २०४२ में आचार्यवर ने नाथद्वारावासियों पर कुछ कड़ा रूख

अपनाया। श्रावक समाज में एकता स्थापित हो, इसके लिए आचार्यवर ने एक नया प्रयोग किया। गुरुदेव ने उस वर्ष नाथद्वारा का चातुर्मास घोषित नहीं किया। चातुर्मास नहीं मिलने से कई श्रावकों को काफी अफसोस हुआ। पर, वे कर भी क्या सकते थे? दोनों गुटों के प्रमुख लोग यद्यपि चातुर्मास चाहते थे पर अपनी-अपनी बात पर दोनों अडिग थे। गांव के कुछ मध्यस्थ व्यक्ति आचार्यवर से चातुर्मास की प्रार्थना करने गए। आचार्यवर ने कहाह्नपहले तुम सब एक हो जाओ फिर चातुर्मास के बारे में सोचा जाएगा। श्रावक आगे कहते तो क्या कहते? सबके सर लज्जा से झुक गए। सब निराश होकर लौट आए। जब तक शुभ का संयोग नहीं होता तब तक चाहने पर भी काम नहीं बन सकता।

आमेट चातुर्मास के पश्चात् साध्वीश्री आनन्दकुमारीजी ने गुरुदेव के निर्देश को शिरोधार्य कर नाथद्वारा की ओर विहार कर दिया। शारीरिक अस्वस्थता के बावजूद छोटी छोटी मंजिलों को तय करती हुई ग्यारह दिनों में आप नाथद्वारा पहुंच गई। वहां पौष कृष्णा चतुर्दशी को आपको पक्षाघात हो गया। पक्षाघात के कारण दीर्घकालीन प्रवास की स्थिति बन गई। कुछ स्वास्थ्य-लाभ के पश्चात् आपने एक दिन अपनी सहयोगिनी साध्वियों को निकट बुलाकर शिक्षात्मक स्वरों में कहाह्न'साध्वियों! बीमारी की इस स्थिति को देखते हुए हमें यहां लम्बा प्रवास करना पड़ सकता है। इस अवधि में हमें बड़ी जागरूकता का परिचय देना है। देखो! यहां दो गुट हैं किन्तु हमें किसी पार्टीबाजी में नहीं फंसना है। सबको समान रूप से देखना है। सब घरों की व्यवस्थित गोचरी करनी है। जिकारा देने में भी बड़ी सावधानी बरतनी है।' साध्वियों ने आपकी शिक्षाओं को विनयपूर्वक स्वीकार किया।

साध्वी आनन्दकुमारीजी ने स्वयं विशेष जागरूकता पूर्वक समाज की हर इकाई को जोड़ने का प्रयास किया। आपके स्थिरवास को लगभग एक वर्ष पूरा हो रहा था। इस अवधि में आपके मधुर व्यवहार और समसामयिक उपदेशों से धीरे धीरे लोगों के मानस में स्वतः बदलाव आने लगा। इसी बीच आचार्यप्रवर ने वि. सं. २०४६ में योगक्षेम वर्ष मनाने की घोषणा की। यह वर्ष तेरापंथ समाज के कायाकल्प का अवसर था। योगक्षेम वर्ष की पूर्व भूमिका के रूप में आचार्यवर ने तेरापंथ समाज से संबंधित सभी संस्थाओं एवं संगठनों को मजबूत बनाने की दृष्टि से एकता स्थापित करने का इंगित किया। गुरु का इंगित विनीत शिष्य के लिए सर्वोपरि होता है। साध्वी आनन्दकुमारीजी ने आचार्यप्रवर के इंगित को गहराई से पकड़ा और स्वास्थ्य की परवशता के बावजूद दोनों गुटों के

अग्रणी लोगों को समझाने का प्रयास किया। साध्वीश्री की मेहनत ने आखिर रंग दिखाया। वैमनस्य का विष पूर्णतः धुलकर साफ हो गया। छत्तीस के अंक की भांति दिखने वाले दोनों दल अब तेसठ के अंक की भांति एक दूसरे से घुल मिल गए। पारस्परिक क्षमायाचना के पश्चात् सर्व सम्मति से उसी दिन अध्यक्ष-मंत्री आदि का निर्वाचन हुआ। इससे पूर्व वहां दो सभा, दो अध्यक्ष, दो मंत्री चुने जाते थे। इसके कारण न केवल गांव के लोग ही परेशान थे बल्कि साधु-साध्वियों को भी काफी दिक्कत उठानी पड़ती थी। सद्भाव के वातावरण ने पूरे गांव में उत्साह और उल्लास का संचार किया। एकता का संवाद ज्योंही पूज्य गुरुदेव को मिला, आचार्यवर ने फरमायाह्न'साध्वियों ने नाथद्वारा का वैमनस्य मिटाकर उल्लेखनीय कार्य किया है। इसकी मुझे बहुत प्रसन्नता है।'

समरस बना वातावरण

साध्वी आनन्दकुमारीजी ने वि. सं. २०२२ का टमकोर चातुर्मास सम्पन्न कर भिवानी में गुरुदेव के दर्शन किए। साध्वीश्री ने उस अवसर पर लाडनूं चाकरी के लिए अभ्यर्थना प्रस्तुत की। गुरुदेव ने फरमायाह्न'अभी लाडनूं की चाकरी की नहीं, जसोल की चाकरी की जरूरत है। वहां तुम्हें लम्बे समय के लिए जाना है।' साध्वीश्री ने तहत् वचन कहते हुए सहर्ष गुरु आज्ञा को शिरोधार्य किया।

प्रस्थान से पूर्व ज्योंही आप मंगल पाठ सुनने हेतु श्री चरणों में उपस्थित हुई तब गुरुदेव ने फरमायाह्न'जसोल हमारा पुराना क्षेत्र है। वहां अभी किसी बात को लेकर काफी खींचातान बढ़ गई है। सावधानी से वातावरण संभालना है। संघीय गरिमा का ध्यान रखते हुए प्रत्येक काम बड़ी सजगता से करना है। श्रावक समाज में एकता स्थापित हो जाए, ऐसा प्रयास करना है। साध्वियों की सेवा एवं चित्त समाधि में भी कोई कमी न आए। सुखसाता से जाना, खूब आनन्दपूर्वक काम करना।'

साध्वीश्री ने पूज्य गुरुदेव के इन शिक्षात्मक वचनों के अनुरूप कार्य करने की भावना व्यक्त की और मंगलपाठ सुनकर जसोल की तरफ प्रस्थान कर दिया। प्रस्थान करते ही आपको बहुत अच्छे शकुन हुए। साध्वी आनन्दकुमारीजी ने अपनी सहयोगी साध्वियों से कहाह्न'शकुन बहुत बढ़िया हुए हैं। लगता है हमें अपने काम में निश्चित रूप से सफलता मिलेगी।' साध्वियों ने भी प्रसन्नता व्यक्त की। विहार करते-करते आप नियत समय पर जसोल पहुंचे। आपके जसोल पदार्पण पर लोगों ने भव्य स्वागत किया। आपने अपने स्वागत के संदर्भ में कहाह्न'गुरुदेव द्वारा निर्दिष्ट मंजिल पर पहुंचकर मैं प्रसन्न चित्त हूं किन्तु इससे भी

अधिक प्रसन्नता मुझे तब होगी जब मैं आचार्यवर द्वारा निर्दिष्ट कार्य को सफलता पूर्वक कर पाऊंगी। एक दुष्कर दायित्व मेरे कंधों पर है। आशा ही नहीं दृढ़ विश्वास है कि आप सब उस दायित्व को पूरा करने में सहभागी बनेंगे।'

समस्या के समाधान की दृष्टि से साध्वियों ने एक एक व्यक्ति से सम्पर्क साधा और श्रावकों ने भी साध्वियों की बात को महत्त्व दिया। देखते ही देखते वातावरण में ऐसा बदलाव आया कि मन की गांठें स्वतः खुल गई। दोनों दलों में समझौता हो गया। सारी समस्या समाहित हो गई। एक नई चहल-पहल, नई रौनक और नई जागृति दिखाई देने लगी।

एक दिन पारमार्थिक शिक्षण संस्था के तत्कालीन संयोजक श्रीमान् राणमलजी जीरावला गुरुदेव के इंगितानुसार क्षेत्र की जानकारी हेतु आए। साध्वीश्री के दर्शन कर वे कुछ पूछते, उससे पूर्व ही गांव के लोगों ने सारी खबरें सुना दी। जीरावलाजी सीधे साध्वियों के ठिकाने आए और बधाई के स्वरों में बोलेह्न'साध्वीश्री! लाख-लाख धन्यवाद है आपको। आपने अपने बुद्धि कौशल से जसोल के वातावरण को समरस बना दिया है। मैं अतिशीघ्र गुरुदेव के चरणों में सारी स्थिति निवेदित करूंगा।' जीरावला जी ने आचार्यवर के दर्शन कर जसोल के संबंध में विस्तृत जानकारी दी। पूरा घटना चक्र सुनकर गुरुदेव ने अत्यन्त प्रसन्न मुद्रा में फरमायाह्न'अब मुझे ठाणा उठाने की चिन्ता नहीं रही। इन्द्रुजी ने जो काम किया इससे मैं बहुत प्रसन्न हूं।' गुरुदेव के ये अनुग्रह पूर्ण शब्द जब जीरावलाजी ने साध्वीश्री को सुनाए तब साध्वीश्री की श्रद्धा इन स्वरों में मुखर हो उठीह्नयह सब गुरुदेव की कृपा का ही सुफल है। आचार्यवर ने मेरे प्रति जो अमूल्य शब्द फरमाए हैं वह उनकी महानता है। मैं गुरुदेव की इस महानता के प्रति श्रद्धानत हूं।'

इसी प्रकार साध्वी आनन्दकुमारीजी ने रतनगढ़ में सेवा नियुक्ति के समय भी वहां के वातावरण को समुचित ढंग से संभाला। आपका दृष्टिकोण समन्वयात्मक रहता था। कैसा भी क्षेत्र हो? कैसे भी लोग हों? कैसी भी परिस्थिति हो? इन सबके साथ ताल-मेल बिठाकर अपनी बात सहजता से मनवा लेना आपकी सहज विशेषता थी।

ह्नः १३ ःह्न
नाम परिवर्तन की घटना

इस संसार में पैदा होने वाला हर व्यक्ति मुख्यतया रूप और नाम इन दो बिन्दुओं से पहचाना जाता है। रूप वह अव्यक्त जगत से लेकर आता है तथा नाम व्यक्त जगत में आरोपित किया जाता है। आरोपित नाम प्रायः जन्म से मृत्यु पर्यन्त वही रहता है। यहां तक कि मरणोपरान्त भी व्यक्ति उसी नाम से पुकारा जाता है किन्तु यह कोई शाश्वत नियम नहीं है। कुछ लोग इस नियम के अपवाद भी होते हैं। द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा या तो वे स्वयं अपना नाम बदल देते हैं अथवा उनका नाम बदल दिया जाता है। साध्वी इन्द्रुजी के नाम परिवर्तन का घटना-प्रसंग स्वास्थ्य विषयक चिन्तन से संबद्ध रहा है।

साध्वी इन्द्रुजी का गृहस्थ जीवन में नाम इन्द्रा था और दीक्षा लेने के बाद भी उनका वही नाम रखा गया। वि. सं. २०३५ तक उनकी पहचान इसी नाम से होती रही। वि. सं. २०२७ में साध्वीश्री ने बीदासर मर्यादा महोत्सव पर आचार्यवर के दर्शन किए। महोत्सव के समय प्रत्येक संघाटक की वार्षिक पृच्छा होती है। पृच्छा के क्रम में साध्वी इन्द्रुजी के संघाटक का भी नम्बर आया। आचार्यवर ने संघ प्रभावना, चित्तसमाधि, पारस्परिक सौहार्द आदि अनेक बिन्दुओं के साथ स्वास्थ्य के बारे में भी पूछा। उस समय प्रसंगवश साध्वी सुजाणांजी ने गुरुदेव से निवेदन कियाह्नभंते! इन्द्रुजी का स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता। दीक्षा लेने के बाद से इनके शरीर में प्रायः किसी न किसी व्याधि का प्रकोप रहता है। स्वास्थ्य की प्रतिकूलता के कारण इनमें कार्य करने की जितनी उमंग व क्षमता है उतना उपयोग नहीं हो पाता। नानाविध औषधियों के सेवन के बावजूद स्वास्थ्य में कोई संतोषजनक सुधार नहीं हो रहा है। आचार्यवर ने फरमायाह्नयह तो अपने अपने असाता वेदनीय का उदय है। खैर, मन स्वस्थ है तो तन की अस्वस्थता की चिंता नहीं। साध्वी सुजाणांजी ने पुनः नम्र निवेदन कियाह्नगुरुदेव! इनका बचपन का नाम आनन्दी था। इन्द्रा नामकरण से राशि

परिवर्तित हो जाती है। संभव है स्वास्थ्य की गड़बड़ी के अनेक कारणों के साथ राशि का भी अपना प्रभाव हो। अतः आप उनका मूल नाम ही रखाने की कृपा करावें। गुरुदेव ने मंद मुस्कान बिखेरते हुए कहाह्नअच्छा तुम मां हो इसलिए ज्यादा चिन्ता करती हो? साध्वी सुजाणांजी ने संकुचित स्वरों में कहाह्न'गुरुदेव! ऐसी बात तो नहीं है। सबकी चिन्ता गुरुदेव कर रहे हैं फिर मैं इनकी चिन्ता क्यों करूं?' वातावरण में स्मित हास्य बिखर गया। इतने में दूसरे कार्यक्रम का समय हो गया। बातचीत का प्रसंग वहीं छूट गया। उस समय नाम परिवर्तन के संदर्भ में कोई निर्णयात्मक संकेत नहीं मिल पाया।

समय अपनी गति से निकलता गया। देखते-देखते नौ वर्ष बीत गए। वि. सं. २०३६ में साध्वी इन्द्रुजी का चातुर्मास लावासरदारगढ़ में था। उस वर्ष साध्वीश्री का स्वास्थ्य काफी अस्वस्थ रहा। एक बार एक ज्योतिषी साध्वीश्री के संपर्क में आया। उसने साध्वीश्री की हस्तरेखा को देखकर कहाह्नमहाराज! आपके तो ग्रहगोचर बड़े कठोर चल रहे हैं। साध्वी इन्द्रुजी का ज्योतिष में विश्वास था। वे स्वयं ज्योतिष संबंधित सामान्य जानकारी रखती थी। साध्वीश्री ने पूछाह्नक्या ग्रहों के दुष्प्रभाव को परिवर्तित किया जा सकता है? ज्योतिषी जी कुछ सोच विचार कर बोलेह्न'महाराज! उपाय तो कई हैं पर आपके काम के नहीं। सिर्फ एक उपाय संभव हो सके तो जरूर कीजिए।'

क्या? साध्वीश्री ने गंभीर स्वरों में पूछा। पंडित जी ने लम्बी सांस छोड़ते हुए कहाह्न'यदि आप किसी तरह अपना नाम बदल लें तो राशि बदल सकती है। राशि परिवर्तन से ग्रहों का दुष्प्रभाव अवश्य कुछ अंशों में कम हो सकता है।' साध्वीश्री को यह बात उपयुक्त लगी। नाम परिवर्तन के लिए आचार्यश्री की अनुमति आवश्यक है। उस समय रतनलालजी डागा (संसार पक्षीय भुआजी के पोते) राजलदेसर से साध्वीश्री की सेवा में आए हुए थे। उन्होंने दिल्ली जाकर आचार्यवर के चरणों में सारी बात निवेदित की। गुरुदेव ने अत्यन्त अनुग्रह कर साध्वी इन्द्रुजी का नाम बदल कर 'साध्वी आनन्दकुमारी' रख दिया। तब से साध्वी इन्द्रुजी की पहचान साध्वी आनन्दकुमारीजी नाम से होने लगी। वस्तुतः यह उनके जीवन का एक ऐसा पृष्ठ है, जिसके साथ स्वास्थ्य की कामना जुड़ी हुई थी।

ह्नः १४ :ह्न
विकास के विविध आयाम

विकास का आकाश अनन्त है। अनन्त की उड़ान अनन्त का यात्री ही भर सकता है। साध्वी आनन्दकुमारीजी ने उस उड़ान को भरने के लिए पुरुषार्थ के पंख फैलाए। अध्ययन, साहित्य सृजन, लेखन, कला कौशल, लिपि सौन्दर्य आदि विविध आयामों में उनका व्यक्तित्व मुखर हुआ। उन्होंने इन आयामों के द्वारा न केवल स्वयं को सजाया संवारा बल्कि संघ की श्रीवृद्धि में भी अपना योगदान दिया।

अध्ययन की दिशा में

साध्वी आनन्दकुमारीजी की प्रारंभ में अध्ययन के प्रति विशेष रुचि नहीं थी। उस जमाने में लड़कियों की शिक्षा के लिए विशेष प्रयत्न भी नहीं किया जाता था। खासतौर से सिलाई, बुनाई, रसोई आदि घरेलू कामों का प्रशिक्षण देने आवश्यक माना जाता था। साध्वी आनन्दकुमारीजी की बचपन में न पढ़ने की रुचि थी न घरेलू कार्य सीखने की। उनका अधिकांश समय खेलने में बीतता था। फिर भी अपनी बुआ तथा फूंफा के विशेष प्रयत्न से आपने गृहस्थ-जीवन में राजलदेसर में स्थापित लड़कियों के पुराने स्कूल से कक्षा तीन तक की पढ़ाई की। वैराग्य होने के बाद अध्ययन के प्रति कुछ विशेष रुचि जागी। दीक्षा लेने के बाद आपने गुरुकुलवास एवं भारत के विभिन्न प्रान्तों में विहार करते हुए हिन्दी, राजस्थानी, पंजाबी तथा आंशिक रूप में संस्कृत व प्राकृत भाषा का अध्ययन किया। यद्यपि आपको अध्ययन का विशेष सुयोग नहीं मिला फिर भी अपनी आंतरिक लगन एवं सतत पुरुषार्थ से आपने जैन इतिहास, सिद्धांत, आगम, ज्योतिष, तत्त्वज्ञान आदि विविध विषयों का अपेक्षित अध्ययन किया। पढ़ने के साथ पढ़ाने में भी आपको बहुत रस आता था। दृष्टांतों, उदाहरणों और युक्तियों के माध्यम से आप गहन विषय को भी आप बड़े सरस ढंग से प्रस्तुत करती।

ज्ञान को बांधो मत, बांटो

ज्ञान प्राप्ति के साथ आपको ज्ञान बांटने में बड़ा आनन्द आता था। जब कभी जिस किसी से भी आपको कोई नई बात ज्ञात होती आप न केवल उसकी मुक्त कंठ से प्रशंसा करती बल्कि उस नए बोल को दूसरों को धराने की पूरी चेष्टा करते। उनका मानना थाह्न

बांटी तो विद्या बढै, छापी बधै बाड़।
मीठा बोल्यां मन बधै, कड़वा बोल्यां राड़।।

उनका विश्वास था कि दूसरों को ज्ञान देने से स्वयं का ज्ञान पक्का होता है। कई बार ऐसे प्रसंग भी आते कि बहुत बार प्रयत्न करने पर भी बहनों को बोल नहीं चढ़ता तब भी आप निराश नहीं होती। साध्वियां कहतींह्नमहाराज! जब इन्हें कुछ याद नहीं रहता है तो आप व्यर्थ में इतना श्रम क्यों कर रहे हैं? आप फरमातेह्नकोई सीखे न सीखे, यह अगले की इच्छा या क्षमता पर निर्भर है पर हमारे तो निर्जरा की कमाई हो ही गई। किसी को अच्छी चीज सिखाने में फायदा ही है, नुकसान तो है नहीं। फिर हम प्रयत्न करना क्यों छोड़ें? यदि हम नहीं सिखाएंगे तो दूसरा कौन सिखाएगा? श्रावक श्राविकाओं को तत्वज्ञान सिखाना हमारी साधना का अंग भी है और संघीय दायित्व भी।

करत-करत अभ्यास के जड़मति हो सुजान।
रस री आवत जावते सिल पर पड़त निशान।।

इस नीति सूत्र को आदर्श मानकर उन्होंने सैकड़ों भाई बहनों को तत्वज्ञान, गीतिकाएं, थोकड़े आदि कंठस्थ करवाए। केवल तोता रटन उन्हें पसन्द नहीं थी। प्रत्येक शब्द का अर्थ गम्य करने व कराने का वे सबल प्रयत्न करती।

प्रखर स्मरण शक्ति

जैन शासन में कंठस्थ करने की परम्परा हजारों वर्षों से चली आ रही है। कम्प्यूटर और कैलकुलेटर के इस वैज्ञानिक युग में भी तेरापंथ धर्मसंघ में कण्ठीकरण की परम्परा प्रतिष्ठित है। अनेक साधु साध्वियों ने हजारों हजारों पद्य कंठस्थ कर स्मृति की परम्परा को पुष्ट किया है। स्वयं आचार्यश्री तुलसी ने महज बाईस वर्ष की उम्र में बीस हजार पद्यों को कंठस्थ कर लिया था। साध्वी आनन्दकुमारीजी में भी कंठस्थ करने की अच्छी लगन थी। उन्होंने लगभग पांच वर्ष की उम्र में कंठस्थ करना प्रारंभ किया और उम्र के अंतिम पड़ाव तक यह क्रम जारी रहा। संस्कृत, प्राकृत, हिन्दी व राजस्थानी भाषा के लगभग अठारह हजार पद्य कंठस्थ किए। उनकी संक्षिप्त तालिका इस प्रकार हैह्न

प्राकृत-आगमह्नदशवैकालिक, आवश्यक, बृहत्कल्प, उत्तराध्ययन एवं नन्दी।

संस्कृतह्नभक्तामर स्तोत्र, कल्याणमन्दिर स्तोत्र, भिक्षु अष्टकम्, सिन्दूरप्रकर, शांतसुधारस भावना, कर्तव्यषट्त्रिंशिका, कालू कौमुदी पूर्वार्द्ध, जैन सिद्धांत दीपिका, शिक्षा षण्णवति, अभिधान चिंतामणि।

हिन्दीह्नजैन तत्व प्रवेश (भाग-१,२)

राजस्थानीह्नहित शिक्षा का पच्चीस बोल, जाणपणा का पच्चीस बोल, संजया, नियंठा, लघुदण्डक, पानां की चर्चा, बासठियो, भ्रम-विध्वंसन की हुण्डी, कर्म प्रकृति, गुणस्थान द्वार।

स्तवनह्नचौबीसी, आराधना, उत्तराध्ययन की जोड़ की दस गीतिका, शील की नवबाड़, शांतिनाथ व पारसनाथ के छन्द।

व्याख्यानह्नरामचरित्र, धनजी चरित्र, आषाढ़ मुनि चरित्र, कीचक चरित्र, बंकचूल चरित्र, अंगदत्त चरित्र, अग्नि परीक्षा, आषाढ़भूति, चन्द्रसेन चन्द्रावती चरित्र सहित अनेक लघु व्याख्यान तथा औपदेशिक व स्तुतिपरक लगभग ५०० गीतिकाएं।

ज्ञान सुरक्षा का उपक्रम : स्वाध्याय का नित्यक्रम

ज्ञान को कंठस्थ करने से भी अधिक दुरूह कार्य है कंठीकृत ज्ञान को पक्का रखना। सीखने में समय, श्रम व शक्ति लगती है किन्तु भूलने में न समय चाहिए, न श्रम चाहिए और न शक्ति। भूलना बहुत आसान है। सीखे हुए ज्ञान को स्मृतिगत कैसे रखा जाए? इस प्रश्न का समाधान है स्वाध्याय का उपक्रम। साध्वी आनन्दकुमारीजी का प्रिय विषय था स्वाध्याय। स्वाध्याय में उन्हें कितना आनन्द आता था, इस संदर्भ में एक घटना का उल्लेख पर्याप्त है। जब वे चौदह वर्ष की अवस्था में थी, दीक्षित हुए मात्र चार वर्ष हुए थे। एक बार आपकी अग्रगण्य साध्वी सजनांजी ने सायंकालीन प्रतिक्रमण के पश्चात् यह आदेश दियाह्न'जाओ, दशवैकालिक सूत्र का स्वाध्याय कर लो।' उस दिन वहां दो सिंघाड़ों का मिलन हुआ था। ठहरने का उपाश्रय बहुत छोटा था। अन्य साध्वियां पारस्परिक वार्तालाप में संलग्न हो गई। स्थानाभाव और आपसी बातचीत की आवाज से होनेवाली हलचल के कारण स्वाध्याय में विघ्न होना स्वाभाविक था। प्रहर रात (लगभग तीन घंटे) बीत गई किन्तु बाल साध्वी पूरा स्वाध्याय नहीं कर सकी। सोने की समय हो गया। साध्वी सजनांजी ने शयन से

पूर्व पूछाह्नक्या दसवैकालिक चितार लिया? वे संकोचवश मौन हो गई। साध्वी आनन्दकुमारीजी को मौन का कारण समझते उन्हें देर नहीं लगी। उन्होंने तत्काल अनुशासन की लगाम खींचते हुए कहाह्न'इन्द्रुजी! जब तक मैं वापस नहीं कहूं तब तक अमुक कमरे के कोने में खड़े खड़े स्वाध्याय करती रहो।' साध्वी आनन्दकुमारीजी ने प्रसन्नमना इस निर्देश को स्वीकार किया। आप अपने स्थान से उठी और साध्वी सजनांजी को वन्दना कर सीधी निर्दिष्ट कमरे के कोने में जाकर खड़ी-खड़ी स्वाध्याय करने लगी। लगभग चार-पांच घंटे का समय बीत गया। फिर भी आंखों में नींद की झपकी नहीं। अचानक एक साध्वी आवश्यक कार्यवश उठी। उसने साध्वी आनन्दकुमारीजी को खड़े-खड़े स्वाध्याय करते देखा। आश्चर्य भरे शब्दों में पूछाह्न'आज इतनी जल्दी उठकर स्वाध्याय कैसे करने लगी?' बाल साध्वी ने धीमे स्वरों में कहाह्न'कोई सोया हो तो जागे। मैं तो रात भर से उठी हुई ही हूं।' उस साध्वी ने कहाह्न'अब तो सो जाओ।'

बाल साध्वीह्न'सोते तो रोज ही हैं। एक रात स्वाध्याय ही सही।' इस वार्तालाप से हुए निनाद से सहसा साध्वी सजनांजी की नींद टूटी। पार्श्ववर्ती खाली बिस्तर को देख उन्हें ध्यान आया कि अरे मैं तो नानकी को पुनः सोने का कहना भूल ही गई। संभवतः वह उसी कोने में खड़ी होगी। जाकर देखा तो अनुमान सही निकला। तत्काल उन्होंने बाल साध्वी को सोने की आज्ञा दी। साध्वी आनन्दकुमारीजी ने उसी प्रसन्न भाव से साध्वी सजनांजी को वन्दना की और बिना किसी ननुनच के सीधे बिस्तर पर लेट गई। उस रात उन्होंने लगभग पांच हजार गाथाओं का एक साथ स्वाध्याय किया।

यह घटना जहां साध्वीश्री की स्वाध्याय प्रियता की द्योतक है वहीं उनके अनुशासनमय एवं समर्पित जीवन का उदाहरण है। इतने कठोर अनुशासन के प्रति उनके मन में न तर्क था न वितर्क, न रोष था न अफसोस, न प्रश्न था न प्रतिप्रश्न, न दबाव था न खिंचाव। उन्होंने सब कुछ सहज भाव से स्वीकार कर लिया। जब खड़े रहने का आदेश मिला तब भी शांत और जब सोने का आदेश मिला तब भी शांत। यह सचमुच एक अनुकरणीय प्रेरक प्रसंग है।

साहित्य-वाचन

साहित्य वाचन अध्ययन की प्रथम भूमिका है। साध्वीश्री का साहित्य वाचन के प्रति गहरा रुझान था। आपने साध्वी सजनांजी की सन्निधि में दो बार ३२ आगमों का आद्योपान्त पारायण किया तथा अग्रगण्य बनने के पश्चात् भी आगम साहित्य के अध्ययन का क्रम जारी रहा। उसके अतिरिक्त आचार्य भिक्षु,

आचार्यश्री तुलसी व आचार्यश्री महाप्रज्ञ की सैकड़ों पुस्तकें तथा विद्वान साधु-साध्वियों की अनेक पुस्तकें, धर्मसंघ की प्रमुख पत्र-पत्रिकाएं तथा अन्य शिक्षाप्रद साहित्य के लगभग एक लाख पृष्ठों का वाचन किया।

जीवन के अंतिम तीन वर्षों में पक्षाघात के कारण आपको पढ़ने में काफी कठिनाई होती थी। स्वतः साहित्य वाचन की स्थिति नहीं रहने पर भी आपने सहवर्ती साध्वियों से मुनिश्री नवरत्नमलजी द्वारा लिखित शासन समुद्र के सोलह भागों को आद्योपान्त सुना। आपने साध्वी उज्ज्वलरेखाजी से सम्पूर्ण भगवती, सूयगडो, नन्दी, राजप्रश्नीय, दसवैकालिक, उत्तराध्ययन, बृहत्कल्प, ज्ञाता सूत्र, ठाणं, निशीथ, कल्प सूत्र, विपाक सूत्र, आवश्यक सूत्र आदि आगमों को सुना। उसके अतिरिक्त प्रज्ञापुरुष जयाचार्य, भिक्षु दृष्टांत आदि ग्रंथ भी पढ़े। साहित्य वाचन के प्रति आपकी रुचि इतनी प्रबल थी कि जब भी कोई नई पुस्तक प्रकाशित होती, आप अविलम्ब उसे पढ़ने को उद्यत हो उठती।

साहित्य सृजन

लेखन के प्रति आपके मन में विशेष उत्साह था। यद्यपि पुस्तक लिखने के उद्देश्य से आपने कुछ नहीं लिखा पर जो हृदय की घाटी से सहज प्रस्फुटित हुआ वह साहित्य बन गया। आपने अधिकतर पद्यात्मक व संकलनात्मक साहित्य का सृजन किया। आपकी रचना में जहां भावों की गहराई है वहां मनुष्य को लक्ष्य की ओर बढ़ने की अमूल्य सीख है। उदाहरणार्थ उनके द्वारा रचित कुछ शिक्षात्मक दोहे यहां प्रस्तुत हैह्न

उज्ज्वल जीवन को बना, करके कार्य पवित्र।
बन जाएगा एक दिन, तूं ही प्रेरक चित्र।।१।।
कदम बढ़ाते ही रहे, बाधाओं को चीर।
घबराए किंचित् नहीं, उत्तम पुरुष सधीर।।२।।
गुरु बिन किश्ती डूबती, कौन करेगा पार?
अतः शरण गुरुदेव की, करले तूं स्वीकार।।३।।
फल वैसा ही अंत में, जैसा तेरा काम।
बीज आक का वपन कर, किसने खाया आम।।४।।
भला कार्य ऐसा करो, याद करे सब लोग।
बार-बार ऐसा नहीं, तुझे मिलेगा योग।।५।।
क्षण बीता आता नहीं, जैसे सरिता नीर।
कर लो ऐसी साधना, मिल जाए भव तीर।।६।।

ज्ञान उसे मिलता नहीं, जिसके मन में मान।
अहं छोड़ते ही बने, बाहुबल भगवान।।७।।
सबसे पहले तूं समझ, क्या साधक का अर्थ।
साम्य भाव आया नहीं, (तो) साधक बनना व्यर्थ।।८।।
यह मेरा धन माल है, यह मेरा परिवार।
भूल गया क्यों मनुज तूं, जाना हाथ पसार।।९।।

वाक्य सुधाह्नयह आपकी प्रथम पद्यात्मक कृति है। इस कृति में 'अ' से लेकर 'ह' तक पूरी वर्णमाला के आधार पर लगभग पांच सौ दोहे हैं। प्रत्येक दोहे में मानव जीवनोपयोगी शिक्षा है। इस कृति की रचना साध्वीश्री ने लावासरदारगढ़ (मेवाड़) में विक्रम संवत् २०३६ में की। इस चातुर्मास में आपका स्वास्थ्य काफी अस्वस्थ रहा। अस्वस्थता के क्षणों का सदुपयोग आपने रचना में किया। कृति के अन्त में आपने अपनी शारीरिक स्थिति को अभिव्यक्त करते हुए लिखाह्न

कर्म वेदनी उदय से, है तन अति अस्वस्थ।
दिल बहलाने के लिए, दोहे रचे दुरुस्त।।

उक्त कृति की पाण्डुलिपि साधिका शांता जैन (राजनगर) से उपलब्ध हुई। उसी से मैंने यह दोहा यहां उल्लिखित किया है। उसके अतिरिक्त समय समय पर प्रसंगानुसार आपने सैकड़ों दोहे बनाए। रचना आपका प्रिय विषय था। रचना करते समय आप अपनी शारीरिक वेदना को भी भूल जाती थी। जीवन की अंतिम शाम तक आपका रचना कार्य जारी रहा। उस समय भी आप अपनी स्वर्गीया मातुश्री साध्वी सुजाणांजी के जीवन प्रसंगों को दोहों में आबद्ध कर रही थी। लिखते-लिखते अचानक अंगूठे में सोजिश आई और कलम हाथों से गिर पड़ी।

स्वाध्याय-परक साहित्य

भजन छंद रत्नह्नइसमें अनेक स्तोत्रों, स्तुतिपरक तथा तात्विक गीतिकाओं, चामत्कारिक एवं प्रभावक स्तवनों का संकलन है। आपने यह संकलन वि. सं. २०३० में टोहाना में किया। उस समय आप गलत इंजेक्शन लगने से अचानक अस्वस्थ हो गई थी। आपने सोचाह्नअस्वस्थता के इन क्षणों में गोचरी-पानी-प्रवचन आदि कार्य मेरे लिए संभव नहीं है। क्या इस समय का उपयोगी सामग्री के संकलन में सदुपयोग किया जाए? चिन्तन क्रियान्विति में बदला और सहज ही एक स्वाध्याय ग्रंथ का निर्माण हो गया।

स्वाध्याय सुमनह्नइस कृति में आत्म जागृतिपरक सामग्री का संचयन है।

तुलसी पुष्पमालाह्नयह आपके संकलनात्मक साहित्य की दूसरी कृति है। वि.सं. २०४१ में आपका साध्वी सुजाणांजी की सेवा की दृष्टि से गंगापुर में प्रवास था। उसी वर्ष अक्षय तृतीया के पुण्य प्रसंग पर अमृत महोत्सव के प्रथम चरण की समायोजना का सौभाग्य गंगापुरवासियों को प्राप्त हुआ। अमृत महोत्सव के उपलक्ष में आचार्यवर के स्वागत की तैयारियां शुरू हो गई। साध्वी आनन्दकुमारीजी भाषण गीतिका आदि परम्परागत स्वागत की धारा से हटकर एक ऐसी विधा से अपने आराध्य का अभिनन्दन करना चाहती थी जिसकी उपलब्धि स्थाई और रचनात्मक हो। उसी का प्रतिफलन है 'तुलसी पुष्पमाला' की संरचना। इस पुष्पमाला के अंतर्गत आपने नौ लघु कृतियों का निर्माण किया।

कवित्व की स्फुरणा

विक्रम संवत् २०४२ की घटना है। उस वर्ष आचार्यश्री तुलसी का आमेट में चातुर्मास था। साध्वी आनंदकुमारीजी को भी गुरुकुलवास का सौभाग्य प्राप्त हुआ। भाद्रव शुक्ला नवमी का पुण्य प्रभात, अमृत महोत्सव का भव्य आयोजन, संघ समन्दर में खुशियों का अभिनव ज्वार। प्रसन्नता के इन क्षणों में अमृत पुरुष ने गुरुकुलवासी साधु साध्वियों को अमृत कवल और अमृत पत्र बगसाया। आचार्यवर के पावन कर कमलों से कवल ग्रहण करने हेतु सभी साध्वियां पंक्तिबद्ध खड़ी थी। एक एक कर साध्वियां आगे आती गईं और आचार्यवर कवल बगसाते गए। इसी क्रम में साध्वी आनन्दकुमारीजी का भी नम्बर आया। गुरुदेव ने अत्यन्त प्रसन्न मुद्रा में उन्हें भी ग्रास बगसाया। साध्वीश्री ग्रास लेकर मुड़ने ही वाली थी कि आचार्यवर ने फरमायाह्न'ठहरो! पहला ग्रास तो तुम्हारा था, यह लो दूसरा ग्रास तुम्हारी मां के नाम का। मां के नाम का ग्रास तो बेटी ही खाती है।' गुरुदेव के इन अनुग्रह पूर्ण शब्दों को सुन साध्वीश्री धन्य हो उठी। हर्षातिरेक के उन क्षणों में उनके भावों का झरना इस तरह फूट पड़ाह्न

अमृतोत्सव आमेट में, कृपा करी गण-छत्र।
अमृत कवल निज हाथ से, बगस्यो अमृत पत्र।।

इस दोहे को सुनकर आचार्यवर प्रसन्न हुए। वहां खड़े साधु-साध्वियों ने भी साध्वीश्री की सामयिक भावाभिव्यंजना की सराहना की।

प्रासंगिक रचनाएं

साध्वी आनन्दकुमारीजी ने मातुश्री सुजाणांजी के अनशन व स्वर्गवास के प्रसंग पर कई प्रेरक गीतों व दोहों की रचना की। साध्वी सुजाणांजी द्वारा की गई

तपस्याओं का विवरण 'कर्मचूर गीत' में आबद्ध कर दिया। 'अनशन गीत' में साध्वी सुजाणांजी के अनशन की स्थिति तथा 'स्मृति गीत' में उनकी संक्षिप्त जीवन झांकी को अभिव्यक्ति दी। साध्वी सुजाणांजी के जीवन-वृत्त को लिखने की उनकी प्रबल भावना थी किन्तु अचानक पक्षाघात से पीड़ित हो जाने के कारण वे इस कार्य को सम्पन्न नहीं कर सकी। उन्होंने इस कार्य की सम्पन्नता हेतु मुझे प्रेरित किया। साध्वीश्री की प्रेरणा पाकर मैंने स्वयं को लेखन में नियोजित किया। अपनी अल्पबुद्धि के अनुसार मुझसे जो कुछ बन पड़ा, मैंने लिखा। लिखकर जब साध्वी आनन्दकुमारीजी को सुनाया तो उन्होंने बड़ी प्रसन्नता के साथ मेरी पीठ थपथपाई। मेरा उत्साह द्विगुणित हो गया। यह मेरा सौभाग्य थाह्लसाध्वीश्री की कृपा से मुझ जैसी अल्पज्ञा को लेखन के क्षेत्र में चरणन्यास करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। जब भी कोई साध्वी अपनी नई रचना साध्वी आनन्दकुमारीजी को सुनाती तो वे बहुत प्रमुदित होती तथा रचनाकार का उत्साह बढ़ाती। मुझे यह स्पष्ट अहसास होता है कि दैहिक दृष्टि से वे भले ही हमारे बीच विद्यमान न हो किन्तु उनकी साहित्यिक प्रेरणा सतत मेरे लेखन की दिशा प्रशस्त कर रही है।

लिपि सौन्दर्य

कलात्मक व्यक्तित्व का महत्त्वपूर्ण मापक बिन्दु है लिपि सौन्दर्य। आजकल तो वैज्ञानिक भी तिरछी, सीधी, टेढ़ी, गोल लिपि के आधार पर व्यक्ति की आंतरिक चेतना के स्तरों का मूल्यांकन कर रहे हैं। साध्वी आनन्दकुमारीजी ने सुन्दर और सूक्ष्म अक्षरों के अभ्यास हेतु कई महिनों तक बालू की रेत में अक्षर जमाए। उसके बाद लम्बे समय तक गत्ते की पाटियों पर टेढ़े मेढ़े अक्षर लिखते हुए लिपि सौन्दर्य का विकास किया। आपका लेखन शुद्ध, सुन्दर और आकर्षक था। आपने दसवैकालिक सूत्र, उत्तराध्ययन सूत्र एवं रामायण आदि कई बड़े व्याख्यान लिखकर संघ के पुस्तक भंडार को समृद्ध बनाया। उस युग में हस्तलिखित पुस्तकों का अधिक प्रचलन था। जो जितना सुन्दर लेखन कार्य करता उसे पुरस्कृत भी किया जाता। साध्वी आनन्दकुमारीजी को भी इसी क्रम में कई बार पुरस्कृत होने का अवसर मिला। उन्होंने लगभग पांच पुस्तक-प्रमाण लेखन कार्य किया। प्रत्येक पुस्तक में लगभग पांच सौ पन्ने होते थे। आपमें लिपि सौन्दर्य के साथ लिपि सौक्ष्म्य का भी कौशल योग था। सूक्ष्माक्षरों को लिपिबद्ध कर उन्हें इस तरह संयोजित करने की कला थी कि दर्शक को अक्षरों का नहीं बल्कि किसी बेल, चित्र या जाल का अहसास होता

था। आपने नारियल के बावन प्यालों पर जैन सूत्रों व मंत्रों को अंकित किया। इसके अतिरिक्त लगभग दो सौ छोटे मोटे कल्प, टोपसियों, पात्र पात्रियों पर सुघड़ नामांकन किया। आपके अक्षर मोती से गोल व चमकीले थे। आप द्वारा लिखित पन्नों को देखकर कई बार छपी हुई पुस्तक का आभास होता है।

उपहार कलात्मक वस्तुओं का

साध्वी आनन्दकुमारीजी में कला सौष्ठव था। उन्होंने अपने जीवन में सैकड़ों कलात्मक वस्तुओं का निर्माण कर कला के क्षेत्र को भी समृद्ध किया। उनका मानना था कि राजा और गुरु के सामने कभी खाली हाथ उपस्थित नहीं होना चाहिए। वे जब भी गुरुदेव के चरणों में उपस्थित होती, रजोहरण के अतिरिक्त अनेक कलात्मक वस्तुएं भी भेंट करती। उनके द्वारा भेंट की गई वस्तुओं के कुछ आंकड़े उनकी ही डायरी से इस प्रकार प्राप्त हुए हैंह्न

हस्तलिखित सूक्ष्माक्षरयुक्त जाल के कल्प	५२
बिना जाल की सादी टोपसी	५१
छोटी टोपसी	१३
कल्प	१३
उपकरण	५७
पछेवड़ी	१३
साड़ी चोलपट्टा	११
रजोहरण	२५
प्रमार्जनी	११
मुखवस्त्रिका	२००
डोरी सांकळी	१५३
मुखवस्त्रिका के धागे	५१

कला कौशल

कला एक ऐसी साधना है जिसमें चित्त की एकाग्रता स्वतः सधती है। साध्वी आनन्दकुमारीजी ने स्वयं को कला के क्षेत्र में नियोजित कर केवल कलात्मक वस्तुओं का ही निर्माण नहीं किया बल्कि जीवन के एक एक क्षण को कलात्मक ढंग से जीया। उन्हें प्रदर्शनी लगाने का बड़ा शौक था। उनके हाथों से बनाई हुई कलात्मक वस्तुओं को देखकर जहां सामान्य दर्शक आकृष्ट हुए वहां बौद्धिक लोग भी प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके। वस्त्रों की बारीक सिलाई, पात्रों की सुन्दर रंगाई, कांटा निकालने की काठ की चिमटी, दन्त कुरेदनी,

प्लास्टिक की खरल, चाकू, कैंची, चश्में के फ्रेम आदि विविध वस्तुओं के निर्माण में उनकी हस्तकला विलक्षण थी। आपने काष्ठ एवं नारियल के खोलों पर रंगों का अनोखा मिश्रण कर अनेक पात्रों, प्यालों, टोपसियों तथा सुन्दर तुम्बों का निर्माण किया। रंगे हुए पात्रों पर सूत्रों के हजारों पद्यों को रेखांकित किया। रजोहरण बनाने में आप बहुत दक्ष थे। रजोहरण कला के मूल्यांकन में कई बार आपके सिंघाड़े को विशिष्ट स्थान प्राप्त हुआ। आपकी सहवर्ती साध्वियां भी कलाकार थी। वस्त्रों की सफाई एवं उन्हें समेटने की भी आप में बेजोड़ कला थी। सलवटों से भरे वस्त्र को भी आप इतनी दक्षता से समेटती कि आयरन किए जाने का अहसास होता था। आपका रहन-सहन भी कलात्मक था। अस्तव्यस्तता बिल्कुल पसन्द नहीं थी। न कपड़े अस्तव्यस्त रहते थे, न पोथी पन्ने। रुग्णावस्था में भी उनका माथा-पल्ला आदि इतना व्यवस्थित रहता था कि दर्शकों पर उनकी कलात्मक जीवन-शैली की छाप स्वतः पड़ती थी।

ः १५ :

साधना-क्रम

जप योग

संयम की यात्रा आलोक की यात्रा है। सतत अप्रमत्त रहने वाला ही उस आलोक को हस्तगत कर सकता है। साध्वीश्री ने बाल्यावस्था में ही उस आलोक की यात्रा में चरणन्यास किया और आलोक को पाने का सतत अथक प्रयास किया। साधुत्व को स्वीकार करना एक बात है जबकि उसमें रमण करना सर्वथा भिन्न बात। जब तक वैराग्य पुष्ट नहीं होता तब तक संयम में रमण नहीं हो सकता। साध्वीश्री ने अपने वैराग्य भाव को परिपुष्ट बनाने के लिए, साधना में निखार लाने के लिए अनेक प्रयोग किए। उनमें एक प्रयोग है जप। आपने अपने जीवन में कई बार आगम सूत्रों के प्रभावशाली पद्यों, प्रभावशाली मंत्रों एवं स्तोत्रों का जप किया, जिसकी संक्षिप्त तालिका इस प्रकार है

जप	आवृत्ति
ॐ भिक्षु जय भिक्षु	सवा लाख
ॐ जय तुलसी	सवा लाख
ॐ शांति	सवा लाख
ॐ अ.भी.रा.शि.को. नमः	सवा लाख
एक एक करके चौबीस तीर्थंकरों की माला	सवा लाख
दसवैकालिक की आनुपूर्वी	प्रतिदिन एक बार
नवकारमंत्र की आनुपूर्वी	प्रतिदिन एक बार
महामंत्र की माला	प्रतिदिन पांच बार
भक्तामर स्तोत्र	प्रतिदिन एक बार
उपसर्गहर स्तोत्र	प्रतिदिन २७ बार

इसके अतिरिक्त कई प्रभावी छन्दों व स्तवनों को भी आप प्रतिदिन

चितारती थी। पक्षाघात की स्थिति में भी आपकी जप के प्रति विशेष अभिरुचि रहती। साध्वी बिदामांजी उस समय आपको प्रतिदिन पैंसठिया छन्द की पूरी एक माला सुनाती थी। एक माला में लगभग अठारह सौ पद्यों की स्वाध्याय हो जाती है। इस माला को सुनाने में लगभग दो ढाई घण्टे का समय लगता। इसके अतिरिक्त मंत्रों एवं सूत्र के पद्यों का जप चलता ही रहता था। विहार, प्रवेश, रचना आदि विशेष कार्य आप मंत्रोच्चारण पूर्वक ही करती थी।

तपोयोग

साध्वी आनन्दकुमारीजी की तपः तालिका बहुत दीर्घ नहीं है फिर भी अपने मनोबल से उन्होंने जो कुछ किया, वह निम्नलिखित हैह्न

उपवास	बेला	तेला	चोला	पंचोला	अट्ठाई
८२१	३	९	२	१	१

आयंबिल	एकासन	दस प्रत्याख्यान	ढाई सौ प्रत्याख्यान
२१	१०५	दो बार	एक बार

इसके अतिरिक्त छियांलीस वर्षों से लगातार नवकारसी, विशेष तिथियों में प्रहर, विगय वर्जन व अनेक द्रव्यों के स्फुट त्याग थे। पक्षाघात की बीमारी में आपने खाद्य संयम का विशेष प्रयोग किया। रुग्णावस्था में अधिकतम नौ द्रव्यों से अधिक सेवन करने का प्रत्याख्यान था। विशेष अपेक्षा के अतिरिक्त घण्टा घण्टा का तिविहार-चौविहार त्याग भी सजगता पूर्वक करती थी।

मौन में आनन्द

कम बोलना, मधुर बोलना साध्वी आनन्दकुमारीजी के जीवन का विशिष्ट गुण थाह्न

ना पुट्ठो वागरे किंचि, पुट्ठो वा नालियं वए।
कोहं असच्चं कुव्वेज्जा, धारेज्जा पियमप्पियं।।

इस एक पद्य का आलम्बन लेकर उन्होंने अपने जीवन में बहुत कुछ सहा। प्रिय-अप्रिय घटनाओं के बीच मौन रहकर उन्होंने क्रोध को विफल करना सीख लिया था। जो अधिक बोलता है वह अधिक विग्रह का निमित्त बनता है। जो चुप रहना जानता है उसके विग्रह स्वतः समाप्त हो जाते हैं। साध्वीश्री का जीवन सहज शांत एवं निश्छल था। उनकी साधना का प्रथम मानक था व्यर्थ संभाषण का परिहार। साध्वी आनंदकुमारीजी ने इस संदर्भ में सदैव जागरूकता बरती। वे प्रतिदिन मौन करती थी। पक्षाघात से पूर्व लगातार बीस वर्षों तक प्रतिमाह

एक मौन उपवास करती थी। उन्हें बोलने से अधिक मौन में आनन्द आता था।

स्वाध्याय

साध्वी आनन्दकुमारीजी स्वाध्यायशील साध्वी थी। प्रारंभ से लेकर जीवन के अंतिम दिनों तक उनकी स्वाध्याय के प्रति रुचि प्रवर्धमान रही। आप प्रायः एक हजार पद्यों की नियमित स्वाध्याय करती थी। पक्षाघात की अवस्था में आपको रात्री में नींद बहुत कम आती थी। उस समय आप स्वाध्याय में तल्लीन बनकर अपनी आत्मा को भावित करती। जब आप स्वतः स्वाध्याय नहीं कर पाती थी तब आपकी सहवर्तिनी बिदामांजी और साध्वी भीखांजी दोनों रात्रि में जागृत रहकर हजारों पद्यों की स्वाध्याय करवाती। चौबीसी एवं आराधना सुनाने का क्रम नियमित था। इसके साथ दसवैकालिक, उत्तराध्ययन आदि सूत्रों की स्वाध्याय भी साध्वियां प्रायः करवाती रहती। एक दो दिन नींद न आए तो आदमी परेशान हो उठता है। नशे की गोलियां खाकर नींद लेने का प्रयत्न करता है। वहां वर्षों तक अनिद्रा की शिकायत रहे और किसी दवा का प्रयोग किए बिना आराम से रात निकल जाए, यह बहुत बड़ी बात है। स्वाध्याय करते-करते कब रात पूरी हो जाती, पता ही नहीं लगता। वे स्वाध्याय की गहराइयों में इस तरह खो जाती कि अपनी शारीरिक वेदना का अहसास भी उन्हें नहीं होता। स्वाध्याय करते-करते ही आपको नींद आती थी। थोड़ी सी देर बाद ज्योंही नींद टूटती आप पुनः स्वाध्याय प्रारंभ कर देती। वि. सं. २०४३ में आपके स्वाध्याय की गाथाओं की संख्या एक लाख ९९ हजार तक पहुंच चुकी थी। वि. सं. २०४४ व ४५ में गाथाओं के आंकड़े दो लाख से भी ऊपर हुए थे। इन वर्षों में आपको प्रायः प्रतिदिन न्यूनतम एक हजार गाथा तथा अधिकतम तीन हजार पद्यों की स्वाध्याय करवाई गई। स्वाध्याय के प्रति आपकी यह रुचि सबके लिए सहज प्रेरणा थी।

सेवा के दुर्लभ अवसर

तेरापंथ धर्मसंघ में जितना मूल्य अध्ययन और कला का है उससे भी कहीं अधिक मूल्य है सेवा और समर्पण का। साध्वी आनन्दकुमारीजी में सेवा के संस्कार कूट कूट कर भरे थे। जब जब भी आपको सेवा के अवसर प्राप्त हुए, आपने उत्साह पूर्वक सेवा का लाभ लिया। संघीय परम्परा के अनुसार प्रत्येक सिंघाड़े को जीवन में तीन वर्ष अचर सेवा करना अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त सेवारुचि साधु-साध्वियां स्वेच्छापूर्वक अर्ज करके सेवा के अवसर प्राप्त करते हैं

और सेवा कर धन्यता का अनुभव करते हैं। साध्वी आनन्दकुमारीजी को अपने जीवन काल में कई बार सेवा के दुर्लभ अवसर प्राप्त हुएह्न

१. विक्रम संवत् २०२१ में रतनगढ़ (चूरू) में साध्वी संतोकांजी (९३०) (सरदारशहर) की नौ महिने तक सेवा की।

२. वि. सं. २०२३ जसोल में स्थविर साध्वी प्रतापांजी (७८६) 'बीदासर' साध्वी नानुजी (८९०) (सरदारशहर) तथा साध्वी सूरजकंवरजी (९२०) (शार्दूलपुर) की चौदह महिने तक सेवा की।

३. वि. सं. २०२५ में साध्वी गुलाबांजी (संघ बहिष्कृत) 'उदयपुर' की चार महिने सेवा की।

४. वि. सं. २०२८ में लाडनूं सेवा केन्द्र में बारह महिने तक चाकरी की।

५. घोर तपस्विनी साध्वी भूरांजी (३७८) 'लाडनूं' के महाभद्रोतर तप के समय आमेट में तेरह महिने तक सेवा की।

उसके अतिरिक्त भी आपको अनेक अवसर प्राप्त हुए। जहां कहीं भी सेवा का अवसर प्राप्त हुआ आपने मनसा वाचा कर्मणा सर्वात्मना स्वयं को सेवा में नियोजित किया। आप रुग्ण साध्वियों की न केवल शारीरिक अपेक्षा का ही ध्यान रखती थी बल्कि उनकी मानसिक एवं भावनात्मक अपेक्षाओं का भी पूरा खयाल रखती थी।

ह्नः १६ :ह्न
कृपा के अविस्मरणीय क्षण

साध्वी आनन्दकुमारीजी को प्रारंभ से अंत तक सदैव कृपा का प्रसाद उपलब्ध रहा। वि. सं. २०९१ की घटना है। अष्टमाचार्य कालूगणी ने जोधपुर चातुर्मास के पश्चात् मारवाड़ से मेवाड़ की ओर प्रस्थान किया। अनेक साधु साध्वियां आचार्यश्री के साथ विहार कर रहे थे। साध्वी इन्द्रुजी भी उस समय गुरुकुलवास में थे। एक दिन आप चलते-चलते थक गई। सब चलने की धुन में इतनी मस्त थीं कि किसी को ध्यान ही नहीं रहा कि बाल-साध्वी कहां रह गई। चलते चलते अचानक साध्वी केशरजी (श्रीडूंगरगढ़) ने पीछे मुड़कर देखा तो पता लगा कि बाल साध्वी तो साध्वी रूपांजी के साथ धीमे-धीमे आ रही है। उन्होंने 'इन्द्राई' 'इन्द्राई' दो तीन बार जोर से आवाज लगाई पर हवा के तेज झोंकों में वह आवाज साध्वी इन्द्रुजी को सुनाई नहीं दी। बाल साध्वी को मौन देख साध्वी केशरजी ने तत्काल हास्ययुक्त स्नेहमयी तुकबंदी कर डालीह्न

'इन्द्राई' आई नहीं, लारै रही केम?
बतळाई बोलै नहीं, कीधो दीसै रूपां जी स्यूं प्रेम।।

साध्वी इन्द्रुजी उस समय नव दीक्षित थे, उन्हें अपनी मन्थर गति पर लज्जा का अनुभव हो रहा था पर थकान इतनी गहरी आ चुकी थी कि पांव बड़ी मुश्किल से उठ रहे थे। इस दृश्य को देख वहां खड़ी अन्य साध्वियों ने भी बाल साध्वी की मंद-गति का स्वाद लेते हुए एक तुक्का कह डालाह्न

इन्द्राई थकगी दीसै, आगै चलै न पांव।
गांव तो नेड़ो ही दीसै, आव इन्द्राई आव।।

रत्नाधिक साध्वियों के इन वात्सल्य पूर्ण शब्दों को सुनकर बाल साध्वी के मन में उत्साह का संचार हुआ। गति में स्फूर्ति आई। थके पांव फिर तेजी से उठने लगे और कुछ ही क्षणों में बाल साध्वी मंजिल तक पहुंच गई।

साकार हुई अभीप्सित कल्पना

विक्रम संवत् २०४२ का प्रसंग है। साध्वी सुजाणां के स्वर्गारोहण के पश्चात् साध्वी आनन्दकुमारीजी ने अपनी सहवर्ती साध्वियों के साथ गंगापुर से प्रस्थान कर आषाढ़ शुक्ला नवमी को आचार्यप्रवर के बागड़ (मेवाड़) में दर्शन किए। वहां से आप गुरुदेव के साथ ही आमेट पधारी। गुरुदेव आमेट चातुर्मास हेतु पधार चुके थे किन्तु चातुर्मासिक चतुर्दशी की सुबह तक आपको अग्रिम चातुर्मास का कोई दिशा निर्देश नहीं मिला। शाम को वन्दना के समय जब साध्वीश्री महाश्रमणीजी की सन्निधि में उपस्थित हुई तब साध्वीप्रमुखाश्रीजी ने मुस्कुराते हुए फरमायाह्नलो खुशखबरी सुनो! गुरुदेव ने आपको साथ रख लिया है। इस मनोनुकूल घोषणा को सुनकर साध्वीश्री का कण-कण खिल उठा। वर्षों की अभीप्सित कल्पना साकार हो गई। वह चातुर्मास अमृत-महोत्सव के संदर्भ में हो रहा था इसलिए अतिरिक्त प्रसन्नता का होना स्वाभाविक था।

जब मन में उत्साह होता है तब तन की अस्वस्थता भी कार्य में बाधक नहीं बनती। साध्वी आनन्दकुमारीजी का स्वास्थ्य प्रायः अस्वस्थ रहता था फिर भी इस चातुर्मास में अच्छा श्रम किया। हर पल हर क्षण आपके मन में कुछ न कुछ करने की उमंग जगी रहती। चाहे रंग रोगन का काम हो या सिलाई काह्नइन सब कामों से सदा तत्पर रहती। अवशिष्ट समय में आप मुखपत्ती के धागे गूंथा करती। आपने सोचाह्नगुरुकुलवास का सौभाग्य जिन्दगी में कभी कभार मिलता है इसलिए जितना श्रम करूं उतना ही कम है। आपको सारे दिन धागे गूंथते हुए देख राज की छोटी-छोटी साध्वियां पूछतीह्न'महाराज इतने धागों का आप क्या करेंगी?' साध्वीश्री फरमातेह्न'अभी नहीं, समय आने पर उत्तर दूंगी।' साध्वीश्री ने इस प्रश्न का उत्तर दिया भाद्रव शुक्ला नवमी के दिन। उन्होंने गुरुदेव के इक्यावनवें पट्टोत्सव के उपलक्ष में इक्कावन धागों को कलात्मक ढंग से गूंथकर सुसज्जित डब्बी में संयोजित कर एक सुन्दर भेंट साध्वीप्रमुखाश्री के चरणों में समर्पित की। धवल सूत्र भेंट करते समय आपके मन में इतनी खुशी थी कि भाव स्वयं छन्द बनकर बहने लगे।

परम पवित्रा सच्चरित्रा, सकल गुणां री खान।
बड़ै भाग स्यूं है मिल्या, महाश्रमणी पुनवान।।
रजत जयन्ती आपकी, मिला है गुरुकुलवास।
धवल सूत्र को गूंथकर, मन में अति उल्लास।।

कर अर्पण तव चरण में, चाहती आशीर्वाद।
सुख-दुःख में सम रह सकूं, पाऊं सुख निर्बाध।।

इस कलात्मक भेंट को देखकर तथा भावपूर्ण दोहों को सुनकर साध्वियों की परिषद् में महाश्रमणीजी ने फरमायाह्न'देखो! इनमें कितना उत्साह है।' महाश्रमणीजी के इन कृपापूर्ण शब्दों ने साध्वीश्री के उत्साह को शतगुणित कर दिया। उन्होंने उसी उत्साह के साथ पुनः यह कार्य शुरू कर दिया और आचार्यप्रवर के जन्मोत्सव के पुण्य प्रसंग पर गुरुकुलवासी सभी साध्वियों को मुखपत्ती में डालने के धागे गूंथकर भेंट किए।

यहां कितने सिंघाड़े हैं?

एक दिन संध्याकालीन प्रतिक्रमण के पश्चात् महाश्रमणीजी साध्वी-समूह से घिरी हुई थी। अचानक आमेट का एक भाई आया। उसने जिज्ञासित स्वरों में पूछाह्नयहां कितने सिंघाड़े हैं? महाश्रमणीजी ने तत्काल साध्वी आनन्दकुमारीजी की परीक्षा लेने की दृष्टि से आपकी ओर संकेत करते हुए कहाह्नभाई! पूछ रहा है कि आपके यहां कितने सिंघाड़े हैं? साध्वीश्री ने तत्काल उत्तर देते हुए कहाह्न'यहां तो आपका (महाश्रमणीजी का) एक ही सिंघाड़ा है।' महाश्रमणीजी ने पुनः कहाह्ननहीं, नहीं इस भाई के पूछने का मतलब है कि यहां आप कितनी अग्रणी साध्वियां हैं? साध्वीश्री ने भी पुनः उसी निर्भीक लहजे में कहाह्न'यहां तो आप एक ही अग्रगण्या हैं।' आगन्तुक भाई की जिज्ञासा सिमटने की बजाय और अधिक उभर उठी। वह इस छोटे से उत्तर से संतुष्ट नहीं हो पाया। साध्वीश्री ने उसे समझाते हुए कहाह्न'नदियां जब समुद्र में मिल जाती हैं तब उनका कोई अलग अस्तित्व नहीं रहता। ठीक इसी तरह जब तक साधु साध्वियां बहिर्विहार में रहते है तब तक व्यवस्था की दृष्टि से उनके अलग-अलग सिंघाड़े होते हैं किन्तु जब वे ही सिंघाड़े गुरुकुलवास में आते हैं तब सबका समावेश महाश्रमणीजी के साथ हो जाता है।' प्रश्नकर्ता का जिज्ञासु मन समाहित हो गया। महाश्रमणीजी भी आपके उत्तर देने की कला से बहुत प्रभावित हुई।

ह्नः १७ :ह्न
गुरु कृपा का प्रसाद

जिस व्यक्ति को गुरु कृपा उपलब्ध होती है वह कहीं भी क्यों न चला जाए, सफलता स्वयं उसके चरण चूमती है। गुरु की अगम गरिमा गाते हुए संत कबीर ने कहा हैह्न

कबीरा मारग कठिन है, ऋषि मुनि बैठे थाक।
तहां कबीरा चढ़ गया, गह सद्गुरु का हाथ।।

जो सर्वात्मना समर्पित होकर गुरु-दृष्टि की आराधना में अहर्निश जागरूक रहता है निःसंदेह उसे गुरु कृपा का पुण्य प्रसाद प्राप्त होता है।

साध्वी आनन्दकुमारीजी के जीवन-काल में भी कुछ ऐसे दुर्लभ प्रसंग आए जो गुरु कृपा के अमूल्य क्षण बन गए। शिष्य गुरु की सन्निधि में दर्शन-उपासना हेतु जाए, यह सहज घटना है किन्तु जिसे सेवा कराने के लिए गुरु स्वयं आए उस शिष्य के सौभाग्य का कहना ही क्या? वि. सं. २०३० में आपका अस्वस्थता वश टोहाना में प्रवास था। उन्हीं दिनों गुरुदेव का हिसार चातुर्मास के पश्चात् टोहाना पधारना हुआ। उस समय आप इतनी अस्वस्थ थी कि गुरुदेव के प्रवास स्थल तक जाना भी आपके लिए कठिन था। जब इस स्थिति का पता लगा तो गुरुदेव स्वयं आपको दर्शन देने पधारे। लगभग एक घंटे तक वहीं सेवा करवाई। गुरु की एक पल की सेवा भी भव भव संचित पापों का विनाश करने वाली होती है वहां एक घण्टे की सेवा का अवसर मिलना कितनी सौभाग्य की बात है। गुरुदेव ने साध्वीश्री के स्वास्थ्य संबंधी कई बातें पूछी तथा उसी समय स्वास्थ्य लाभ की दृष्टि से आपको साधन द्वारा हांसी जाकर उपचार कराने का आदेश प्रदान कर दिया। साध्वीश्री गुरुदेव के इस अयाचित अनुग्रह को पाकर कृतार्थ हो उठी।

गंगापुर प्रवास में भी साध्वी सुजाणांजी की वृद्धावस्था एवं दीर्घ तपश्चर्या में श्रद्धेय आचार्यवर ने साध्वियों के ठिकाने पधारकर करीब एक घण्टे तक उपासना का अलभ्य अवसर प्रदान किया।

अमृत-पत्र

वि. सं. २०४२ में अमृत महोत्सव के स्वर्णिम अवसर पर प्रसन्नता को संवर्धित करने वाला विरल प्रसंग बनाह्नगुरुदेव द्वारा स्वयं अपने हाथ से प्रत्येक साधु साध्वी के लिए लिखे अमृत पत्र। साध्वी आनन्दकुमारीजी को प्रदत्त अमृत-पत्र की भाषा इस प्रकार हैह्न

अर्हम्

आनन्द का स्रोत बाहर नहीं भीतर है।

काश! इसे कोई खोज सके, खोल सके।

५.७.८५, शुक्रवार **आचार्य तुलसी**

आमेट, तेरापंथ भवन

पद्यात्मक अमृत-पत्र की भाषा इस प्रकार हैह्न

अर्हम्

आनन्दित आनन्दकुमारी, मात सुजाणां रो सुरवास।
अति उल्लासे पर प्रयासे, पायो अबके गुरुकुलवास।।

२२.७.८५, सोमवार **आचार्य तुलसी**

आमेट, तेरापंथ भवन

तेरापंथ के सवा दो सौ वर्षों के इतिहास का यह पहला अवसर था जब किसी आचार्य ने अपने अमृत महोत्सव के उपलक्ष में गुरुकुलवास के प्रत्येक साधु-साध्वी को अपने हाथ से लिखित अमृत पत्र का अवदान दिया। प्रायः बहिर्विहार में रहने वाली साध्वी आनन्दकुमारीजी भी इस इतिहास दुर्लभ मौके पर उपस्थित थी। आराध्य देव के इस अनमोल कृपा प्रसाद को पाकर उनका रोम रोम पुलक उठा।

साध्वी आनंदकुमारीजी को अस्वस्थता की स्थिति में भी पूज्यवर का मंगल संदेश प्राप्त हुआह्न

अर्हम्

साध्वी आनन्दकुमारीजी ने शासन की अच्छी सेवा की है और सबसे बढ़िया बात यह हुई कि साध्वी सुजाणांजी को समाधिपूर्वक पहुंचा दिया। शरीर

में नई व्यथा खड़ी हुई है। इस बारे में चिंता न करें। खूब समाधि रखें। अच्छी सेवा होगी और सानन्द संयम पलेगा। तुम्हारे दर्शन की उत्कृष्ट भावना है। वह मेरे खयाल में है। सभी साध्वियां मनोयोग से सेवा कर रही है और जब तक अपेक्षा हो करती रहे।

२२.१.८६ **आचार्य तुलसी**

घासा (मेवाड़)

अर्हम्

साध्वी आनन्दकुमारीजी इस वर्ष आमेट चातुर्मास में आचार्यश्री के साथ थी। शरीर अस्वस्थ होने के बावजूद उन्होंने पूरे उत्साह के साथ गुरुदेव की सेवा का लाभ उठाया। आमेट से वे नाथद्वारा पहुंची और वहां साध्वीश्री सुन्दरजी (सरदारशहर) की आंख का सफल ऑप्रेशन करवा दिया। अब उन्हें मर्यादा महोत्सव के लिए उदयपुर पहुंचना था पर, अचानक पक्षाघात हो गया। एक बार नहीं दो बार जैसा कि तलेसरा जी ने बताया कि एक बार उनके जीवन की आशा ही समाप्त प्रायः हो गई लेकिन आयुष्य बल के कारण, डॉक्टरों की सूझबूझ एवं श्रावकों की जागरूकता ने उन्हें बचा लिया। इस समय उन्हें अपने मन को पूरी तरह से निश्चिन्त और हल्का रखना है। परमाराध्य गुरुदेव के दर्शन की उनकी जो भावना है वह तो रहेगी ही। यहां से सब साध्वियों की मंगल कामना है कि जल्दी स्वास्थ्य लाभ करें और अपने संयमी जीवन को निर्भीक रूप से जीएं। उनकी सहवर्ती सभी साध्वियां मनोयोग पूर्वक सेवा कर रही हैं। ऐसी सेवा हमारे धर्मसंघ में ही हो सकती है। इससे शासन की बहुत प्रभावना होती है। साध्वियां पूरी जागरूकता से सेवा करें। नाथद्वारा के श्रावक श्राविकाएं भी अपने कर्तव्य के प्रति सजग हैं। इसकी हमें प्रसन्नता है। साध्वी आनन्दकुमारीजी के स्वास्थ्य लाभ के लिए पुनः मंगल कामना।

२२.१.८६ **साध्वीप्रमुखा कनकप्रभा**

घासा (मेवाड़)

अर्हम्

आदरास्पद साध्वी आनन्दकुमारीजी!

सादर वन्दना व सुखपृच्छा।

आत्मा अजर अमर और अविनश्वर है। शरीर नाशवान है। आत्मा और शरीर का संयोग अनादिकालीन है फिर भी यह निश्चित है कि जिस दिन यह संयोग

टूटेगा उसी दिन आत्मा अपने स्वरूप में अवस्थित होगी। इसके लिए भेद विज्ञान की अनुप्रेक्षा बहुत जरूरी है। 'आत्मान्यः पुद्गलश्चान्यः' इस आलम्बन सूत्र को दिन रात स्मृति में रखें। इसकी अनुप्रेक्षा करें और शरीर से आत्मा की भिन्नता का अनुभव करें, यही आपकी मंजिल है और इसीमें समाधि का रहस्य है। श्रद्धेय आचार्यप्रवर और युवाचार्यश्री के साक्षात् दर्शन और मंगल सान्निध्य पाने की आपकी प्रबल भावना पूरी न हो सकी, इसका मन पर किंचित् भार न रखें। गुरुदेव के मंगल संदेश को ही साक्षात्कार और सान्निध्य मान कर समाधिस्थ रहें। साध्वियां जागरूक भाव से सेवा कर रही हैं। श्रावक समाज अपने कर्तव्य के प्रति सजग है। निश्चिन्त होकर आत्मलीनता की दिशा में गति करें।

२२.४.१९८६ **साध्वीप्रमुखा कनकप्रभा**

राजसमंद (मेवाड़)

ह्नः १८ :ह्न
जीवन-संध्या के तीन वर्ष

आमेट चातुर्मास समाप्ति के दो दिन पूर्व गुरुदेव ने आपसे कहाह्न'तुम उदयपुर आकर क्या करोगी? शहरों में गोचरी के घर दूर होते हैं और पंचमी का स्थान दुविधाजनक। तुम्हें वहां दिक्कत रहेगी। तुम्हारे इस बार सेवा तो अच्छी हो ही गई अब तुम छोटे-छोटे गांवों का स्पर्श कर लो।' साध्वी आनन्दकुमारीजी चातुर्मास के पश्चात् मर्यादा महोत्सव के अवसर को भी प्राप्त करना चाहती थी। क्योंकि इसी अवसर पर आचार्यवर पूरे संघ को अग्रिम यात्रा के लिए नया पाथेय प्रदान करते है। सहज ही संघ के सैकड़ों साधु साध्वियों से मिलने का सुयोग प्राप्त होता है। उन्होंने अपनी बात में चातुर्य का पुट देते हुए कहाह्नगुरुदेव! आपने मेरे जैसी साधारण साध्वी को अमृत महोत्सव के चातुर्मास में अपने साथ रखाने की महती कृपा की। आपकी इस महती-कृपा के प्रति मैं श्रद्धाप्रणत हूं। अब उदयपुर मर्यादा महोत्सव पर अमृत महोत्सव का चौथा चरण आयोजित हो रहा है। उदयपुर भारत का दूसरा कश्मीर है। जहां हजारों यात्री घूमने आते रहते हैं। भंते! आज तक मैंने उदयपुर को नहीं देखा। यदि गुरुदेव की कृपा हो तो इस बहाने मेरा भी उदयपुर देखना हो जाए और महोत्सव भी।' आचार्यवर साध्वी आनन्दकुमारीजी की सहज सरल प्रार्थना पर मुस्कुराने लगे। गुरुदेव ने विनोदी लहजे में फरमायाह्न'अच्छा! तुम उदयपुर देखना चाहती हो तो महोत्सव पर आ जाना।' अनुज्ञा मिलते ही साध्वीश्री का मन खुशी से नाच उठा।

विहार से एक दिन पूर्व पूज्य गुरुदेव ने फरमायाह्न'तुम यहां से सीधी नाथद्वारा चली जाओ। वहां साध्वीश्री सुन्दरजी की आंख का ऑप्रेशन करवा देना। ऑप्रेशन को एक सवा महिना हो जाए तब उदयपुर आ जाना।'

गुरुदेव की आज्ञा सहर्ष शिरोधार्य कर साध्वी आनन्दकुमारीजी ने मार्गशीर्ष कृष्णा एकम को आमेट से विहार किया। मार्गवर्ती छोटी-छोटी मंजिलों को तय करती हुई आप मार्गशीर्ष कृष्णा बारस को नाथद्वारा पहुंच गई। चतुर्दशी के दिन

साध्वी सुन्दरजी की आंख का सफल ऑप्रेशन हो गया। ऑप्रेशन को पूरा एक महिना हो गया।

पक्षाघात का आक्रमण

आपने पोष शुक्ला दूज को नाथद्वारा से विहार करने का निश्चय किया। किन्तु वह निश्चय क्रियान्वित नहीं हो सका। पोष कृष्णा चतुर्दशी को अचानक पक्षाघात के झटके ने आपके गात्र को पीड़ाक्रांत कर दिया। एक क्षण में सब कुछ बदल गया। उदयपुर देखने, महोत्सव पर पहुंचने और पूज्य गुरुदेव की उपासना की सुनहरी कल्पनाओं में डूबी साध्वी आनन्दकुमारीजी की स्फूर्तिली देह पल भर में विवश और परवश हो गई।

घटनाक्रम इस प्रकार बना। प्रातःकालीन नवकारसी के पश्चात् साध्वी आनन्दकुमारीजी सभा भवन के बाहरी बरामदे में छोटे काष्ठ पट्ट पर बैठकर दन्त प्रक्षालन कर रही थी। कुर्ला करके ज्योंही उठने लगी कि अचानक मुंह के बल लुढ़क पड़ी। शरीर का पूरा बांयां भाग शून्य हो गया। पक्के फर्श पर अचानक गिरने से जोर से धमाका हुआ। तेज धमाके को सुन साध्वी सुन्दरजी एवं साध्वी बिदामांजी कमरे से बाहर आई। साध्वी आनन्दकुमारीजी को जमीन पर औंधे मुंह लुढ़के देख पल भर के लिए सन्न रह गई। वे दौड़ती हुई साध्वी आनन्दकुमारीजी के सन्निकट पहुंची। साध्वी पानकंवरजी और साध्वी उज्ज्वलरेखाजी उस समय शौचार्थ जंगल गई हुई थी। वे भी ठिकाने पहुंच गई। साध्वी भीखांजी और साध्वी वसुमतीजी सदा की अपेक्षा सहज ही उस दिन प्रातराश की गोचरी जल्दी लेकर आ गई। इस आकस्मिक आघात से सब साध्वियां एक बारगी घबरा उठी। क्या करें? कैसे करें, कैसे उठाएं? इत्यादि अनेक उलझनों से घिरी साध्वियां बार-बार उठाने की कोशिश कर रही थी। साध्वी आनन्दकुमारीजी ने भी अपनी पूरी ताकत के साथ जोर लगाया पर उठना तो दूर, वे पांवों को ऊंचा नीचा तक भी नहीं सरका सकी। साध्वीश्री का शरीर पहले से भारी तो था ही फिर रक्त संचार बंद होते ही वह और अधिक बोझिल बन गया। उसे उठाकर भीतर लाना एक जटिल पहेली बन गया।

इस विषम स्थिति में भी जहां सामान्य रोगी तन से ही नहीं, मन से भी टूट जाता है। वहां साध्वीश्री ने बड़ी हिम्मत व दृढ़ मनोबल के साथ साध्वियों का मार्ग प्रशस्त करते हुए कहाह्नसतियो! अब घबराने से कुछ नहीं होगा। जो होना था वह हो गया। यह तुम सबकी कसौटी का समय है। हंसते हंसते इस कसौटी को पार करना है। औदारिक शरीर का यही लक्षण है। इसमें कब कौन

सी व्याधि किस रूप में उभर जाए, कौन कह सकता है? साहस और धैर्य के साथ इस संकट को झेलना है। अब तुम सब मुझे लुंकार में डालकर अन्दर ले जाओ।' सबने मिलकर साध्वीश्री को लूंकार में डालकर कमरे के भीतर काष्ठ पट्ट पर लाकर सुला दिया। साध्वीश्री की अस्वस्थता की सूचना बिजली की भांति फैल गई। नाथद्वारा के जिम्मेदार श्रावकों ने समयोचित जागरूकता बरतते हुए तुरन्त चिकित्सा की व्यवस्था की। कुछ ही समय में डॉक्टर राजेन्द्रजी अग्रवाल एवं डॉ. श्रीमती रेखा पहुंच गई। जांच परख के बाद चिकित्सकों ने सलाह दी कि इन्हें अभी-अभी हॉस्पिटल में भर्ती कराना आवश्यक है वरना स्थिति खतरे में है। चिकित्सकों की राय के अनुसार तत्काल व्यवस्था की गई। साध्वीश्री हॉस्पिटल के पास वकील साहब (फतेहलालजी बोहरा) के मकान में नौ दिन तक रही। इसी अंतराल में एक दिन दिल का दौरा भी पड़ा। लगभग आधा घंटे तक हाथ की नब्ज बंद हो गई। श्वास की गति एकदम मंद हो गई। शरीर निस्पन्द होने लगा। कण्ठ अवरुद्ध हो गए। वाणी मौन हो गई। ऐसे लग रहा था कुछ पल के लिए जैसे सब कुछ निश्चेष्ट हो गया हो। जीने की आशा धूमिल होने लगी। डॉक्टरों ने भी अंतिम उत्तर देते हुए स्पष्ट संकेत दे दिया कि अब बचने के कोई आसार नहीं हैं। नब्ज की स्थिति देखते हुए बस पल दो पल के मेहमान हैं। जितना इनका योग है उतने श्वास ले रहे हैं। आपको जो कुछ करना हो, कर लीजिए।

एक चमत्कार : बंद नब्ज पुनः चालू

स्थिति की गम्भीरता को देखते हुए साध्वी बिदामांजी ने साध्वी आनन्दकुमारीजी को सचेतन अवस्था नहीं आने तक चारों आहार-पानी के त्याग करवा दिए। साध्वियों ने एक स्वर, एक लय से ॐ भिक्षु का जप शुरू कर दिया। उसी समय साध्वी उज्ज्वलरेखा ने दो संकल्प किएह्न

अगर साध्वी आनन्दकुमारीजी इस आघात से बच गई तो मैं प्रत्येक शुक्ला त्रयोदशी (भिक्षु स्वामी की निर्वाण तिथि) को विशेष अस्वस्थता के अतिरिक्त जीवन पर्यन्त उपवास करूंगी तथा 'ॐ भिक्षु जय भिक्षु' मंत्र का सवा लाख जप करूंगी।

संकल्पी चेतना सुदृढ़ बनी, पूरा वातावरण जपमय हो गया। यह संकल्प का प्रभाव था या आयुष्य बल की प्रबलता, कुछ भी हो एक चमत्कार ही मानना होगा कि आधा घंटे में नब्ज पुनः चालू हो गई। प्राणों में नई गति सी आई और साध्वीश्री का निष्पन्द गात्र पुनः स्पन्दशील हो उठा। कुछ क्षण पहले

जो निर्वाक हो गई थी वे अब एकदम अच्छी तरह बात करने लगी। डॉक्टर भी इस परिवर्तन को देख आश्चर्य चकित थे। यह सब कैसे हो गया? इस प्रश्न का उत्तर व्यक्त जगत की सीमाओं से परे था।

उस समय पूज्य गुरुदेव का नाथद्वारा के निकटवर्ती क्षेत्र 'घासा' में प्रवास था। साध्वीश्री के संसारपक्षीय चचेरे भाई श्री केवलचंदजी नाहटा भी सेवा में आए हुए थे। उन्होंने तत्काल आचार्यवर के दर्शन कर सारी स्थिति की जानकारी दी। पक्षाघात के संवाद सुन आचार्यवर तथा महाश्रमणीजी ने अपने मंगल संदेश प्रदान किए। संघ एवं संघपति के प्रति, श्रद्धा तथा भक्ति आपके रग-रग में रमी हुई थी। जब-जब गुरुदेव के संदेश या संवाद सुनती, आप अपनी वेदना को भूल सी जाती। संघ और संघपति के गुणग्राम करते समय रोम रोम खिल उठता।

गुरु के शब्द खाली नहीं जाते

संसार में सबसे बड़ा अगर कोई दुःख है तो वह है परवशता को भोगना। साध्वी आनन्दकुमारीजी अब शारीरिक दृष्टि से पूर्णतः परवश हो चुकी थी। परवशता की इस पीड़ा को उन्होंने समभाव से सहा। परवशता से भी अधिक व्यथा थी गुरुदर्शन से वंचित रहने की। बार-बार उनके मुख से एक ही बात निकलतीह्न'अब भी अगर ठीक हो जाऊं तो गुरुदेव के दर्शन कर लूं।' उदयपुर महोत्सव पर नहीं पहुंच पाने का उनके मन में बहुत भार रहा।

नाथद्वारा प्रवास के समय बहुत बार गुरुदेव के उन वचनों को याद करती, जो आमेट पावस की सम्पन्नता से पूर्व आचार्यवर के मुख से एक दिन सहज निकल पड़े कि 'तुम उदयपुर क्या करोगी? तुम्हारी यहां अच्छी सेवा हो गई'। साध्वी आनन्दकुमारीजी कई बार यह कहते कहते गद्‌गद हो उठतीह्नहे प्रभो! मैंने उस दिन ऐसा नहीं सोचा था कि सचमुच मैं उदयपुर आते-आते इस तरह बीच में ही अटक जाऊंगी। इस प्रकार अकस्मात् असातावेदनीय का क्रूर आघात मुझे पूर्णतः अवश बना देगा पर आप महान भविष्यद्रष्टा हैं। साक्षात् श्रुतकेवली के समान हैं। सिद्ध पुरुष हैं। आपको मेरा भविष्य पहले ही सूझ रहा था। तभी आपने आमेट प्रवास के बाद मुझे सीधा नाथद्वारा भेज दिया। बहुत अच्छा हुआ कि मैं आपकी आज्ञानुसार निर्णीत क्षेत्र में पहुंच गई वरना किसी मार्गवर्ती छोटे मोटे गांव में ऐसी स्थिति होती तो संभालना बहुत मुश्किल हो जाता।

मैंने उदयपुर देखने की इच्छा प्रकट की थी पर, अब समझ में आता है कि व्यक्ति को अपनी कोई स्वतंत्र इच्छा नहीं करनी चाहिए। जो गुरु की इच्छा होती

है वही पूरी होती है अतः गुरु की इच्छा ही शिष्य की इच्छा होनी चाहिए। गुरुदेव! मुझे आपके वचनों का ही आसरा है। आप ही सबल सहारा है। आपकी दृष्टि में ही सुख की सृष्टि है। आप पर मुझे पूरी आस्था और विश्वास है। आप जो करेंगे वही सही होगा। आपके चिन्तन में मेरा परम हित है। आपकी कृपा ही मेरा जीवन है। अब मेरा शरीर किसी काम का नहीं। जो व्यक्ति अपना काम नहीं कर सके उसका जीना भी क्या जीना है? पर, भोगावली कर्म अभी बाकी है। लगता है इसीलिए मैं मरते मरते पुनः जी गई। खैर, अपने कृत कर्मों को तो चुकाना ही होगा।' साध्वीश्री के इन भावपूर्ण उद्‌गारों को सुन सहवर्ती साध्वियां भी अभिभूत हो जाती।

घोर वेदना में समभाव

साध्वी आनन्दकुमारीजी में वेदना को प्रसन्नता से भोगने की अद्‌भुत कला थी। जीवन के अंतिम तीन वर्षों में तो वेदना ने उनका विकराल रूप से पीछा किया। पक्षाघात, हार्ट अटेक, हाई ब्लडप्रेशर, क्षय रोग आदि बीमारियों ने एक साथ आपके शरीर को आक्रान्त कर दिया। घोर वेदना के इन क्षणों में भी आपकी प्रसन्नता कभी खण्डित नहीं हुई। आपके मन में कभी यह विचार तक नहीं आया कि मुझे क्या हो गया, अब क्या होगा? कैसे होगा? आप रोग से न कभी भयभीत हुई और न कभी घबराई। तीन-तीन वर्षों तक दुर्जेय योद्धा की तरह आप समता के अमोघ शस्त्र से जीवन के समरांगण में निरंतर कर्म शत्रुओं से जूझती रही। लघुशंका एवं शौच निवृत्ति हेतु उठाते बिठाते समय आपको अपार शारीरिक वेदना होती। उस स्थिति को देखकर आपकी सहवर्ती साध्वियां भी दिलगीर हो उठती। उस असह्य वेदना के क्षणों में भी साध्वियों को संबोधित करती हुई आप बहुधा जयाचार्य द्वारा रचित आराधना की आठवीं ढाल के इन पद्यों का संगान करती।

पूरब कृत अघ जे भोगवियां मुकाई रे,
पिण वेद्यां बिन नहिं छूटको थाई रे।
जे नरक विषे म्हें दुख सह्यो अनन्तो रे,
तो रे मनुष्य नो किञ्चित दुख हुंतो रे॥

इन पद्यों को गाते समय आप इतनी तल्लीन हो जाती कि पीड़ा का अहसास तक नहीं होता। साध्वियों को शिक्षा देते हुए आप फरमातीह्नसतियो! इस जीव ने अज्ञान अवस्था में न जाने कितने कष्ट सहे हैं फिर यह तो स्वल्प-काल का कष्ट है। शरीर तो क्षणिक है। इसकी बीमारियां भी क्षणिक हैं फिर उस वेदना से घबराना क्या? इस पिंजरे को तो एक न एक दिन छोड़ कर जाना ही

है। बहुत अच्छा हुआ कि संयम जीवन में ही मैं अपने असातावेदनीय कर्म को भोगकर हल्की हो जाऊंगी। भला इससे अच्छा अवसर और कब आयेगा? मुझे तो अपने कर्मों को भोगना ही है फिर यह उदासी क्यों? अंतिम चार दिनों में आपकी आवाज एकदम बन्द हो गई फिर भी क्रूर काल आपके होठों की मुस्कान को छीन न सका। आपका दीप्तिमान मुखमण्डल मानों जन-जन को यह प्रतिबोध दे रहा थाह्नसदैव प्रसन्न रहो। मुस्कान का दामन कभी मत छोड़ो। मुस्कान ही जीवन है और यही अमरत्व की निशानी है।

जीवन के अंतिम पांच दिनों में आपको ब्रेन हेमरेज हो गया। उस शून्यावस्था में आपको बार-बार वमन हो रही थी। ब्रेन हेमरेज की पहली रात को तो लगभग ५०-६० उल्टियां हुई। पास में बैठी साध्वियों के वस्त्र तक भी भर गए। चार पांच बार तो ऐसी स्थिति बनी कि वमन होने के पश्चात् मुंह साफ करते करते पुनः वमन हो गई और साध्वियों के हाथ भी भर गए फिर भी मन के किसी कोने में कहीं घृणा या ग्लानि का भाव नहीं। उल्लास और प्रसन्नता के साथ साध्वियों ने सेवा की। जब साध्वी आनन्दकुमारीजी देवलोक हुए तब नाथद्वारा के श्रावकों ने कहाह्न'साध्वियों ने कमाल की सेवा की है। हमने उनको थम्भे के बांधते समय पूरे ध्यान से देखा लेकिन कहीं भी उनके शरीर पर कोई छोटा जख्म तक नजर नहीं आया। वरना इस बीमारी में तो निरन्तर सोने या बैठे रहने से शरीर के पृष्ठ भाग में घाव होने की प्रबल संभावना रहती है। यह आश्चर्य की बात है कि तीन-तीन वर्षों तक बिस्तर में रहने पर भी कहीं घाव नहीं हुआ। यह सहयोगी साध्वियों की अत्यधिक सफाई एवं जागरूक सेवा का ही परिणाम है।'

सेवा किसने ज्यादा की

साध्वी आनन्दकुमारीजी के स्वर्गवास के पश्चात् जब सहवर्ती साध्वियों ने योगक्षेम वर्ष में (लाडनूं) आचार्यवर के दर्शन किए तब गुरुदेव ने पूछाह्नबोलो, सेवा किसने ज्यादा की? साध्वियां इस प्रश्न का क्या उत्तर देती? यह कोई गणित का प्रश्न तो था नहीं कि गिन कर बताया जा सके। सबने एक स्वर से एक ही बात कहीह्नसभी ने ज्यादा की। यह सुन गुरुदेव मुस्कुराने लगे। उस समय साध्वियों ने दो रजोहरण भी श्रीचरणों में भेंट किए। गुरुदेव ने महाश्रमणीजी की ओर संकेत करते हुए फरमायाह्नइन लोगों ने बहुत सेवा की है। तीन-तीन वर्षों तक इतनी सेवा करना बहुत कठिन काम है। इन्होंने तो सेवा में हद कर दी। इनको जो जरूरत हो वह दे दो। महाश्रमणीजी ने गुरुदेव के निर्देशानुसार उसी समय एक रजोहरण साध्वी उज्ज्वलरेखाजी को प्रदान कर दिया। आराध्य के इस अनुग्रह को पाकर साध्वियां धन्य हो उठी। तीन वर्षों की सेवा का श्रम मानों

क्षण भर में काफूर हो गया। जिस संघ में आचार्य सेवार्थी साधु-साध्वियों का इस प्रकार मूल्यांकन करते हैं वहां निश्चित ही सेवा करने वाले साधु-साध्वियों में सेवा के प्रति उत्साह जागता है तथा गुणों की वृद्धि होती है, संघ की प्रभावना होती है एवं दूसरों को प्रेरणा मिलती है।

एक और सेवा का अवसर

वि. सं. २०४४ की घटना है। साध्वी दीपांजी (श्रीडूंगरगढ़) के भीलवाड़ा पैर में फैक्चर हो गया। उस समय वे साध्वी स्वयंप्रभाजी (सरदारशहर) के साथ थी। किन्तु विहार की स्थिति नहीं होने के कारण उस वर्ष उनको भीलवाड़ा चातुर्मास करने वाली साध्वी पानकंवरजी (पचपदरा) के साथ इलाज हेतु रखा गया। पावस के पश्चात् साध्वी रतनश्रीजी (लाडनूं), जो अपनी सहवर्ती साध्वी के उपचार हेतु गंगापुर रुके हुए थे, के साथ साध्वी दीपांजी को रखने का आदेश फरमाया। जब उनकी सहवर्ती साध्वी का स्वास्थ्य विहार के अनुकूल हो गया तब पुनः सारी स्थिति गुरुदेव को निवेदित की गई। आचार्यप्रवर ने सोचाह्नअगर रुग्ण साध्वी की व्यवस्था ऐसे स्थान में हो जाए जहां कोई सिंघाड़ा सहज स्थिरवासी हो तो इस सिंघाड़े का उपयोग अन्यत्र हो जाए। इस दृष्टि से आचार्यवर ने साध्वी आनन्द कुमारीजी के सिंघाड़े का विकल्प खोजा और तत्काल गंगाशहर निवासी श्री रतनलालजी चोपड़ा को अपना संदेश धराया। संदेश की भाषा इस प्रकार हैह्न

अर्हम्

साध्वी आनन्दकुमारीजी!

गंगापुर में साध्वी रतनश्रीजी के पास में साध्वी दीपांजी हैं, जिनकी पिछले साल भीलवाड़ा में हड्डी क्रेक हो गई थी। अब भी उनकी विहार की स्थिति नहीं है और तुम लोगों को अभी नाथद्वारा में रहना है। साध्वी आनन्दकुमारीजी जब तक अस्वस्थ हैं उनकी सेवा तो सतियों को करनी ही है। अगर साध्वी दीपांजी को तुम संभाल सकती हो तो अभी उन्हें भी तुम्हारे यहां रख दें। साध्वी प्रकृति वगैरह की दृष्टि से ठीक है पर चलने में अक्षम है। उस हालत में उनको एक जगह रखना पड़ेगा। चारों साध्वियां उनको अच्छी तरह संभालने की स्थिति में हो तो वहां पहुंचा दिया जाएगा। नहीं तो फिर दूसरी व्यवस्था करेंगे। यदि संभव हो तो कुछ दूर रतनश्रीजी की दो सतियां साधन से पहुंचा दे। बाकी इधर की सतियां ले जाएं। साध्वी पन्नांजी व्यवस्था कर दे।

दिनांक २४.२.८८ **आचार्य तुलसी**

इक्कास (जींद)

साध्वी आनंदकुमारीजी को ज्यों ही यह संदेश मिला, आपने तुरन्त अपनी सहगामी साध्वियों को बुलाकर पूछाः'बोलो! क्या उत्तर देना है?' सभी साध्वियों ने उत्साहित स्वरों में कहाः'आप गुरुदेव से निःसंकोच भाव से निवेदन करवा दें कि हमें यह एक और सेवा का अवसर प्रदान करने की कृपा करावें। हम उनकी सेवा में किसी भी प्रकार की कमी नहीं आने देंगी।' सहवर्ती साध्वियों के ये शब्द सुन साध्वी आनन्दकुमारीजी को बड़ी प्रसन्नता हुई। आपने तुरन्त श्रावकों के माध्यम से गुरुदेव के चरणों में करवायाः

अर्हम्

परम पूज्य गुरुदेव!

आपने महती कृपा कर मुझे इतनी दूर बैठे याद किया, इससे बढ़कर मेरा और क्या सौभाग्य होगा। गुरुदेव ने जो असीम अनुग्रह करवाया है वह मेरे लिए चिर स्मरणीय है। मैं और मेरी सहयोगी साध्वियां गुरुदेव के हर इंगित को प्राणप्रण से निभाने के लिए पूर्ण जागरूक रहेंगी। प्रभो! आप अनन्त शक्ति के स्रोत हैं। आपके द्वारा निःसंदेह हमें वह अपूर्व शक्ति प्राप्त होगी जिससे दो दो अक्षम साध्वियों की सेवा अच्छी तरह हो सकेगी। संघ सेवा का यह दुर्लभ अवसर भाग्य से ही मिलता है। गुरुदेव निश्चिन्त होकर हमें यह मौका प्रदान करावें।

२३ मार्च १९८८ निवेदिका

नाथद्वारा **साध्वी आनन्दकुमारीजी (मोमासर)**

इस निवेदन-पत्र को पढ़कर गुरुदेव ने फरमायाः'साध्वियों ने बड़ी हिम्मत का परिचय दिया है। इस बीमारी में एक रोगी को संभालना भी बड़ा कठिन होता है वहां दो-दो साध्वियों की सेवा तो अत्यन्त दुरूह काम है। फिर भी साध्वी आनन्दकुमारीजी ने अवसर पर जिस उत्साह को दिखाया है वह सचमुच संघ की अपूर्व सेवा है। उनकी सहयोगी साध्वियां भी नीतिवान और गुणवान हैं।'

गुरुदेव के निर्देशानुसार साध्वी दीपांजी को नाथद्वारा पहुंचाया गया। नाथद्वारा आते ही उनके हाथों में एक्जिमा हो गई। शारीरिक-दृष्टि से वे पहले से ही अक्षम थी। साध्वियों ने उनकी अच्छी सेवा की। दवा, पानी, आहार, वस्त्र-प्रक्षालन, प्रतिक्रमण, प्रतिलेखन, सिलाई, रंगाई, उत्सर्ग आदि हर कार्य को साध्वियों ने बड़ी सजगता से किया। साध्वी दीपांजी का वहां आठ महिने तक प्रवास रहा फिर आचार्यवर ने उन्हें साध्वी संतोकांजी के साथ थामला भेज

दिया। वहां जाने के कुछ ही महिनों के बाद साध्वी दीपांजी ने अनशनपूर्वक समाधिमरण प्राप्त कर लिया। जीवन के अंतिम समय में भी उन्होंने नाथद्वारा प्रवास का उल्लेख करते हुए कहाह्न'साध्वी आनन्दकुमारीजी की साध्वियों ने मेरी जो सेवा की, उसे मैं कभी भुला नहीं सकती। मैंने वहां सदैव चित्तसमाधि का अनुभव किया।'

पत्रों में बोलता हृदय

पक्षाघात से आक्रान्त होने पर आपका बांया हाथ-पांव एक दम निष्क्रिय हो चुका था। ऐसी स्थिति में भी आपकी प्रबल इच्छा थी कि मैं चाहे स्वयं श्रीचरणों में नहीं पहुंच पाऊं किन्तु येन केन प्रकारेण एक बार मेरी भावना आचार्यप्रवर एवं महाश्रमणी के चरणों में पहुंच जाए। इसी भावना से प्रेरित हो एक दिन आपने धूजते हुए हाथों, डगमगाती कलम से टेढ़े मेढ़े अक्षरों में दो पत्र लिखे। प्रसंगतः पत्र की कुछ पंक्तियां यहां प्रस्तुत हैंह्न

अर्हम्

परम पवित्रा! सच्चरित्रा! महाश्रमणी! सतीशेखरा! नारी रत्न! वात्सल्यप्रदात्री! साध्वीप्रमुखाश्री कनकप्रभाजी! आपका तनुरत्न नीरोग रहे। गरमी की मौसम है। आपकी यात्रा बहुत लम्बी है। पूरा-पूरा ध्यान तनुरत्न का रखावें। मेरी कोई पिछले जनम की पुनवानी थी जिससे मेरे को तेरापंथ धर्मसंघ भैक्षव शासन मिला। आचार्यप्रवर, युवाचार्यवर जैसे संघ रक्षक मिले। मेरी शारीरिक स्थिति जैसे संसार में बालक की मां बालक की सेवा करें वैसे है। आपके प्रताप से आपकी सद् शिक्षा से सत्यां म्हारी खूब सेवा करै है। ओ संघ को, सत्यां को उपकार मैं अठै तो कांई, जनम जनम भूलूंगी नहीं। आज अगर मैं कोई दूसरी जगह होती तो न जाणै म्हारी कांई स्थिति बणती, भगवान ही जाणै।

नाथद्वारा (मेवाड़) आपकी चरणरज

साध्वी आनन्द (मोमासर)

भंते! भगवन! क्षमाश्रमण! जीवन नैया के कर्णधार। आर्यप्रवर! संयम धन के रक्षक! परमयशस्वी महातेजस्वी युवाचार्यप्रवर के चरणों में आपकी चरण चंचरीक चरणरज साध्वी आनन्द की कोटि-कोटि वन्दना। म्हारी शारीरिक स्थिति लिखने जैसी नहीं है। गुरुदेव रै दरसणां री प्रबल भावना है। आपरै परताप स्यूं म्हारी अच्छी सेवा हो रही है। म्हारै मन मैं पूरी चित्त समाधि है।

नाथद्वारा (मेवाड़) आपकी कृपाभिलाषी

साध्वी आनन्द (मोमासर)

पत्र लिखते समय आपकी स्थिति इतनी परवश थी कि आप अपने आप न बैठ सकती थी, न आहार कर सकती थी, न अन्य आवश्यक क्रियाएं भी कर सकती थी फिर भी आपने साहस करके पत्र लिखा। इन पत्रों में उनके शब्द नहीं बल्कि हृदय बोल रहा था। ये पत्र जब साध्वियों ने महाश्रमणी जी को निवेदित किए तब महाश्रमणीजी ने फरमायाह्नसाध्वी आनन्दकुमारीजी ने इस अवस्था में भी संघ एवं संघपति के प्रति किस प्रकार आभार ज्ञापित किया है, यह सीखने जैसी बात है।'

आत्मालोचना की सजगता

मुमुक्षु की पहली पहचान है पापभीरुता। जो पापभीरु नहीं होता वह मुमुक्षु नहीं होता। साध्वी आनन्दकुमारीजी पापभीरु और वैराग्यवान साध्वी थी। वे अपनी साधना और संयम की आराधना के प्रति पूर्ण जागरूक थी। संयम जीवन के स्वीकरण के बाद भी छद्मस्थतावश जान या अनजान में दोष लगने की संभावना बनी रहती है। संयमी साधक उन दोषों का गुरु से प्रायश्चित्त लेकर शुद्ध बन जाता है। साध्वी आनन्दकुमारीजी इस दृष्टि से बहुत सजग थी।

गुरुदेव उदयपुर मर्यादा-महोत्सव के पश्चात् महावीर जयन्ती मनाने हेतु राजनगर पधारे। निश्चित तिथि पर आचार्यवर का राजनगर पदार्पण हुआ। राजनगर से नाथद्वारा के बीच लगभग १७ कि.मी. की दूरी है। साध्वी आनन्दकुमारीजी ने सोचाह्नअभी साध्वियों को भेजने का उपयुक्त समय है। अवसर का लाभ उठाने में विलम्ब क्यों हो? आपने तुरन्त साध्वी वसुमतीजी एवं साध्वी उज्ज्वलरेखाजी को पास में बुलाकर कहाह्नक्या तुम एक दिन में राजनगर पहुंच सकती हो। साध्वियों ने कहाह्नगुरुदेव की कृपा से अवश्य पहुंच जाएंगी। यह सुन आपने प्रसन्न स्वरों में कहाह्नअगर तुम दोनों एक दिन में राजनगर पहुंच जाओ तो पीछे मैं तीन दिन दो साध्वियों से ही काम चला लूंगी। साध्वी बिदामांजी एवं साध्वी भीखांजी ने भी बड़ी हिम्मत के साथ कहाह्नकुछ भी हो, हम जैसे-तैसे पीछे का काम संभाल लेंगी। तुम दोनों निश्चिन्त होकर गुरु-दर्शन हेतु जाओ। साध्वियां तो तैयार ही थी फिर सहयोगी साध्वियों के इन शब्दों से उनका उत्साह द्विगुणित हो गया।

दोनों साध्वियों ने प्रस्थान से पूर्व जब साध्वी आनन्दकुमारीजी से मंगल आशीर्वाद मांगा तब आपने फरमायाह्नसुखसाता से जाना। पीछे की कोई चिन्ता मत करना। आचार्यश्री, युवाचार्यश्री एवं महाश्रमणीजी की खूब-खूब सेवा करना। तुम्हारे तो गुरुदेव के आज ही दर्शन हो जाएंगे। पता नहीं मेरे दर्शन कब

होंगे? गुरुदेव एवं महाश्रमणीजी को मेरे ये दोनों पत्र निवेदित कर देना। साथ ही आपात काल में वैकल्पिक चिकित्सा विधि (डॉक्टर आदि का स्पर्श) विशेष औषधोपचार सेवन का काम पड़ा है उसका भी गुरुदेव को निवेदन कर प्रायश्चित्त लाना है। अच्छा है अभी तुम्हारे गुरुदेव के दर्शन हो जाएंगे और मैं भी आत्मालोचना करके हल्की हो जाऊंगी। तुम दोनों मेरी तरफ से सारी स्थिति निवेदित कर देना।' साध्वी वसुमतीजी एवं साध्वी उज्ज्वलरेखाजी ने तहत कहकर वन्दना की और मंगलपाठ सुना। सतरह कि. मी. लम्बा विहार कर उसी दिन राजनगर में गुरुदेव के दर्शन कर लिए। राजनगर पहुंचते-पहुंचते लगभग बारह बज गए थे। गुरुदेव ने फरमायाह्नआनन्दकुमारीजी ने इस स्थिति में सतियों को भेजकर बड़ी हिम्मत की है। साध्वियों ने महाश्रमणीजी को पत्र एवं प्रायश्चित्त के बारे में निवेदन किया तब महाश्रमणीजी ने उचित अवसर देख गुरुदेव को निवेदन कर प्रायश्चित्त आदि लिखकर दिए। साध्वियों की एक दिन में अच्छी सेवा हुई। गुरुदेव ने साध्वीश्री एवं सहयोगी सतियों के प्रति बहुत अच्छे शब्द फरमाए। दूसरे दिन साध्वियां सीधा विहार कर पुनः नाथद्वारा पहुंची। साध्वियों से गुरुकुलवास के समाचार सुनकर उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई। सर्वाधिक प्रसन्नता इस बात की थी कि गुरुदेव के चरणों में मेरी भावना पहुंच गई एवं प्रायश्चित्त लेकर मैं हल्की हो गई।

ह्नः १९ :ह्न
जीवन यात्रा का अंतिम पड़ाव

वि. सं. २०४५ पोष कृष्णा एकम का दिन आपकी सचेतनावस्था का अंतिम दिन होगाह्नऐसी किसी को कल्पना तक नहीं थी। उस दिन न जाने क्यों आपको अतिरिक्त आनन्द की अनुभूति हो रही थी। अपनी अनुभूतियों को स्वर देते हुए आपने उसी दिन मध्याह्न में स्वर्गीया मातुश्री साध्वीश्री सुजाणांजी के जीवन-प्रसंग पर कई दोहे बनाए। सायंकाल आपने अल्पमात्रा में आहार भी लिया। चौविहार त्याग से पूर्व साध्वी उज्ज्वलरेखाजी हाथ में पानी का प्याला थमाए आपके पास खड़ी थी। उस समय साध्वीश्री ने मुखवस्त्रिका खोलकर मुंह की बांयीं साइड की ओर अंगुली करके बतायाह्नदेखो कितनी सूजन आ गई है? साध्वी उज्ज्वलरेखाजी ने बहुत बारीकी से देखा पर कहीं सोजिश दृष्टिगत नहीं हुई। उन्होंने कहाह्न'महाराज! यहां तो बिल्कुल भी सूजन नहीं है।' साध्वीश्री ने कहाह्न'मुझे सोजन महसूस हो रही है। खैर, तुम्हें नहीं लग रहा है तो कोई बात नहीं।' यो कह आपने मुश्किल से एक दो घूंट पानी पीकर त्याग किए और कहाह्नमुझे तो पंचमी समिति का काम करना है।' साध्वी बिदामांजी एवं साध्वी उज्ज्वलरेखाजी ने उन्हें सहारा देकर शौच-निवृत्ति का काम करवाया। दस्त लगते ही आपको बेहोशी आ गई। साध्वियों ने जैसे तैसे उठाकर उन्हें बिस्तर पर सुलाया। पूरा दिन अच्छी तरह निकला, अचानक यह कैसे हो गया? कुछ समझ में नहीं आ रहा था। वैसे दिन में आपने एक बार साध्वी उज्ज्वलरेखाजी से कहा था कि मेरे दाहिने अंगूठे के अग्रभाग में कुछ झनझनाहट सी हो रही है। साध्वी उज्ज्वलरेखाजी ने तुरन्त वहां झण्डू बाम लगा दी। समय निकलता गया। किसी ने इस बात को गहराई से नहीं लिया। किन्तु संध्या को जैसे ही यह स्थिति घटित हुई, साध्वियों को यह समझते देर नहीं लगी कि संभवतः अगूठे के अग्रभाग से प्राणधारा का प्रवाह मध्याह्न से ही अवरुद्ध होने लगा था और

शाम होते होते वह बिल्कुल बन्द हो गया। सामान्य सी दीखने वाली घटना एक पल में असामान्य हो गई।

सूचना मिलते ही जिम्मेदार श्रावक तुरन्त डॉक्टर लेकर पहुंचे। लेकिन तब तक सूर्य अस्त हो चुका था। साध्वीश्री की शारीरिक स्थिति देखकर डॉक्टर साहब ने कहाह्नइन्हें तो ब्रेन हेमरेज हो गया है। उस समय साध्वीश्री को लगातार अत्यधिक मात्रा में वमन हो रही थी। डॉक्टर ने कहाह्न'इन्हें मस्तिष्क से वमन हो रही है। इन्जेक्शन के बिना बन्द नहीं होगी।' साध्वियों ने कहाह्न'सूर्यास्त हो चुका है अतः दवा-इंजेक्शन आदि किसी भी चीज का प्रयोग हमारे लिए कल्पनीय नहीं है।' डॉक्टर ने कहाह्न'यदि अभी इन्जेक्शन नहीं लगाया गया तो रात भर इसी तरह उल्टियां होती रहेंगी।' साध्वियों ने दृढ़ता के साथ कहाह्न'चाहे कुछ भी हो हम रात को तो इन्हें एक बूंद पानी भी नहीं पिला सकते फिर इन्जेक्शन तो बहुत दूर की बात है।' डॉक्टर ने स्पष्ट कहाह्न'यदि ऐसा ही करना है तो इनको बचाना असंभव है।' साध्वियों ने फिर उसी मजबूती के साथ कहाह्न'साधु जीए तो लाख का, मरे तो सवा लाख का। यदि इनका आयुष्य इतना ही है तो कोई बचाने वाला नहीं। संकल्प को तोड़कर जीना व्यर्थ है और संकल्प को निभाते हुए मरना श्रेयस्कर। आखिर तो जाना ही है फिर जीवन का इतना व्यामोह क्यों?' साध्वियों के इस स्पष्ट उत्तर के सामने सब मौन थे।

आखिर पूरी रात बेहोशी में लेटे साध्वी आनन्दकुमारीजी को वमन होती रही। इधर उल्टियां चल रही थी, उधर साध्वियां भी पूरी रात जप सुनाती रही और वस्त्र से वमन को पौंछती रही। प्रातः सूर्योदय होते ही डॉक्टर के निर्देशानुसार इन्जेक्शन लगाया गया। इन्जेक्शन से वमन तो बंद हो गई पर बेहोशी नहीं टूटी। उसी बेहोशी अवस्था में आपने पांच दिन निकाले। अपने वैराग्यपूर्ण प्रवचनों से संसार के भव्य प्राणियों की मूर्च्छा को तोड़ने वाली साध्वी आनन्दकुमारीजी आज स्वयं एक ऐसी गहन मूर्च्छा की स्थिति में थी जिसे कोई तोड़ नहीं सका। सारे उपाय, सारे उपचार, सारी चिकित्सा विधियां आयुष्य कर्म के आगे नाकामयाब हो गई। आखिर २९ दिसम्बर १९८८ बृहस्पतिवार तदनुसार पोष कृष्णा छठ के दिन मध्याह्न में ठीक एक बजे ज्योंही आपने पलकें खोली। एक बार तो ऐसा लगा जैसे साध्वीश्री अभी मुंह से कुछ बोलने वाली हैं। आंखों में वही प्रसन्नता, होठों पर वही मुस्कान छलक रही थी। पर दूसरे ही क्षण पलकें खुली की खुली रह गई तो दर्शकों का भ्रम टूट गया और सबके देखते-देखते ६६ वर्ष आठ दिन की आयु में साध्वी आनन्दकुमारीजी ने इस

भौतिक संसार से महाप्रयाण कर दिया। जिस किसी ने यह संवाद सुना, वह सन्न रह गया। एक अजीब सी खामोशी पूरे वातावरण में व्याप गई। ऐसा लग रहा था जैसे दीया तो वहीं पड़ा है पर जाने कहां गई वह ज्योत?

अंतिम संस्कार

विश्व प्रसिद्ध श्री नाथजी के विशाल मंदिर के कारण नाथद्वारा भारत की ऐतिहासिक नगरी है। उसी ऐतिहासिक नगर को साध्वी आनन्दकुमारीजी की समाधि स्थली बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। समाधिमरण के लगभग ३८ मिनट बाद साध्वियों ने बोसिरे बोसिरे कहकर साध्वीश्री के निर्जीव गात्र को श्रावकों को संभला दिया। सैकड़ों लोग पार्थिव देह के अंतिम दर्शन हेतु पहुंच रहे थे। दूसरे दिन लगभग ग्यारह बजे शोभायात्रा निकाली गई। जिसमें नाथद्वारा एवं उसके आसपास के लगभग पचास गांवों के दस हजार लोगों ने भाग लिया। उस दिन नाथद्वारा के प्रायः सभी जैन-जैनेतर बंधुओं ने स्वेच्छापूर्वक अपने व्यावसायिक प्रतिष्ठान बंद रखे। जिस किसी दुकान के समीप से साध्वीश्री की बैकुंठी गुजर रही थी, वे दुकानदार भी मुट्ठियां भर-भर पैसों की उछाल करने लगे। नाथद्वारा के अन्य वर्गीय लोगों के मुख से भी ये शब्द निकल रहे थे कि ऐसी पुण्यवान आत्मा बार-बार आने की नहीं और ऐसी सेवा भी अन्यत्र कहीं होने की नहीं। इनकी सहयोगी सतियों ने गजब कर दिया। मुख-मुख पर तेरापंथ और आचार्यश्री तुलसी की प्रशंसा के बोल फूट रहे थे। हजारों लोगों के उस विशाल जन समूह ने बनास नदी के किनारे 'ॐ जय आनन्द सती' के गगनभेदी जयघोषों के साथ अपनी श्रद्धा समर्पित करते हुए आपको अंतिम विदा दी। नभस्पर्शी चिता की लपटों में जलता हुआ आपका पार्थिव शरीर मानों जन जन को ज्योतिर्मय जीवन जीने की प्रेरणा दे रहा था।

स्मृति अमरत्व की

संयोगवश उसी दिन सूरत यात्रा से लौटती हुई साध्वी यशोधराजी का पदार्पण हुआ। वे छापर मर्यादा महोत्सव पर आचार्यवर के दर्शनार्थ जा रही थी। गुरु कृपा से सहज ही उनको साध्वी आनन्दकुमारीजी के समाधिमरण के क्षण में समुपस्थित रहने का सुयोग मिल गया। दुनियां में कुछ योग ऐसे होते हैं जो मिलाए नहीं मिलते, स्वतः मिलते हैं। दूसरे दिन स्मृति सभा का आयोजन किया गया। साध्वियों एवं नगर के गणमान्य व्यक्तियों ने साध्वीश्री को अपनी भावभीनी श्रद्धांजलि समर्पित की। इस अवसर पर साध्वी यशोधराजी एवं साध्वी उज्ज्वलरेखाजी की भावपूर्ण गीतिकाओं से वातावरण गीतमय हो गया। लगभग

तीन घण्टे तक चले इस हृदयस्पर्शी कार्यक्रम में हजारों लोगों ने अपनी मूक भावांजलि समर्पित की।

समाधि मरणोपरान्त आचार्यश्री तुलसी के उद्‌गार

शासनभक्त साध्वी (विज्ञप्ति संख्या ९२७ में प्रकाशित)

साध्वी आनन्दकुमारीजी (मोमासर) का नाथद्वारा में स्वर्गवास हो गया। वे पिछले कुछ वर्षों से पक्षाघात से पीड़ित थी। परमाराध्य आचार्यप्रवर ने साध्वीश्री के संबंध में अपने विचार प्रकट करते हुए कहाह्न

'साध्वी आनन्दकुमाीजी हमारे धर्मसंघ की अग्रगण्या साध्वी थी। अग्रगण्य बनने से पहले वे साध्वी सजनांजी के साथ रही और अच्छे ढंग से रही फिर स्वयं अग्रगण्या बन गई। अमृत महोत्सव के अवसर पर आमेट में उन्हें गुरुकुलवास का सान्निध्य मिला। पिछले तीन वर्षों से वे पक्षाघात की बीमारी के कारण नाथद्वारा में स्थिरवासी थी। साध्वियों ने उनकी बहुत अच्छी सेवा की। साध्वियों की सेवा भावना की छवि न केवल जैन समाज पर पड़ी, नाथद्वारा के सनातनी लोगों पर भी पड़ी। आनन्दकुमारीजी शासनभक्त थी। समाधि मृत्यु को स्वीकार कर उन्होंने अपने जीवन को धन्य बना लिया। उनके अंतिम संस्कार में हजारों मेवाड़ी भाइयों ने भाग लिया।

वह संघनिष्ठ साध्वी थी

साध्वी आनन्दकुमारीजी के देवलोक होने के पश्चात् जब आपकी सहवर्ती साध्वियों ने नाथद्वारा से प्रस्थान कर लाडनूं में पूज्य गुरुदेव के दर्शन किए उस समय आचार्यवर ने साध्वीश्री का नामोल्लेख करते हुए फरमायाह्न 'आनन्दकुमारीजी संघनिष्ठ साध्वी थी। उम्र ज्यादा नहीं आई। बीमारी ने उनको शीघ्र ही संयम मार्ग से उठा लिया। आनन्दकुमारीजी एक अच्छी साध्वी थी। साध्वियों ने उनकी अच्छी सेवा की। गांव की संभाल भी बहुत अच्छी रखी। जैन जैनेतर लोगों पर सेवा की अच्छी छाप पड़ी है।'

गुरु के इन अनुग्रह पूर्ण शब्दों में साध्वी आनन्दकुमारीजी के व्यक्तित्व की विशिष्टता का प्रतिबिम्ब है।